श्री गुरु रामदास जी विशेषांक

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

फाल्गुन-चेत्र, संवत् नानकशाही ५४२-४३
मार्च 2011 वर्ष ४ अंक ७

संपादक — सिमरजीत सिंह, *एम. ए., एम. एस. सी.*

सहायक संपादक — सुरिंदर सिंह निमाणा, *एम. ए. (हिंदी, पंजाबी, अंग्रेजी), बी. एड.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन: 0183-2553956-60, फैक्स: 0183-2553919

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

हमरै मनि चिति हरि आस नित किउ देखा हरि दरसु तुमारा ॥
जिनि प्रीति लाई सो जाणता हमरै मनि चिति हरि बहुतु पिआरा ॥
हउ कुरबानी गुर आपणे जिन विछुड़िआ मेलिआ मेरा सिरजनहारा ॥१॥
मेरे राम हम पापी सरणि परे हरि दुआरि ॥
मतु निरगुण हम मेलै कबहूं अपुनी किरपा धारि ॥१॥रहाउ॥
हमरे अवगुण बहुतु बहुतु है बहु बार बार हरि गणत न आवै ॥
तूं गुणवंता हरि हरि दइआलु हरि आपे बखसि लैहि हरि भावै ॥
हम अपराधी राखे गुर संगती उपदेसु दीओ हरि नामु छडावै ॥२॥
हमरे गुण किआ कहा मेरे सतिगुरा जब गुरु बोलह तब बिसमु होइ जाइ ॥
हम जैसे अपराधी अवरु कोई राखै जैसे हम सतिगुरि राखि लीए छडाइ ॥
तूं गुरु पिता तूंहै गुरु माता तूं गुरु बंधपु मेरा सखा सखाइ ॥३॥
जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥
धंनु धंनु गुरू नानक जन केरा जितु मिलिऐ चूके सभि सोग संतापे ॥४॥ *(पन्ना १६७)*

चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी राग गउड़ी बैरागणि में अंकित इस पावन शबद में स्वयं को सेवक/जिज्ञासु के रूप में परामत्मा को संबोधित करते हुए कथन करते हैं कि हे मालिक! मेरे मन-अंतर में सदा ही आपके दीदार की अभिलाषा है। मैं इस मनोस्थिति में हूं कि यह किस प्रकार संभव हो सके। आपने स्वयं ही प्यार जगा दिया है। आप जानते हो कि आप मुझे कितने प्रिय हो। मैं अपने गुरु पर बलिहार जाता हूं जिसने मुझसे मेरा विछुड़ा हुआ मालिक सृजनहार मिला दिया है। गुरु जी पूर्ण समर्पण-भाव में साधारण मनुष्य-मात्र की दीन-दशा बताने हेतु नम्रता-भाव में पुन: परमात्मा को संबोधित करते हुए कहते हैं कि हे मालिक! हम मनुष्य-मात्र न जाने कितने पापों को कमाने वाले हैं लेकिन अब हम तेरे द्वार पर आये हैं। हम आपकी शरण में हैं इसलिए कि शायद हम पापों से भरे हुओं पर भी कभी अपनी कृपा की दृष्टि कर दें। गुरु जी आगे कथन करते हैं कि हम मनुष्य-मात्र अत्यधिक अवगुणों वाले हैं। हमारे अवगुण इतने हैं कि इनकी गणना नहीं हो सकती। हे मालिक! तुम दया करने वाले हो! तुमको मंजूर हो तो तुम ये सब अवगुण क्षमा कर सकते हो। हम जीव अपराध करते हैं, परंतु आप हमको सच्चे गुरु की संगत में लाकर निर्मल उपदेश बख्श देते हैं। अपना निर्मल नाम देकर हमें आगे के लिए पापों-अपराधों से छुड़ा लेते हो। अंत में आप जी सच्चे सतिगुरु (प्रभु) को संबोधित करते हैं कि हे मेरे सच्चे गुरु! जब हम 'गुरु' बोलते हैं तो आश्चर्यजनक आत्मिक स्थिति प्राप्त हो जाती है, आनंद छा जाता है। जैसे आपने हम जैसे अपराध करने वालों को इनसे छुड़ा लिया है क्या कोई आपके अतिरिक्त छुड़ा सकता था? कदापि नहीं। यह क्षमता मात्र आपके पास ही है। आप गुरु हो, आप पिता हो, माता हो, आप ही हमारे भाई और मित्र हो। हमारी जो स्थिति थी यह आप जानते ही हो। हम तो इस संसार में अत्यंत दीन-दशा में रुल रहे थे। कोई हमारी व्यथा पूछता तक न था। हे सच्चे गुरु जी! आपने हम जैसे कीटों को स्थापित कर दिया है। हमारा सतिगुरु, अध्यात्म मार्ग का पथ-प्रदर्शक धन्य है जिसके मिल जाने पर सभी शोक और दुख उठकर चले गए हैं।

संपादकीय

श्री गुरु रामदास जी विशेषांक : विषय-वस्तु, उद्देश्य व सीमाएं

नवंबर २०१० से सिक्ख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक देव जी महाराज के जीवन, व्यक्तित्व तथा उनकी पावन बाणी पर आधारित दो विशेषांक प्रकाशित कर, दस सिक्ख गुरु साहिबान के जीवन, व्यक्तित्व और उनके द्वारा उच्चारण पावन बाणी पर विशेषांकों की शृंखला को आगे चलाया जा रहा है। इसी शृंखला में चलते हुए 'गुरमति ज्ञान' के प्रिय पाठकों की सेवा में यह पांचवां विशेषांक चौथे गुरु श्री गुरु रामदास जी के जीवन, व्यक्तित्व और पावन बाणी पर प्रस्तुत किया जा रहा है।

दस गुरु साहिबान का जीवन एवं व्यक्तित्व अपने आप में एक बहुत व्यापक विषय है जो कि विशाल तथा गहरे अध्ययन की मांग करता है। यदि यह कह लिया जाए कि वस्तुत: पंजाबी गद्य का आरंभ ही दस गुरु साहिबान के जीवन एवं व्यक्तित्व को विषय-वस्तु के रूप में लेते हुए हुआ तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं। साहित्य की दूसरी श्रेणी पद्य का भी अधिकांश भाग दस गुरु साहिबान के जीवन तथा व्यक्तित्व का गुणगायन करता हुआ अपने रूपाकार को प्राप्त करता है। प्रत्येक काल में गुरु साहिबान संबंधी हुए कार्य अथवा उन पर रची गई ऐतिहासिक और उपमामयी कृतियों का अपना महत्व है लेकिन तुलनात्मक रूप में उन्नीसवीं सदी तक की कृतियों का कुछ अधिक महत्व मानने से इंकार करना उचित न होगा। इसी उपलक्ष्य में चौथे गुरु श्री गुरु रामदास जी महाराज के जीवन और व्यक्तित्व संबंधी हमारा प्रयास इस समय तक रची गई कृतियों और उनकी विषय-सामग्री को प्रकाश में लाने की दिशा में चल रहा है। फिर भी कुछ एक प्रमाणिक तथा बहुत अच्छी कृतियों को ही प्रकाश में लाने हेतु हम यत्नशील रहे हैं।

चौथे गुरु श्री गुरु रामदास जी का सारा जीवन अपने आप में एक बेहद विस्मादी वृत्तांत है। यहां तक कि उनका बालपन का समय भी अपने आप में एक बहुत ही आश्चर्य भरी गाथा है। एक यतीम बालक कैसे अडोल, अडिग रहकर साहस एवं धैर्य, परोपकार, सेवा, सिमरन की सीढ़ियां चढ़ता हुआ गुरु-कृपा तथा स्नेह का पात्र बना, गुरु-घर से कैसे उसका संबंध जुड़ा और परिपक्व हुआ, कैसे वह श्री गुरु अमरदास जी की कृपा-दृष्टि का विशेष पात्र बना और कैसे सांसारिक दृष्टि को पूर्णत: ताक पर रखते हुए श्री गुरु रामदास जी ने गुरु-घर की सेवा पूर्ण समर्पण-भाव के साथ की। यह वृत्तांत देते हुए हमारे हर लेखक-लेखिका का स्वयं भावना के प्रवाह में बहना स्वाभाविक था, फिर भी उन्होंने ऐतिहासिक जानकारी सही-सही देने और सौंपे गए ऐतिहासिक स्रोत का अधिक से अधिक यथार्थ अध्ययन तथा विश्लेषण प्रस्तुत करने का हरेक संभव प्रयास किया है।

श्री गुरु रामदास जी संबंधी इस विशेषांक में गुरु जी के जीवन संबंधी कुछ स्रोतों में विभिन्न प्रकार की जानकारी पाठकों को पढ़ने को मिलेगी। इस संबंध में अपने प्रिय पाठकों के प्रति हमारा सनम्र सुझाव है कि एक ही विषय या घटना पर विभिन्न प्रकार की जानकारी पढ़कर वे स्वयं को भ्रांति का शिकार न होने दें बल्कि आत्म-विश्लेषण की सहायता से सही निर्णय पर पहुंचने के लिए यत्नशील हों। गहरा आत्म-विश्लेषण एक दिन अवश्य हमको सत्य अथवा वास्तविकता

के समीप ले आता है। वास्तव में हरेक लेखक की अपनी क्षमता और इसके साथ ही उसकी सीमा भी हुआ करती है। उसकी जानकारी के अलग-अलग स्रोत होते हैं जिनमें कुछ स्रोत बहुत निर्भर करने योग्य तो कुछ कम निर्भर करने योग्य होते हैं। कुछ लेखक सुनी-सुनाई बातों के आधार पर गुरु-उपमा करते हैं और अपने निज-अनुभव तथा कल्पना-शक्ति का भी कुछ अधिक ही प्रयोग कर जाते हैं, भले ही उनका आंतरिक आशय गुरु जी की अधिक से अधिक उपमा करना ही होता है। कुछ इस प्रकार के ही कारणों के होते हुए इस विशेषांक में जहां अध्ययन अधीन लिये गए अधिकांश स्रोतों में गुरु जी के बाल्यकाल में उनके माता-पिता के परलोक गमन कर जाने का विवरण आता है और गुरु जी को उनके बहन-भाई सहित उनके ननिहाल गांव बासरके अपनी नानी के पास आने का विवरण भी शामिल है, वहीं भाई संतोख सिंघ तथा मैकालिफ जैसे कुछेक इतिहासकार गुरु जी के माता-पिता के उनके विवाह तक जीवित रहने का वर्णन करते हैं। ये इतिहासकार यहां तक लिखते हैं कि गुरु जी के माता-पिता को उनकी शादी के समय लाहौर से गोइंदवाल बुलाया गया। अधिकतर इतिहासकार इस बात को स्पष्ट रूप में नहीं कर सके कि गुरु जी की श्री गुरु अमरदास जी की बेटी बीबी भानी जी के साथ शादी गुरगद्दी पर विराजमान होने से पहले हो गई थी। यहां तक कि गुरगद्दी पर विराजमान होने से पूर्व श्री गुरु रामदास जी और माता भानी जी के गृह में तीनों पुत्रों--प्रिथी चंद, महादेव और श्री गुरु अरजन देव जी का जन्म भी हो चुका था। ऐतिहासिक तिथियों द्वारा अनुमान लगाएं तो यह बात स्वत: स्पष्ट हो जाती है। ऐसे ही 'लावां' नाम से विख्यात पावन बाणी के रचना-काल के प्रसंग में भी पूर्ण स्पष्टीकरण नहीं मिलता। श्री अमृतसर के बारे में विद्वान/इतिहासकार अलग-अलग मत रखते हैं। कुछेक का कहना है कि श्री अमृतसर नगर बसाने का निर्णय और जगह की निशानदेही गुरु नानक पातशाह ने ही कर दी थी। श्री गुरु अमरदास जी ने उनके इस वचन को पूरा करने हेतु श्री गुरु रामदास जी को कहा, जबकि कुछ इतिहासकारों का मानना है कि श्री अमृतसर नगर बसाने का निर्णय या विचार श्री गुरु अमरदास जी का ही था। इसके अलावा श्री गुरु रामदास जी का गुरु-घर के साथ नाता श्री गुरु अमरदास जी के माध्यम (गांव बासरके) से जुड़ा या कुछ स्रोतों के आधार पर गुरु जी खडूर साहिब जाकर (श्री गुरु अंगद देव जी के समय) गुरु-घर की शरण में आ गए थे। ऐसी ही कुछ अन्य थोड़ी-बहुत विभिन्नताएं इस विशेषांक द्वारा प्रस्तुत अध्ययन में आपके सामने आ सकती हैं। आप प्रस्तुत समूचे अध्ययन का तुलनात्मक अध्ययन करके इस संबंध में अपना निर्णय निश्चित कर सकते हैं और यदि किसी अंतिम निर्णय पर नहीं पहुंच पाते तो आपके लिए भविष्य के अध्ययन की गुंजाइश रहेगी जो अपने आप में अच्छी खोज की दिशा में आपको ले जा सकती है। वस्तुत: किसी न किसी मुद्दे या विषय को लेकर खोज में लगे रहना हमारी गतिशीलता का कारण हो सकता है। गतिशीलता ही जीवन है। गतिशीलता ही जीवन में नवीनता तथा ताजगी लाती है। यह अंतिम रूप में हम सबके लिए हितकारी ही होती है।

श्री गुरु रामदास जी द्वारा उच्चारण की गई पावन बाणी का कुछ आंशिक भाग ही हम इस विशेषांक में प्रस्तुत कर सके हैं। इस खजाने की सटीक जानकारी दो लघु-आकारी आलेखों में अवश्य प्रस्तुत कर दी गई है। आशा करते हैं कि हमारे प्रिय पाठक इस विशेषांक से काफी लाभ उठायेंगे और अपने प्रतिकर्म और अमूल्य सुझाव हमारे ध्यान में लायेंगे।

भट्ट कवियों की बाणी में श्री गुरु रामदास जी की उपमा

*-डॉ सत्येंद्रपाल सिंघ**

वह धन्य-धन्य है, परम धन्य है और उतना ही परम विस्मय प्रदान करने वाला, विलक्षण उसका आभा-मंडल है। उसके महान आभा-मंडल में सृष्टि की सारी विलक्षणताएं समाहित हो गई हैं। वही हर्ष दे रहा है, वही चिंता कर रहा है, वही 'प्रकाश और ऊर्जा' का स्रोत है, वही मनुष्य के जीवन का आधार बन कर कण-कण में प्रकट हो रहा है। ऐसे श्री गुरु रामदास जी की महिमा का अवलोकन करके ही भट्ट कवि भाई गयंद जी बरबस कह उठे :

वाहु वाहु का बडा तमासा ॥
आपे हसै आपि ही चितवै आपे चंदु सूरु परगासा ॥ (पन्ना १४०३)

श्री गुरु रामदास जी ने अपनी विनयशीलता, अडोल-सहज अवस्था, सेवा-समर्पण की भावना, सृजनशीलता, विशाल-उदार हृदय और श्रेष्ठतम आत्मिक सोच के मेल से गुरु नानक साहिब द्वारा आरंभ किये गये मिशन को सुदृढ़ता और आस्था की नई चमक प्रदान की जिसे हर कोई देखता रह गया और श्री गुरु रामदास जी की शरण में जाने को उतावला हो उठा। जहां गुरु नानक साहिब ने परमात्मा को पहचान कर प्रेमपूर्वक परमात्मा की उपासना की, श्री गुरु अंगद देव जी और श्री गुरु अमरदास जी ने उसी प्रेमपूर्ण उपासना की वर्षा करके पूरे संसार को उपकृत किया। वहीं श्री गुरु रामदास जी समस्त सृष्टि का कल्याण करने के लिये उस महान परंपरा के अगले संवाहक बने और इतने योग्य संवाहक सिद्ध हुए कि जन-जन को अब तक भ्रम में रहने का आभास हो गया एवं सच दिखने लगा। भट्ट कीरत जी ने इस तरह तत्कालीन दशा को स्पष्ट किया :

हम अवगुणि भरे एकु गुणु नाही अंम्रितु छाडि बिखै बिखु खाई ॥
माया मोह भरम पै भूले सुत दारा सिउ प्रीति लगाई ॥
इकु उतम पंथु सुनिओ गुर संगति तिह मिलंत जम त्रास मिटाई ॥
इक अरदासि भाट कीरति की गुर रामदास राखहु सरणाई ॥ (पन्ना १४०६)

श्री गुरु रामदास जी की महिमा इतनी अपार और अभिभूत कर देने वाली थी कि स्वयं के सारे अवगुण, सारी छुद्रताएं और दोष स्वयं ही दिखने लगे। प्रकाश जब फैलता है तो सभी कुछ साफ-साफ दिखने लगता है। जब रूहानियत का सूरज उगता है तो सत् और असत् के बीच फर्क करना आ जाता है। श्री गुरु रामदास जी के रूप में रूहानियत का जो सूरज इंसानियत के पटल पर उठा उसके प्रभाव में हृदय के सारे संताप ही नहीं समाप्त हुए, थोथी लालसाएं भी नष्ट हो गईं और सारा सुख, बस, उनके चरणों में और उनकी कृपा में ही दिखने लगा। ऐसा हुआ भी। गुरु साहिब ने 'गुरु का चक्क' नाम से जो नगर बसाया उसकी प्रगति और संपन्नता के लिये दूर-दूर से बावन तरह के भिन्न-भिन्न

*ई-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो: ९४१५९-६०५३३

व्यवसाय करने वालों को बुलाया, जिनमें सिक्ख,-हिंदू-मुसलमान बढ़ई, लोहार, मोची, सुनार, जुलाहे आदि थे। इन्हें एक बाजार में बसाया गया जिसे 'गुरु बाजार' के नाम से जाना गया। यह आज भी एक बड़ा व्यापारिक केंद्र है। श्री गुरु रामदास जी की शरण में आकर भौतिक-आध्यात्मिक वे सभी सुख प्राप्त हो गये जिनकी कामना मनुष्य अपने जीवन में करता है। गुरु की कृपा तो सदा-सर्वदा बरसती है। भाग्यशाली मनुष्य इस कृपा को भरपूर प्राप्त करता है।

हीरा रतन जवेहर माणक बहु सागर भरपूरु कीआ ॥
जिसु वड भागु होवै वड मसतकि तिनि गुरमति कढि कढि लीआ ॥२॥
रतनु जवेहरु लालु हरि नामा गुरि काढि तली दिखलाइआ ॥
भागहीण मनमुखि नही लीआ त्रिण ओलै लाखु छपाइआ ॥३॥ (पन्ना ८८०)

उपरोक्त वचन श्री गुरु रामदास जी के हैं। गुरु साहिब कहते हैं कि गुरु का विचार गुणों से भरपूर है जिसे भाग्यवान प्राप्त कर लेता है। उस भाग्यवान को तो गुरु स्वयं ही गुण का खजाना निकाल कर हाथों में सौंप देता है अर्थात् कृपा से भरपूर कर देता है। भाग्यहीन को तो ढूंढे भी वह छिपा हुआ गुणों का भंडार दिखाई नहीं देता है। श्री गुरु रामदास जी तो गुणों के ऐसे भरपूर सागर की तरह थे जिसमें कभी कोई कमी आती ही नहीं थी। भट्ट कल सहार जी ने कहा कि वे सदैव भरपूर सरोवर की तरह थे जो कि सदैव प्रवाहमान और अक्षय है। वे सभी के जीवन की रिक्तता को दूर करने वाले थे।

छुटत परवाह अमिअ अमरा पद अंम्रित सरोवर सद भरिआ ॥
ते पीवहि संत करहि मनि मजनु पुब जिनहु सेवा करीआ ॥ (पन्ना १३९६)

भट्ट कल सहार जी के अनुसार श्री गुरु रामदास जी की कृपा परमात्मा से जोड़ने वाली है और उस कृपा से जिनके मन पवित्र हो रहे हैं उन्होंने पता नहीं पूर्व जन्म में कैसे पुण्य किये होंगे। इस तरह श्री गुरु रामदास जी की शरण में जाना, उनकी कृपा प्राप्त करना पुण्य कर्मों का फल है। मनुष्य जीवन-भर भटकता रहता है। उसके चित्त को शांति और स्थिरता नहीं प्राप्त होती, भटकाव-भ्रम बने रहते हैं, कभी भी पूर्णता का अहसास नहीं होता। ये भटकाव श्री गुरु रामदास जी की शरण में आकर ही समाप्त होते हैं क्योंकि वे सद् प्रवाहित ही नहीं, पूर्णता भी प्रदान करने वाले हैं। मन का कोई कोना ऐसा नहीं बचता जो प्रकाशित न हो जाता हो।

मेटिआ जनमांतु मरण भउ भागा चितु लागा संतोख सरे ॥
कवि कल्य ठकुर हरदास तने गुर रामदास सर अभर भरे ॥ (पन्ना १३९७)

अभर अर्थात् रिक्त-अपूर्ण को बस, परमात्मा ही भर सकता है, पूर्ण कर सकता है। श्री गुरु रामदास जी ने परमात्मा की इस विशेषता का वर्णन निम्न वचन में किया है :

गोबिद की ऐसी कार कमाइ ॥
जो किछु करे सु सति करि मानहु गुरमुखि नामि रहहु लिव लाइ ॥१॥रहाउ॥
गोबिद प्रीति लगी अति मीठी अवर विसरि सभ जाइ ॥
अनदिनु रहसु भइआ मनु मानिआ जोती जोति मिलाइ ॥१॥ (पन्ना ११९९)

परमात्मा की प्रीति ऐसी उत्पन्न होती है कि बाकी किसी भी चीज के लिये जीवन में स्थान नहीं बचता अर्थात् उसकी मीठी प्रीति ही

जीवन को परिपूर्ण बना देती है, कोई भी भ्रम नहीं रहता, मन परमात्मा से मिलकर आनंदमयी हो जाता है। भट्ट कवियों ने श्री गुरु रामदास जी के दर्शनों में इसी आनंद को प्राप्त किया। गुरु साहिब ने परमात्मा की बात की और स्वयं में उन सभी गुणों को प्रकट किया जो परमात्मा के हैं, इसलिये परमात्मा स्वयं गुरु के वचनों में उतर आया। जिसने भी गुरु का प्यार धारण कर उनके वचनों को समझा उसे मोक्ष प्राप्त हो गया :

ते मुकते भए सतिगुर सबदि मनि गुर परचा पाइअउ ॥
गुर रामदास कल्युचरै तै सबद नीसानु बजाइअउ ॥
(पन्ना १३९७-९८)

श्री गुरु रामदास जी को *'सबद नीसानु'* बजाने वाले की संज्ञा दी गई। यहां शबद को परमात्मा का व्यक्त रूप माना गया है और उस व्यक्त रूप को सर्वोत्तम स्थिति में प्रकट करने का अर्थ परमात्मा के प्रत्यक्ष दर्शन और परमात्मा से मिलकर एकरूप हो जाने से लिया गया है। श्री गुरु रामदास जी में परमात्मा दिखता था अथवा वे परमात्मा का रूप हो गये थे। वे विधि के विधान से ही परम-पद को प्राप्त हुए और उनके इस स्वरूप से पूरा संसार सुशोभित हो गया, जैसा कि भट्ट कल सहार जी ने निम्न सवैये में लिखा :

सतिगुरु प्रमाणु बिध नै सिरिउ जगि जस तूरु बजाइअउ ॥
गुर रामदास कल्युचरै तै अभै अमर पदु पाइअउ ॥ *(पन्ना १३९७)*

भट्ट कल सहार जी ने श्री गुरु रामदास जी की परमात्म-सत्ता का सुंदर वर्णन इस सवैये में करके सारी आशंकाओं का निवारण कर दिया और स्पष्ट कर दिया कि गुरु साहिब में उन्हें परमात्मा का स्वरूप क्यों दिखता है।

सेज सधा सहजु छावाणु संतोखु सराइचउ सदा सील संनाहु सोहै ॥
गुर सबदि समाचरिओ नामु टेक संगादि बोहै ॥
आजोनीउ भल्यु अमलु सतिगुर संगि निवासु ॥
गुर रामदास कल्युचरै तुअ सहज सरोवरि बासु ॥
(पन्ना १३९८)

परमात्मा के प्रति आस्था ही जिनके जीवन का आधार है, जो किसी भी भ्रम-दुविधा से मुक्त हैं, सारे उद्वेगों-विकारों से परे एवं निर्लिप्त हैं, जो परमात्मा से मिलन की एकमात्र आशा को मन में संजोए हैं, अन्य कोई भी कामना उनके निकट नहीं आ सकती; जो परमात्मा की आज्ञा में ही आनंदित हैं और परमात्मा में पूरी तरह लीन हैं और इनकी इस श्रेष्ठ अवस्था से सारा संसार लाभान्वित हो रहा है; इस अवस्था में जिनकी आत्मा जन्म-मृत्यु के भय से रहित होकर निर्मल-शुद्ध हो चुकी है, ऐसे श्री गुरु रामदास जी ने उसी तरह निर्लिप्ता-सहजता का साम्राज्य स्थापित कर लिया है, जैसा कि स्वयं परमात्मा का है। सच है कि भाई जेठा जी के रूप में श्री गुरु अमरदास जी के प्रति श्रद्धा का जो बीज मन में अंकुरित हुआ वह समय पाकर जीवन का आधार बन गया। दामाद बनने के बाद भी उन्होंने श्री गुरु अमरदास जी को सतिगुरु के रूप में ही देखा और आजीवन गुरु-घर की सेवा में लगे रहे। गुरु साहिब गृहस्थ जीवन जीते हुए भी आत्मिक परिष्कार की ओर अग्रसर होते हुए उन्नत अवस्था को प्राप्त हुए। उनके स्वभाव की मिठास निरंतर बढ़ती गई। गुरगद्दी पर आसीन होने के बाद जब गुरु नानक साहिब के सपुत्र बाबा श्रीचंद उनसे मिलने आये और जिज्ञासा व्यक्त की कि उन्होंने इतनी दाढ़ी क्यों बढ़ा रखी है, तो श्री (गुरु)

रामदास जी ने विनम्रता से कहा कि आप जैसे महापुरुषों के चरण पोछने के लिये और जब सचमुच ही ऐसा करने लगे तब बाबा श्रीचंद ने कहा कि आप धन्य हो और गुरगद्दी के सही उत्तराधिकारी हो। यह परमात्मा पर उनकी दृढ़ आस्था ही थी जिसने उन्हें एक चने बेचने वाले अनाथ बालक से गुरगद्दी का स्वाभाविक उत्तराधिकारी बना दिया। गुरु की प्रसन्नता के अतिरिक्त कोई अन्य कामना उनके निकट ही नहीं पहुंचती थी। एक बार श्री गुरु अमरदास जी ने बड़ी सपुत्री के पति भाई रामा जी और श्री (गुरु) रामदास जी, दोनों को एक अलग-अलग चबूतरा बनाने को कहा। चबूतरा जब भी बनता श्री गुरु अमरदास जी कोई न कोई खामी निकाल कर, उसे तोड़कर फिर से बनाने को कह देते। भाई रामा जी इससे ऊब गये और नाराज होकर चले गये, जबकि श्री (गुरु) रामदास जी सहर्ष श्री गुरु अमरदास जी की आज्ञा हर बार शिरोधार्य करके पुन: चबूतरा बनाने में लग जाते। उनके मन में प्रज्वलित होने वाली प्रेम की इस ज्योति ने उन्हें प्रेम का पर्याय बना दिया और वे प्रेम का रूप हो गये। ऐसा प्रेम-रूप आत्मा की उन्नति और शुद्धता के फलस्वरूप ही उत्पन्न होता है। श्री गुरु रामदास जी ने भी कहा कि ऐसी प्रीति में ही चित्त को शांति मिलती है :

गोबिद प्रीति लगी अति पिआरी ॥
जब सतसंग भए साधू जन हिरदै मिलिआ सांति मुरारी ॥ (पन्ना ६०७)

श्री गुरु रामदास जी ने कहा कि प्रेम के जरिये ही दुविधा को दूर करके परमात्मा में मन को टिकाया जा सकता है :

प्रेम के सर लागे तन भीतरि ता भ्रमु काटिआ जाई ॥ (पन्ना ६०७)

श्री गुरु रामदास जी अपनी प्रेमपूर्ण विशुद्ध उन्नत आत्मा और साधना के कारण ही ईश्वर का ऐसा रूप बन गये जिनके दर्शन, जिनकी सेवा से आनंद और सुख की प्राप्ति होती थी:

अप्यउ हरि नामु अखै निधि चहु जुगि गुर सेवा करि फलु लहीअं ॥
बंदहि जो चरण सरणि सुखु पावहि परमानंद गुरमुखि कहीअं ॥
परतखि देह पारब्रहमु सुआमी आदि रूपि पोखण भरणं ॥
सतिगुरु गुरु सेवि अलख गति जा की स्री रामदासु तारण तरणं ॥ (पन्ना १४०१)

उपरोक्त सवैये में भाई गयंद जी श्री गुरु रामदास जी के स्वरूप में प्रत्यक्षत: पारब्रह्म के दर्शन करते हैं जो कि उत्तम फल देने वाला है। उन्होंने गुरु साहिब को तारनहार कहा है। भाई गयंद जी ने यह भी कहा कि श्री गुरु रामदास जी ही मुक्ति प्रदान करने वाले हैं और उनके बिना कोई भी तारनहार नहीं :

गुरु जहाजु खेवटु गुरू गुर बिनु तरिआ न कोइ ॥
गुर प्रसादि प्रभु पाईऐ गुर बिनु मुकति न होइ ॥ (पन्ना १४०१)

भट्ट कवि, क्योंकि स्वयं उस काल के साक्षी थे जिसमें सिक्ख गुरु साहिबान ने अपने ज्ञान के प्रकाश से भटके हुए लोगों की राह और मन को प्रकाशित किया, इसी लिये उन्होंने दो टूक कहा कि बस, गुरु ही तारनहार है। भट्ट नल जी ने तो कहा कि श्री गुरु रामदास जी के बिना कुछ भी समझ नहीं आता। उन्होंने कहा कि अपना तन और मन दोनों गुरु साहिब को अर्पित कर देना चाहिए :

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरू बिनु समझ न आवै ॥
गुर बिनु सुरति न सिधि गुरू बिनु मुकति न पावै ॥ (पन्ना १३९९)

भट्ट नल जी ने पूरी तरह भाव-विभोर होकर श्री गुरु रामदास जी की महिमा का वर्णन किया है। उन्होंने कहा कि गुरु की कृपा से मनुष्य को वह प्राप्ति हो जाती है जिसकी उसने आशा भी नहीं की होती। उसकी कृपा कांच को सोना, विष को अमृत, लोहे को लाल, पत्थर को माणिक और काठ को श्रीखंड (मिष्ठान) बना देती है। ऐसी ही उसकी कृपा से पशु-प्रेत आदि दैवीय गुणों वाले मनुष्य बन गये। भट्ट गयंद जी ने कहा कि इसी लिये श्री गुरु रामदास जी सबसे श्रेष्ठ हैं। उन्होंने समय-समय पर अपने भक्तों को उभारा और सारे साधु-सिध-जन उनकी शरण में प्राण पाते हैं :

सिरी गुरू साहिबु सभ ऊपरि ॥
करी क्रिपा सतजुगि जिनि ध्रू परि ॥
स्री प्रहलाद भगत उधरीअं ॥
हस्त कमल माथे पर धरीअं ॥
अलख रूप जीअ लख्या न जाई ॥
साधिक सिध सगल सरणाई ॥ (पन्ना १४०१)

भट्ट गयंद जी ने कहा कि उनके रूप, उनकी महिमा का वर्णन किया ही नहीं जा सकता है :

कुंडलनी सुरझी सतसंगति परमानंद गुरू मुखि मचा ॥
सिरी गुरू साहिबु सभ ऊपरि मन बच क्रंम सेवीऐ सचा ॥ (पन्ना १४०२)

श्री गुरु रामदास जी की महानता इतनी है कि उनकी संगत-मात्र से ही वह कुंडलनी, जिसे खोलने के लिये साधक, योगी वर्षों तक कठोर तप-साधना करते रहते हैं, पल भर में ही सुलझ जाती है, जिससे परम आनंद मिलता है। ऐसे महान गुरु की तो मन, वचन और कर्म हर तरह से सच्ची सेवा करनी चाहिये, क्योंकि वही एक सच्चा है। भट्ट गयंद जी की कही बात आज भी सच साबित हो रही है। श्री गुरु रामदास जी की नगरी श्री अमृतसर आज इसी लिये 'सिफती दा घर' बन गई है क्योंकि यहां मन, वचन, कर्म से गुरु के प्रति आस्था धर कर आने वाले हरेक मनुष्य की मुश्किल गुरु के दर तक पहुंचने, दर्शन करने से ही सुलझ जाती है अर्थात् उसके दुखों का निवारण होकर सुख-आनंद की प्राप्ति होती है। भट्ट मथरा जी के निम्न सवैये में तो मानो श्री गुरु रामदास जी की नगरी हू-ब-हू चित्रित हो उठी है और गुरु साहिब की महानता भी :

नामु निधानु धिआन अंतरगति तेज पुंज तिहु लोग प्रगासे ॥
देखत दरसु भटकि भ्रमु भजत दुख परहरि सुख सहज बिगासे ॥
सेवक सिख सदा अति लुभित अलि समूह जिउ कुसम सुबासे ॥
बिद्यमान गुरि आपि थप्पउ थिरु साचउ तखतु गुरू रामदासै ॥ (पन्ना १४०४)

उक्त सवैये में श्री गुरु रामदास जी और उनके दर को एकरूप देखने से सच्ची शोभा प्रकट होती है। गुरु साहिब की दैहिक उपस्थिति नहीं है किंतु उनका दर है और वहां शबद-गुरु विराजमान हैं जिसका प्रकाश-पुंज आज भी पूरे संसार में फैल रहा है। यहां मस्तक टेकने के लिये सब वैसे ही लालायित हैं जैसे अलि समूह फूल से मकरंद एकत्र करने के लिये मंडरा रहा है। यहां परमात्मा से श्री गुरु रामदास जी की एकरूपता स्थायी होकर टिक गयी है। भट्ट बल जी ने तो यहां तक कहा कि श्री गुरु रामदास जी की महिमा ऐसी है कि उनके सिमरन-मात्र से ही सारी अज्ञानता मिट जाती है और रिद्धियों-सिद्धियों की प्राप्ति हो जाती है:

जिह सतिगुर सिमरंत नयन के तिमर मिटहि

खिनु ॥
जिह सतिगुर सिमरंथि रिदै हरि नामु दिनो दिनु ॥
जिह सतिगुर सिमरंथि जीअ की तपति मिटावै ॥
जिह सतिगुर सिमरंथि रिधि सिधि नव निधि पावै ॥
सोई रामदासु गुरु बल्य भणि मिलि संगति धंनि धंनि करहु ॥
जिह सतिगुर लगि प्रभु पाईऐ सो सतिगुरु सिमरहु नरहु ॥ *(पन्ना १४०५)*

भट्ट बल जी ने कहा कि ऐसे सतिगुरु रामदास जी का तो सभी को मिल कर सदैव गुण-गायन करना चाहिये और आभारी होना चाहिये जो परमात्मा से जोड़ने वाले हैं, सर्व-कल्याण करने वाले हैं, राह की सारी बाधाएं दूर कर सच्ची राह दिखाने वाले हैं। श्री गुरु रामदास जी ने लोगों को परमात्मा से जोड़ा, उन्हें सच्चाई से मेहनत करके अपनी जीविका का उपार्जन करने को प्रेरित किया, जीवन को नियमित और अनुशासित करना सिखाया। गुरु साहिब ने एक सिक्ख की दिनचर्या को विधिवत निरूपित किया :

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै ॥
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ *(पन्ना ३०५-०६)*

गुरु साहिब ने कहा कि गुरु का सिक्ख वही कहा जायेगा जो प्रात: काल तड़के उठकर परमात्मा का सिमरन करता है, स्नान करने के बाद सतसंग करता है और अपने उद्यम में जुट जाता है, दिन-भर उसके मन में परमात्मा की प्रतीति बनी रहती है। ऐसे ही सिक्ख को कृपा करके सतिगुरु उपदेश देते हैं। ऐसा सिक्ख तो और भी सराहनायोग्य है जो स्वयं तो सिमरन करता ही है अन्य लोगों को भी परमात्मा से जोड़ता है। इस तरह श्री गुरु रामदास जी ने जहां मनुष्य के जीवन को नियमित करने का उपदेश दिया वहीं धर्म को वैयक्तिक के साथ ही दूसरों को प्रेरित करने का संदेश देकर सामाजिक आयाम भी प्रदान किया। गुरु साहिब ने अपनी दृष्टि समाज की ओर मोड़ते हुए जहां स्त्रियों के सम्मान की बात की वहीं उन्होंने विवाह जैसे महत्वपूर्ण संस्कार को व्यर्थ के विधि-विधानों, रस्मों से निकाल कर एक सहज, सुरुचिपूर्ण और मर्यादित स्वरूप प्रदान किया जिसे सिक्ख स्वयं भी सम्पन्न कर सकते थे। उन्होंने विवाह के अवसर पर पढ़ने के लिये जिस बाणी की रचना की उसे 'लावां' कहा जाता है और वो श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है। सिक्खों के विवाह इन चार 'लावों' के गायन के साथ ही सम्पन्न हो जाते हैं। पहली 'लाव' में धर्म पर दृढ़ रहने, पाप-दोषों का त्याग करके परमात्मा के नाम में आनंद की अनुभूति का संदेश दिया गया है। दूसरी 'लाव' का उपदेश है कि सतिगुरु भय से रहित करने वाला और अहंकार से दूर करने वाला है। उसकी शक्ति और सत्ता को मनुष्य स्वीकार करे। तीसरी 'लाव' के अनुसार मनुष्य को परमात्मा का आभारी होकर उसका गुणगान करना चाहिये, उसकी प्रीति की कामना करनी चाहिये। चौथी

'लाव' के अनुसार मन स्थिर होकर परमात्मा को पा लेता है, परमात्मा मीठा लगने लगता है। मनुष्य इस प्रकार अपने सांसारिक जीवन और आत्मिक सफलता को भी प्राप्त करता है। श्री गुरु रामदास जी ने सामाजिक जीवन और पारिवारिक जीवन पर भी गहरी दृष्टि डाली :

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप ॥
जिन के जणे बडीरे तुम हउ तिन सिउ झगरत पाप ॥१॥रहाउ॥
जिसु धन का तुम गरबु करत हउ सो धनु किसहि न आप ॥
खिन महि छोडि जाइ बिखिआ रसु तउ लागै पछुताप ॥१॥ (पन्ना १२००)

उपरोक्त वचन में गुरु साहिब द्वारा पुत्र के पिता से झगड़े की निंदा करना और धन पर घमंड करने को निरर्थक बताना जहां जीवन में पूर्ण शुचिता लाने की उत्सुकता को दर्शाता है वहीं इसे धर्म और परमात्मा से जोड़ना, जैसा कि 'लावां' में वर्णित है, एक सम्पूर्ण निदान की ओर संकेत करता है। भट्ट कल सहार जी ने श्री गुरु रामदास जी को परिपक्व, परिष्कृत और सम्पन्न बौद्धिकता का स्वामी कहा:

सतगुर मति गूढ़ बिमल सतसंगति आतमु रंगि चलूलु भया ॥
जाग्या मनु कवलु सहजि परकास्या अभै निरंजनु घरहि लहा ॥ (पन्ना १३९६-९७)

उपरोक्त वर्णन के अनुसार श्री गुरु रामदास जी सर्वोत्कृष्ट बुद्धि वाले हैं जिनकी आत्मा पर परमात्मा का गाढ़ा रंग चढ़ा हुआ है। उनका मन कमल के फूल की तरह खिला हुआ है और सहज ही प्रकाशित हो रहा है। इससे उनकी शरण में आने वाले हर किसी की आत्मा विकारों से मुक्त होकर निर्मल हो जाती है और उसे उसी दर पर स्वयंमेव परमात्मा प्राप्त हो जाता है। भट्ट नल जी ने कहा कि श्री गुरु रामदास जी का मुख देखकर ही सुख प्राप्त होता था:

गुरू मुखु देखि गुरू सुखु पायउ ॥
हुती जु पिआस पिऊस पिवंन की बंछत सिधि कउ बिधि मिलायउ ॥
पूरन भो मन ठउर बसो रस बासन सिउ जु दहं दिसि धायउ ॥
गोबिंद वालु गोबिंद पुरी सम जल्यन तीरि बिपास बनायउ ॥
गयउ दुखु दूरि बरखन को सु गुरु मुखु देखि गुरू सुखु पायउ ॥ (पन्ना १४००)

उपरोक्त सवैये में भट्ट नल जी अपनी ही बात कर रहे हैं न कि श्री गुरु अमरदास जी और श्री गुरु रामदास जी के बीच की, क्योंकि गुरु का आनंद गुरु ही जान सकता है। भट्ट नल जी अपने आनंद की बात जान सकते हैं जो उन्हें श्री गुरु रामदास जी का मुख देखकर प्राप्त हुआ है। जिस अमृत की आशा मनुष्य को थी उसे गुरु साहिब ने विधिवत पूरा किया और मन की भटकन को रोक दिया। गुरु साहिब के यश का यह सूर्य गोइंदवाल से उदित हुआ जिसने वर्षों के दुख दूर कर दिये। श्री गुरु रामदास जी ने वह विधि विस्तार से बताई जिससे मनुष्य मुक्ति प्राप्त करके जीवन को सफल कर सके और सुख का अनुभव कर सके।

गुरु के मुख से वह सूत्र निकला जिसने सुख उत्पन्न किया। गुरु साहिब ने मनुष्य की देह को घोड़ी की संज्ञा दी। गुरु साहिब ने कहा कि जीव का सौभाग्य है कि उसे मनुष्य का शरीर मिला है। इसे घोड़ी की तरह प्रयोग करके भवसागर के पार उतरना है। इस मानव

शरीर रूपी घोड़ी पर परमात्मा के विचार की जीन कसनी है और मुख में गुरु के ज्ञान अर्थात् सत् की लगाम डालनी है और तन पर परमात्मा के प्रेम का चाबुक लगाना है। इस तरह शरीर रूपी घोड़ी पर चढ़ कर भवसागर से पार उतर जाते हैं और परम आनंद मिलता है :

चड़ि देहड़ि घोड़ी बिखमु लघाए मिलु गुरमुखि परमानंदा ॥ (पन्ना ५७५)

श्री गुरु रामदास जी ने बताया कि मन तो हाथी की तरह है जिस पर शबद का अंकुश ही काम करता है :

कड़ीआलु मुखे गुरि अंकसु पाइआ राम ॥
मनु मैगलु गुर सबदि वसि आइआ राम ॥
मनु वसगति आइआ परम पदु पाइआ सा धन कंति पिआरी ॥
अंतरि प्रेमु लगा हरि सेती घरि सोहै हरि प्रभ नारी ॥ (पन्ना ५७६)

श्री गुरु रामदास जी के उपरोक्त वचन को भट्ट नल जी के पन्ना १४०० पर अंकित सवैये के परिप्रेक्ष्य में समझने पर भट्ट नल जी की उपमा का औचित्य समझ में आ जाता है। भट्ट नल जी दसों दिशाओं में दौड़ने वाले मन की बात करते हैं जो गुरु साहिब के दर्शन-मात्र से ही टिक जाता है। श्री गुरु रामदास जी भी कहते हैं कि हाथी की तरह बेपरवाह मन को गुरु का विचार ही वश में कर पाता है।

भट्ट बल जी ने कहा कि मनुष्य श्री गुरु रामदास जी का सिमरन मन, वचन और कर्म से करके अपने जीवन को पारस की तरह अनमोल बना रहे हैं :

मनसा करि सिमरंत तुझै नर कामु क्रोधु मिटअउ जु तिणं ॥
बाचा करि सिमरंत तुसै तिन्ह दुखु दरिद्रु मिटयउ जु खिणं ॥
करम करि तुअ दरस परस पारस सर बल्य भट जसु गाइयउ ॥
स्री गुर रामदास जयो जय जग महि तै हरि परम पदु पाइयउ ॥ (पन्ना १४०५)

भट्ट बल जी ने कहा कि जिसने मन से गुरु का सिमरन किया उनके विकार मिट गये। बाणी में गुरु के विचार को उतारने से दुख-दरिद्र दूर हो गया। कर्म में भी गुरु के उपदेश को उतारने से सारा जीवन सफल हो गया। उन्होंने गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण की बात की। पूर्ण समर्पण वस्तुतः गुरमति का केंद्रीय बिंदु है। स्वयं श्री गुरु रामदास जी ने भी इसकी महत्ता को बताया :

अब हम चली ठाकुर पहि हारि ॥
जब हम सरणि प्रभु की आई राखु प्रभू भावै मारि ॥१॥रहाउ॥
लोकन की चतुराई उपमा ते बैसंतरि जारि ॥
कोई भला कहउ भावै बुरा कहउ हम तनु दीओ है ढारि ॥१॥ (पन्ना ५२७)

श्री गुरु रामदास जी ने जिस दृढ़ता और प्रतिबद्धता का वर्णन उपरोक्त वचन में किया है वह दृढ़ता वास्तव में उनके जीवन में थी। वे गुरु से जुड़े तो गुरु के होकर रह गये। उन्होंने जिन उसूलों को अपनाया उन पर अंत तक टिके रहे और जब स्वयं उनका पुत्र उनके विरुद्ध गया तो उसे भी 'मीणा' कहकर अलग कर दिया। उनकी यह दृढ़ता विकारों, संशयों से दूर रहने की थी। उनकी दृढ़ता अपने सिक्खों का कल्याण करने की थी और भलाई की शक्ति को संगठित करके अविजित बनाये रखने की थी और वैसी ही शिक्षा एवं संस्कार देकर उन्होंने श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी सौंपी थी। भट्ट सल जी ने उनकी दृढ़ता का वर्णन इस तरह किया :

मोहु मलि बिवसि कीअउ कामु गहि केस पछाड्यउ ॥
क्रोधु खंडि परचंडि लोभु अपमान सिउ झाड्यउ ॥
जनमु कालु कर जोड़ि हुकमु जो होइ सु मंनै ॥
भव सागरु बंधिअउ सिख तारे सुप्रसंनै ॥
सिरि आतपतु सचौ तखतु जोग भोग संजुतु बलि ॥
गुर रामदास सचु सल्य भणि तू अटलु राजि अभगु दलि ॥ *(पन्ना १४०६)*

भट्ट सल जी ने कहा कि श्री गुरु रामदास जी ने मोह का मर्दन करके उसे वश में कर लिया है। काम को सिरे से पकड़ कर चित्त कर दिया है। क्रोध को अपने प्रताप से खंड-खंड कर दिया है। लोभ अपमानित होकर दूर जा खड़ा हुआ है। काल ने दासत्व स्वीकार कर लिया है। इससे वे ऐसी अपार शक्तियों के स्वामी हो गये हैं कि सहज ही अपने सिक्खों का कल्याण करके प्रसन्नता प्राप्त कर रहे हैं। उनकी ऐसी सत्ता स्थापित हो चुकी है जो चुनौतियों से परे है और संसार का शुभ करने में समर्थ है। श्री गुरु अरजन देव जी ने भी उन्हें गुरदेव, तीर्थ, अमृत सरोवर और पारब्रह्म के रूप में देखा यद्यपि वे उनके पिता थे:

गुरदेव तीरथु अंम्रित सरोवरु गुर गिआन मजनु अपरंपरा ॥
गुरदेव करता सभि पाप हरता गुरदेव पतित पवित करा ॥ *(पन्ना २५०)*

श्री गुरु रामदास जी का भंडार अतुल, अपार था जिसे वे खुले हाथों खर्च करके संगत को नाम का दान दिया करते थे। वे सभी को सुख और आनंद प्रदान करने वाले थे, सभी की आत्मा को निर्मल शांति देने वाले थे। गुरु नानक साहिब यदि सिक्ख सत्ता के संस्थापक थे तो श्री गुरु रामदास जी को उसका निर्माता कहा जाता है। उन्होंने संतोखसर और अमृतसर जैसे आत्म-बल के केंद्र दिये। भट्ट कवियों ने उन्हें ऐसे ही गूढ़मति का स्वामी नहीं कहा, उन्होंने इसे सिद्ध भी किया जब उन्हें श्री गुरु अमरदास जी ने बादशाह अकबर के पास गुरमति और गुरु-उपदेशों को स्पष्ट करने के लिये लाहौर भेजा था। यह घटना श्री गुरु रामदास जी के गुरगद्दी पर बैठने से पहले की है। श्री गुरु रामदास जी ने अकबर की सारी शंकाओं और शिकायतों का भली प्रकार निवारण कर दिया था।

भट्ट बल जी ने कहा कि हर जगह श्री गुरु रामदास जी की जयकार हो रही है सभी जीव उनको मन में स्मरण कर रहे हैं। उन्होंने महानतम-अध्यात्म पदवी प्राप्त की है।

करण कारण समरथु सदा सोई सरब जीअ मनि ध्याइयउ ॥
स्री गुर रामदास जोय जय जग महि तै हरि परम पदु पाइयउ ॥ *(पन्ना १४०५)*

श्री गुरु रामदास जी वास्तव में भट्ट कवियों द्वारा की गयी जय-जयकार के योग्य थे। श्री गुरु अमरदास जी ने उन्हें गुरगद्दी सौंपते हुए कहा था कि अब आगे गुरगद्दी पर सोढी वंश के लोग ही बैठेंगे। श्री गुरु रामदास जी सोढी वंश के थे और यह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक सच हुआ। धरती में सही समय पर सही बीज बोना जितना महत्वपूर्ण है उतना ही महत्वपूर्ण है बीज के अंकुरित होने से लेकर पूर्ण वृक्ष बनने तक की सारी अवस्थाओं का सही पोषण और सामाजिक संवर्धन। श्री गुरु रामदास जी ने गुरु नानक साहिब द्वारा बोये बीज से अंकुरित पौधे का सही पोषण और संवर्धन भी किया। इसके लिये उनकी सदा सर्वदा जयकार है।

भाई गुरदास जी की नजर में श्री गुरु रामदास जी

*-स. बलविंदर सिंह जौड़ासिंघा**

भाई गुरदास जी ने सिक्ख गुरु साहिबान के जीवन-इतिहास का काव्य-वर्णन अपनी वारों में किया है। श्री गुरु रामदास जी के बारे में भाई गुरदास जी का जो नजरिया है इस लेख के द्वारा उसको समझने का यत्न किया गया है। सिक्ख इतिहास में श्री गुरु रामदास जी और भाई गुरदास जी की काफी नजदीकी रिश्तेदारी थी, क्योंकि जहां सांसारिक रिश्ते में श्री गुरु रामदास जी तीसरी पातशाही श्री गुरु अमरदास जी के जमाई लगते थे वहां भाई गुरदास जी भी तीसरे सतिगुरु के भतीजे थे। श्री गुरु रामदास जी और भाई गुरदास जी इकट्ठे ही बचपन से सतिगुरु की हजूरी में रहकर सेवा और सिमरन करते रहे। श्री गुरु रामदास जी की सेवा तथा कठिन कमाई सफल हुई और दीन-दुनी के बोहिथ बनकर जगत का पार-उतारा करने के लिए चौथे गुरु बने। भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में श्री गुरु रामदास जी के साथ सांसारिक रिश्ते, प्यार और स्नेह की जगह गुरु-चेले की प्रीति का बयान किया है :

चंद चकोर परीत है लाइ तार निहाले।
चकवी सूरज हेत है मिलि होनि सुखाले।
नेहु कवल जल जाणीऐ खिड़ि मुह वेखाले।
मोर बबीहे बोलदे वेखि बदल काले।
नारि भतार पिआरु है मां पुत सम्हाले।
पीर मुरीदा पिरहड़ी ओहु निबहै नाले ॥
(वार २७:४)

श्री गुरु रामदास जी के गुरु-काल के समय भाई गुरदास जी ने सिक्ख धर्म के संगठन, प्रचार और प्रसार में बहुमूल्य योगदान दिया। भाई गुरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी की शख्सियत को बहुत निकट से देखा और उनका प्रभाव भी कबूल किया। चूंकि जीवन-रचना के बारे में विस्तार तो नहीं हुआ फिर भी १/४७, ३/२, १३/२५, २०/१, २४/१५-१६-१७, २६/३३-३४, ३८/२०, ३९/२ आदि वार/पउड़ियों में श्री गुरु रामदास जी की शख्सियत का वर्णन किया है। भाई गुरदास जी की वारों के अध्ययन के आधार पर जो जीवन-इतिहास एवं शख्सियत के गुण उभर कर सामने आते हैं उनका विभाजन निम्नलिखित के अनुसार हो सकता है:

गुरु एवं सिक्ख परंपरा : 'गुरु' मनुष्य के मन में बसे अंधेरे को नष्ट कर रोशन करने के योग्य माना जाता है। गुरु के शबद के द्वारा जीव अपनी अंतर-आत्मा की सोझी प्राप्त कर परम तत्व को प्राप्त होता है। इस तरह जहां गुरु की महानता है वहां गुरु-शबद की प्राप्ति करने वाले गुरु के द्वारा महानता को प्राप्त होते हैं। अंतिम प्राप्ति चेले से गुरु बनकर पूरी होती है। सिक्ख धर्म में गुरु नानक साहिब जगत-गुरु स्वीकार किए जाते हैं। बाकी सब सिक्ख, चेले, पैरोकार माने जाते हैं। श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी आदि गुरु इस निर्मल पंथ के पथ-प्रदर्शक हुए हैं जिन्होंने गुरमति का मार्ग तैयार किया। इस

**उप सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर। मो: ९८१४८-९८२१२*

परंपरा के बारे में भाई गुरदास जी का कथन है:

सबदु गुरू गुरु वाहु गुरमुखि पाइआ।
चेला सुरति समाहु अलखु लखाइआ।
(वार ३:४)

इस तरह यह बाणी-परंपरा श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी से होती हुई श्री गुरु रामदास जी तक पहुंची, क्योंकि गुरगद्दी पर श्री गुरु रामदास जी सुशोभित हैं :

दिचै पूरबि देवणा जिस दी वसतु तिसै घरि आवै।
बैठा सोढी पाहिसाहु रामदासु सतिगुरू कहावै।
(वार १:४७)

गुरगद्दी की प्राप्ति : सिक्ख धर्म में गुरु-पदवी को महत्व दिया जाता है। सिक्ख धर्म की स्थापना श्री गुरु नानक देव जी ने की और उसके बाद नौ गुरु साहिबान गुरगद्दी पर विराजमान हुए। भाई गुरदास जी के अनुसार अकाल पुरख ने सतिगुरु नानक देव जी को खुद इस जगत में भेजा। उनके बाद श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी सिक्ख बने, फिर श्री गुरु रामदास जी गुरसिक्ख बने, जो सेवा, नम्रता एवं प्यार के साथ पातशाह की नजर चढ़े और गुरु-पदवी तक पहुंचे :

सतिगुर नानक देउ आपु उपाइआ।
गुर अंगदु गुरसिखु बबाणे आइआ।
गुरसिखु है गुर अमरु सतिगुर भाइआ।
रामदासु गुरसिखु गुरु सदवाइआ। (वार २०:१)

बाबाणी पीढ़ी की बख्शिश के लिए प्रेम और सेवा का महत्व होता है। सतिगुरु जी को गुरगद्दी सेवा और सिमरन कर प्राप्त हुई। श्री गुरु रामदास जी सतिगुरु अमरदास जी की सेवा कर गुरु-रूप की अभेदता को प्राप्त हुए :

बाबाणी पीड़ी चली गुर चेले परचा परचाइआ।
गुरु अगदु गुरु अंगु ते गुरु चेला चेला गुरु भाइआ।
अमरदासु गुर अंगदहु सतिगुरु ते सतिगुरू सदाइआ।
गुरु अमरहु गुरु रामदासु गुर सेवा गुरु होइ समाइआ। (वार २६:३४)

नानक-ज्योति की स्थापना : श्री गुरु नानक देव जी निर्मल पंथ की पूर्ण स्थापना के लिए नानक-ज्योति की निरंतरता बड़ी महत्वपूर्ण थी। जैसे-जैसे सिक्ख धर्म का प्रचार-प्रसार हो रहा था तैसे-तैसे पारिवारिक एवं धार्मिक (हिंदुओं और मुसलमानों) लोगों की ओर से विरोध की भावना भी प्रबल हो रही थी, इसलिए गुरु नानक-ज्योति की प्रशंसा संसार के जनसाधारण लोगों तक पहुंचाना आवश्यक था। भाई गुरदास जी गुरु नानक-ज्योति की स्थापना के लिए बहुत ही चेतंन थे, इसलिए उन्होंने नानक-ज्योति की अभेदता को अपनी रचना में चर्चा का विषय बनाया।

भाई गुरदास जी के अनुसार गुरु नानक-ज्योति सतिगुरु नानक देव जी के गुरु-स्वरूप से श्री गुरु अंगद देव जी फिर दूसरे पातशाह से अमर-पद अर्थात् श्री गुरु अमरदास जी में प्रज्वलित हुई, फिर श्री गुरु रामदास जी में प्रकट हुई:

सतिगुरु नानक देउ है गुरु अंगदु अंगहुं उपजाइआ।
अंगद ते गुरु अमर पद अंम्रित राम नामु गुरु भाइआ। (वार ३९:२)

गुरु नानक-ज्योति का सिद्धांत सांसारिक राज-भाग की तरह नहीं था। संसार में राजा की मौत के बाद उसके पुत्र को बादशाहत मिल जाती है। उसी का हुक्म और सिक्का बादशाही चलता है। गुरु नानक साहिब के घर की मर्यादा यह है कि जो गुरु बनता है वो गुरमुखों का गुरमति वाला मार्ग चलाता है। जहां एक ही

सतिसंग रूपी टकसाल है, एक ही रुतबा है, एक ही गुरगद्दी का तख्त है और एक ही न्याय करने वाला है :

दुनीआवा पातिसाहु होइ देइ मरै पुतै पातिसाही।
दोही फेरै आपणी हुकमी बंदे सभ सिपाही।
कुतबा जाइ पड़ाइदा काजी मुलां करै उगाही।
टकसालै सिका पवै हुकमै विचि सुपेदी सिआही।
मालु मुलकु अपणाइदा तखत बखत चढ़ि बेपरवाही।
बाबाणै घरि चाल है गुरमुखि गाडी राहु निबाही। *(वार २६:३१)*

भाई गुरदास जी के अनुसार श्री गुरु अमरदास जी ने गुरु नानक-ज्योति के साथ श्री गुरु रामदास जी की ज्योति जगा कर नमस्कार की:

गुरु अमरहु गुरु रामदासु जोती जोति जगाइ जुहारा। *(वार २४:१४)*

निरंकार की ज्योति श्री गुरु नानक देव जी में प्रज्वलित हुई। आगे यह ज्योति श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी में आई और फिर श्री गुरु अमरदास जी से नाम-रस में भीगे हुए श्री गुरु रामदास जी हुए हैं :

सतिगुरु नानक देउ है परमेसरु सोई।
गुरु अंगदु गुरु अंग ते जोती जोति समोई।
अमरा पदु गुरु अंगदहुं हुइ जाणु जणोई।
गुरु अमरहुं गुरु रामदास अंम्रित रसु भोई।
(वार ३८:२०)

अन्य कथन है :

पारब्रहमु पूरण ब्रहमु गुर नानक देउ।
गुर अंगदु गुर अंग ते सच सबद समेउ।
अमरा पदु गुर अंगदहु अति अलख अभेउ।
गुर अमरहु गुर राम नामु गति अछल अछेउ।
(वार १३:२५)

भाई गुरदास जी के अनुसार नानक-ज्योति सदा प्रवान होती है। गुरु नानक साहिब, गुरु अंगद साहिब और श्री गुरु अमरदास जी की तरह श्री गुरु रामदास जी भी जनसाधारण में प्रवान हुए। आपने गुरमति की अलख जगाकर कलियुग के जीवों को जगाया अर्थात् कलियुगी जीवों का उद्धार किया :

पीऊ दादे जेवेहा पड़दादे परवाणु पड़ोता।
गुरमति जागि जगाइदा कलिजुग अंदरि कौड़ा सोता। *(वार २४:१५)*

अमृत-सरोवर श्री अमृतसर की स्थापना : गुरु नानक साहिब के समय जब गुरु अंगद साहिब गुरगद्दी पर विराजमान हुए तो गुरु जी ने खडूर साहिब में ज्योति जगाई। तीसरे सतिगुरु श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु अंगद देव जी के हुक्म की पालना करते हुए गोइंदवाल बसाया। आगे श्री गुरु अमरदास जी द्वारा श्री गुरु रामदास जी को श्री अमृतसर बसाने का आदेश हुआ। गुरु-हुक्म के अनुसार श्री गुरु रामदास जी ने अमृत-सरोवर खुदवाया। इस तरह श्री अमृतसर की स्थापना का शिलान्यास कर श्री अमृतसर में गुरु-ज्योति जगा दी। भाई गुरदास जी की पहली वार की सैंतालीसवीं पउड़ी में उल्लेख है :

पूरनु तालु खटाइआ अंम्रितसरि विचि जोति जगावै।

इस तरह अमृत-सरोवर एवं श्री अमृतसर की स्थापना के बारे में जानकारी देने वाला यह पहला स्रोत है।

गुरु-वंशावली : श्री गुरु रामदास जी के तीन सपुत्र थे। भाई गुरदास जी की वारों में इन सपुत्रों के नामों और उनकी मनोवृत्तियों का वर्णन हुआ है। श्री गुरु रामदास जी का बड़ा बेटा प्रिथीचंद था जो 'मीणा' (मक्कार) वृत्ति का मालिक था और उसने कुटिल चालें चलकर गुरु-घर में कई मुश्किलें खड़ी कर दीं। इसी

तरह दूसरा बेटा महांदेव गुरमति जीवन-युक्ति से दूर खड़ा था। वो पिता-गुरु से बेमुख था। उनकी हालत उस बांस की तरह थी जो चंदन के पास रहकर भी सुगंधित नहीं होता:

मीणा होआ पिरथीआ करि करि तोंढक बरलु चलाइआ।
महादेउ अहंमेउ करि करि बेमुखु पुतां भउकाइआ।
चंदन वासु न वास बोहाइआ ॥ (वार २६:३३)

गृहस्थ में उदास : सिक्ख धर्म में गृहस्थ को प्रधानता दी जाती है। भाई गुरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी की संसार में रहते हुए गृहस्थ में उदास रहने वाली शख्सियत का वर्णन करते हुए बताया है कि संसार में अच्छे मनुष्यों के मिलाप से सच की प्राप्ति होती है, इसलिए सतिगुरु जी परिवार में गृहस्थी बनकर रहते हैं, आशा में निराश होकर रहते हैं और इस तरह योगियों वाली युक्ति से जोगीशर बनकर जुड़ते हैं। पातशाह देकर वापस नहीं मांगते, इसलिए आप न बिछुड़ते और न दूर होते हैं। आप आधि, बिआधि और उपाधि से रहित हैं एवं वात, पित, कफ आदि जैसे रोगों से मुक्त हैं। दुख-सुख आपके लिए एक समान हैं और गुरु की मति पर सुदृढ़ होने के कारण खुशी एवं गमी से ऊपर हैं। सतिगुरु जी की विलक्षणता है कि इस शरीर में बसते हुए बिदेही अर्थात् मुक्त सरूप हैं और लोगों में रहते हुए भी निर्लेप हैं:

गुरमुखि मेला सच दा सचि मिलै सचिआर संजोगी।
घरबारी परवार विचि भोग भुगति राजे रसु भोगी।
आसा विचि निरास हुइ जोग जुगति जोगीसरु जोगी।
देदा रहै न मंगीऐ मरै न होइ विजोग विजोगी।
आधि बिआधि उपाधि है वाइ पित कफु रोग अरोगी।
दुखु सुखु समसरि गुरमती संपै हरख न अपदा सोगी।
देह बिदेही लोग अलोगी ॥ (वार २४:१६)

लोक तथा परलोक के स्तंभ : भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में श्री गुरु अमरदास जी को दीन-दुनी का स्तंभ कहा है। 'स्तंभ' का अर्थ है बहुत बड़ा सहारा, जिसके आसरे भारी बोझ को सहारा दिया जा सकता है, जिन्होंने लोक एवं परलोक का आसरा बनकर भारी बोझ को झेला। जो जीव सतिगुरु के बेड़े पर चढ़ जाता है उसको भवजल का डर नहीं रहता और वो सतिगुरु के सहारे से संसार सागर को सहजे ही पार कर लेता है:

दीन दुनी का थंमु हुइ भारु अथरबण थंम्हि खलोता।
भउजलु भउ न विआपई गुर बोहिथ चड़ि खाइ न गोता। (वार २४:१५)

परोपकार की मूरत : भाई गुरदास जी के अनुसार श्री गुरु रामदास जी परोपकार की मूरत थे। उनके साथ किया वणज-व्यापार सदा लाभदायक होता है क्योंकि सतिगुरु जी अपने सिक्खों के अवगुण लेकर उनको गुणों की रास देते हैं एवं उत्तम गुण प्राप्त होने के उपरांत किसी तरह का विछोड़ा नहीं होता :

अवगुण लै गुण विकणै गुर हट नालै वणज सओता।
मिलिआ मूलि न विछुड़ै रतन पदारथ हारु परोता।
मैला कदे न होवई गुर सरवरि निरमल जल धोता। (वार २४:१५)

श्री गुरु रामदास जी महान परोपकारी गुरु थे। वे सबके मालिक थे। उनके आगे कोई नहीं

है। पातशाह जी शांति के सरोवर एवं परमहंस थे। जीव ने सतिगुरु जी के ज्ञान को ग्रहण कर झूठ को छोड़ना और सच को धारण करना है। कपट त्याग कर मन को श्री गुरु रामदास जी के सिमरन में एकाग्र करना है, क्योंकि श्री गुरु रामदास जी शबद-सुरति के ध्यान में सहज के अनुभव में रहते हैं, इसलिए ऊंची दशा वाले योगी हैं, क्योंकि सतिगुरु जी में श्री गुरु अमरदास जी समा रहे हैं :

सभना साहिबु इकु है दूजी जाइ न होइ न होगी।
सहज सरोवरि परम हंसु गुरमति मोती माणक चोगी।
खीर नीर जिउ कूड़ु सचु तजणु भजणु गुर गिआन अधोगी।
इक मनि इकु अराधना परिहिरि दूजा भाउ दरोगी।
सबद सुरति लिव साधसंगि सहजि समाधि अगाधि घरोगी।
जंमणु मरणहु बाहरे परउपकार परमपर जोगी।
रामदास गुर अमर समोगी ॥ (वार २४:१७)

गुरु-महिमा : भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में श्री गुरु रामदास जी की महिमा का गुण-गायन एवं सिफति-सालाह की है। पातशाह के प्रताप की प्रशंसा करते हुए भाई साहिब ने कहा है कि सतिगुरु जी ने श्री गुरु अमरदास जी का सिक्ख बनकर अनहद बाणी की निरंतर धारा का आनंद माना। श्री गुरु रामदास जी के द्वारा राज-योग का बरतारा बरत रहा है। मन, बाणी एवं कर्म कर किसी को असल भेद का पता नहीं लग सका, क्योंकि सतिगुरु जी अपर-अपार हैं। कहीं तो आप दया कर दानी और दाता-रूप हैं और कहीं भोक्ता हैं। सतिगुरु जी सच के संवारणहारे, सहज-समाधि में लीन और अगाधबोध को जानने वाले हैं। इसलिए आप जी की गुरगद्दी के अच्छे भाग्य संसार में प्रकट हुए हैं:

राग दोख निरदोखु है राजु जोग वरतै वरतारा।
मनसा वाचा करमणा मरमु न जापै अपर अपारा।
दाता भुगता दैआ दानि देवसथलु सतिसंगु उधारा।
सहज समाधि अगाधि बोधि सतिगुरु सचु सवारणहारा।
गुरु अमरहु गुरु रामदासु जोती जोति जगाइ जुहारा।
सबद सुरति गुरु सिखु होइ अनहद बाणी निझर धारा।
तखतु बखतु परगटु पाहारा ॥

(वार २४:१४)

लेखक साहिबान से अनुरोध है कि आप अपनी रचना के साथ अपना पूरा पता, राज्य का नाम, पिन कोड तथा टेलीफोन नंबर या मोबाइल नंबर आदि अवश्य लिखा करें, ताकि जरूरत पड़ने पर आपके साथ सुविधापूर्वक तथा शीघ्र अवस्था में सम्पर्क किया जा सके। पूरा पता लेखक साहिबान तक पत्रिका तथा सेवाफल (मनीआर्डर के रूप में) आसानी से तथा समय पर पहुंचाने में पूरी मदद करता है। *-संपादक।*

भाई नंद लाल जी के शब्दों में महिमा सलतनते-चहारम (पातशाही चौथी)

*-जनाब हुसन-उल-चराग**

भाई नंद लाल जी द्वारा जो गुरु-महिमा जबन-ए-फारसी में की गई है उसका तरजुमा लगातार पेश किया जा रहा है। इससे पहले पातशाही प्रथम, दूसरी व तीसरी की महिमा बयान की जा चुकी है और उसके आगे पातशाही चौथी श्री गुरु रामदास जी, जिसे भाई नंद लाल जी ने "सलतनते-चहारम" का शीर्षक देकर लिखा है, वह हाज़िर है।

आरंभ हम भाई जी की एक मात्र हिंदी में रचित पुस्तक "जोति विगास" (पंजाबी) में से कर रहे हैं जो इस प्रकार है :

नानक सो अंगद गुर देवना सो अमरदास हरि सेवना।२७।

सो रामदास सो अरजना सो हरिगोबिंद हरि परसना।२८।

अर्थात् जो ज्योति स्वरूप श्री गुरु नानक देव जी थे वही ज्योति श्री गुरु अंगद देव जी में थी और जो ज्योति श्री गुरु अंगद देव जी थे, वही ज्योति श्री गुरु अमरदास हुए और उसी ज्योति ने श्री गुरु रामदास जी को नूर-ओ-नूर किया।

सिक्ख धर्म में गुरु साहिबान के बारे में एक ऐसा बारीकी का नुक्ता है जिसे समझना बड़ा जरूरी है। गुरु साहिबान एक के बाद एक "सोई ज्योति" हैं। बेशक नाम, सूरत, समय तथा स्थितियों में वे भिन्न-भिन्न नजर आते हैं मगर उनकी शख्सियत व ज्योति एक है जिसे भाई साहिब ने अपने कमाल से जमाल कर दिया है। हमारे इस कथन को मानने से कि गुरु साहिबान अवतारवाद से भिन्न कैसे हुए, तो फिर अवतारवाद और ज्योति-स्वरूप में अंतर-भेद क्या है? इस अंतर को मैं आरंभ में ही दे देना चाहता था मगर इसे लिखने के पश्चात् मैंने यह निर्णय लिया कि इस अंतर को मैं श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महिमा के साथ जोड़कर इन दोनों के अंतर-भेद को स्पष्ट करूं। अवतारवाद से दूरी सिक्ख धर्म को न्यारा, एक अलग व सम्पूर्ण धर्म के तौर पर अपना विशेष स्थान और अलग अस्तित्व में स्थापित करती है। यहां मैं महिमा सलतनते (पातशाही)-चहारम (चौथी) तक ही सीमित रहना चाहता हूं, इसलिये भाई साहिब के मुताबिक शुरू कर रहा हूं :

सलतनते-चहारमश अज हर चहार रुतबह कुदसी वालातर।

इसलाम में तीन बड़े समुदाय हैं--सुन्नी, शीया और सूफी। तीनों मुसलमान हैं मगर इनकी मान्यताओं में अंतर है, जैसे कि भाई साहिब शुरू में ही कह रहे हैं "सलतनते-चहारमश अज हर चहार" यानि कि सिक्ख धर्म से पहले जो धर्म या सिलसले यहां आए उनमें से इसलाम और सूफियों के प्रचार, जैसे उनकी शरीअत, तरीकत, हकीकत और मारफत के ढंग-तरीकों से भी पातशाही चौथी श्री गुरु रामदास जी की पदवी कहीं ऊंची है। शरीअत को इसलाम में अलाही उसूल माना गया है जो नाज़िल हुआ और कुरान में दर्ज है। दूसरे,

**१४-सी, रेस कोर्स रोड, श्री अमृतसर, मो : ९८१५१-८८८१०*

मोहम्मद साहिब की बातें, जो उन्होंने अपनाने को कहीं, उन्हें 'सुन्ना' कहते हैं। 'सुन्ना' अरबी का शब्द है और अरबी लोगों के रस्मों-रिवाजों का नाम है। इसलाम स्थापित होने के बाद अरब लोगों ने इसलाम अपना लिया और 'सुन्ना' जो अरबी लोगों की रिवायतें थीं वे अब धार्मिक तौर पर इसलाम धर्म का हिस्सा बन गईं। सूफी लोग ईश्वर (अल्लाह) तक पहुंचने के लिये जिन तरीकों को अपनाते हैं वे आशक-माशूक और मुर्शिद जैसे हैं। इस तरह भाई साहिब सूफियों के ढंग शरीअत, तरीकत, हकीकत और मारफत आदि के जो तरीकोकार हैं उनसे भी चौथे गुरु जी को उनसे ऊंचा बता रहे हैं।

वा मुकबलाने खासे दरगहि समदीअत दर खिदमत बसते कमर।

जो लोग वाहिगुरु के घर (उसकी खास दरहाग) में स्वीकार (कबूल) कर लिये जाते हैं वो तमाम लोग उस वाहिगुरु की सेवा में तैयार-बर-तैयार (कमरकस्से) इंतजार में खड़े उसके हुक्म का इंतजार करते हैं।

हर शक्की वा जलील कि अज बारगाहश पनाह जुस्त।
अज मियामने अफजालश बर मसनदे कबूलो इजत-ब-निशिसत।

. . . और बदनसीब, जलील हो चुका व बदनाम आदमी भी उस वाहिगुरु की शरण में पहुंचा तो उस पर वाहिगुरु की मिहर (बख्शिश) हुई और प्रवान करते हुए उसे भी सम्मान का स्थान प्राप्त हुआ।

वा हर आसीए तबाहकार कि नामे फरुखश बर जबां रांद।
गरदे मासीअत वा जुरम किह दाशत अज दामने वजूद बर अफशांद।

जो कोई भी गुनहगार या वो आदमी जो इंसान या कुदरत की बनाई वस्तुओं को नष्ट करने वाला, तबाही मचाने वाला हुआ और अगर उसने सच्चे दिल से पश्चाताप करते हुए वाहिगुरु के नाम का सिमरन कर और गुरबाणी के नाम से अपने बुरे कर्मों को साफ किया तो उसके पाप और बुराइयों का सफाया हो गया।

राय करामत इंतहाइश रूहे हर जिसम
अलफे बादी अअला तर अज हर इसम।

सलतनते-चहारम श्री गुरु रामदास जी के नाम का पहला अक्षर 'र', जो फारसी में 'रे' लिखा जाता है, इस 'रे' का भाव है कि गुरु जी के नाम की 'रे' से उनकी अलाही रूह प्रत्येक आदमी में मौजूद है और 'र' अक्षर के साथ जो 'ा' (अ) की मात्रा है, जिसे फारसी में 'अलफ' कहा जाता है; अलफ अव्वल (जो सबके ऊपर हो वह पहले नंबर पर होता है) श्री गुरु रामदास जी के नाम में आया अक्षर 'रे' के साथ अलफ की मात्रा तमाम नामों से ऊंचा किये हुए है।

मीमे सरापा तकरीमश महबूबे सुबाहनुल अजीम
व दाल बा अलफश दायमा बाहक्क मुकीम।
सीने आखरीनश सरअफराजे हर बेकस व ब-दसत-गीरीए आजजां हर दो आलम रा बस।

गुरु जी के नाम में आया 'मीम' जो हिंदी-पंजाबी के अक्षर 'म' के बराबर है, वह महबूबे सुवहानुल अजीम है जिसका मतलब है पूरे का पूरा, ऊपर से नीचे तक इस 'मीम' के अक्षर से वह कमाल का प्यारा महबूब है।

. . . और गुरु जी के नाम में आया अक्षर 'दाल', हिंदी-पंजाबी में 'द' दायमा बाहक्क मुकीम है, यानि कि अक्षर 'दाल' (द) का मतलब है कि वो हमेशा-हमेशा के लिये सच्चाई (बा हक्क) के साथ रहने वाला है और गुरु जी के नाम में आये अंतिम अक्षर 'सीन' जो हिंदी-पंजाबी में 'स' लिखा जाता है, वह इस बात का सार्थी है

कि सरअफराज हर बे-कस यानि कि बिना सहारे के लोगों का वह सहारा है।

गुरु जी के नाम में आये अक्षरों का महत्व तथा महिमा बयान करने के पश्चात भाई साहिब लिखते हैं : "वाहिगुरु सत्य है अर्थात् अकाल पुरख सत्य है।"

गुरु रामदास आं मताअ-उल-वरा
जहांबानि इकलीम सिदको सफा।६९।

अर्थात् श्री गुरु रामदास जी मताअ-उल-वरा हैं कि वे लोगों के सरदार और रहनुमा हैं और सिदको-सफा यानि कि सिदक और साफ-सुथरे जीवन-संचालन के वे जहांबाने . . . कि वह पातशाह संचालक है।

हम अज सलतनत हम अज़ फुरकश निशां
गिरां माया तर अफसरि अफसरां।७०।

चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी में *"हम अज सलतनत . . ."* संसार के मीर और पीर यानि बादशाह और पातशाह होने की नुहार (चिन्ह-निशा) साफ-स्पष्ट नजर आती है और गुरु जी ". . . अफसरे सरवरां" कि वे तमाम बड़े से बड़े सरदारों के पातशाह हैं।

जि तौसफि ऊ सलस कासिर जबां
अजो रुबअ हम सुद्दस गौहर फिशां।७१।

गुरु जी की महिमा बयान करते हुए भाई साहिब ने जो ये लाइनें लिखी हैं, इनका बड़ा गहरा तथा दूर का मतलब है, जैसे कि पहले लिखा जा चुका है कि भाई साहिब का जन्म अफगानिस्तान के प्रसिद्ध शहर गजनी में हुआ और उनकी तालीम (शिक्षा) एक इसलामी मदरस्सा में फारसी व अरबी में हुई और इसलामी क्षेत्र में रहने के कारण बेशक वे 'काबली हिंदू' बने रहे, क्योंकि उस इलाके के हिंदू व सिक्ख लोगों को 'काबली' अथवा 'अफगानी हिंदू-सिक्ख' कहा जाता रहा है। वहां का धर्म इसलाम, शिक्षा का माध्यम फारसी व अरबी होने और स्थानीय संस्कृति का भाई जी के जीवन तथा शख्सियत पर इन सब बातों और संस्कारों का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिस कारण वे उदाहरण देते समय इस्लामी लफ्जों-रिवायतों व नुक्ता-ए-नजर का प्रयोग करते हैं। यहां पर जो लफ्ज 'सुलस' प्रयोग किया गया है उसका मतलब होता है तीन तरह की जन्म-प्रक्रिया, यानि पैदायशें, जैसे जमादात, नबातात और हैवानात अर्थात् हिंदू धर्म-शास्त्रों के अनुसार जन्म देने (बनाने) वाला; पालने, चलाने और आगे बढ़ाने वाला तथा समय पश्चात् उसे खंडित करने वाला। जो लफ्ज 'रुबअ' है वह हिंदुओं के चार वेदों के लिये और ब्रह्मांड के चार हिस्सों, जिसमें तीन हिस्से पानी और एक हिस्सा पृथ्वी है, को कहा जाता है . . . और लफ्ज 'सुदम' का प्रयोग भारतीय दर्शन में आये छः शास्त्रों तथा जो छः दिशाओं यानि कि छः प्रकार की विचारधाराओं (मार्गों) को बयान करते हैं। इन छः शास्त्रों के छः भिन्न-भिन्न 'गुरु' (दार्शनिक ऋषि) हैं, जैसे गुरबाणी में आया है *"छिअ घर छिअ उपदेस ॥"* इस तरह फारसी में की गई गुरु-महिमा को हम इस प्रकार समझेंगे कि गुरु जी की उपमा करने में 'सुलस' भी असमर्थ हैं और 'सुदम' के छः शास्त्र भी और उनकी बताई छः दिशाएं भाव उनके छः भिन्न-भिन्न मार्ग भी गुरु जी की महिमा नहीं कर सकते। सिक्ख दर्शन आधुनिक और न्यारा है यानि कि गुरबाणी आधुनिकता से भरपूर और पहले के तमाम दर्शनों में से गुरुओं का सिक्ख दर्शन न्यारा है।

चि हक्क बरगुजीदश जि खासान खेश
सर अफराखतश हम जि पाकाने खेश।७२।

(शेष पृष्ठ २६ पर)

"गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" कृत भाई संतोख सिंघ के अनुसार श्री गुरु रामदास जी का जीवन-इतिहास

*-स. कुलदीप सिंघ**

भाई संतोख सिंघ ने श्री गुरु रामदास जी के जीवन-चरित्र का "गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की रास (राशि) २ के अंतर्गत अध्याय (अंसू) १ से २४ तक वर्णन किया है। गुरगद्दी से पूर्व की घटनाएं रासि १ में श्री गुरु अमरदास जी के जीवन-चरित में अध्याय ४१ के बाद प्रसंग अनुसार दी गई हैं। श्री गुरु रामदास जी के जीवन में भाई संतोख सिंघ ने दो केंद्रीय बिंदु निर्धारित किये हैं जिनकी झलक उनके सम्पूर्ण जीवन में प्रतिबिंबित होती है।

प्रथम मुख्य विचार यह दर्शाता है कि किस प्रकार एक सहज और विनम्र व्यक्तित्व का बालक अपने आदर्श व्यवहार से सबसे गौरवपूर्ण पद को प्राप्त कर लेता है। "गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की रचना से पूर्व भाई राय बलवंड और भाई सत्ता जी की वार में श्री गुरु रामदास जी की प्रशस्ति में कही गई *'पूरी होई करामाति'* में इस विचार का संकेत श्री गुरु ग्रंथ साहिब में है:

धंनु धंनु रामदास गुरु जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ ॥
पूरी होई करामाति आपि सिरजणहारै धारिआ ॥
(पन्ना ९६८)

श्री गुरु रामदास जी! आप जी धन्य हैं। जिस परमात्मा ने तुम्हें रचा है उसी ने तुम्हें संवारा है। रचयिता की लीला तुम्हें इस रूप में संवार कर पूरी हो गयी।

भाई सत्ता और भाई बलवंड जी के द्वारा की गई प्रशस्ति *'पूरी होई करामाति'* का समर्थन भाई संतोख सिंघ ने श्री गुरु अमरदास जी के माध्यम से किया है, जब श्री गुरु रामदास जी श्री गुरु अमरदास जी के निर्देशानुसार उनके लिए चबूतरा-निर्माण की परीक्षा में खरे उतरते हैं:

इस ते नहिं अदेय कुछ मोरे।
सभिहिनि ते पद प्रापति गौरे ॥५३॥ (अध्याय ५७)

श्री गुरु रामदास जी को मेरे लिए कुछ अदेय नहीं है। मैं इन्हें सभी कुछ देने को तैयार हूं क्योंकि इन्हें (अपने गुणों के कारण) सबसे ऊंचा पद प्राप्त है।

श्री गुरु रामदास जी के जीवन के सम्बंध में दूसरा मुख्य विचार उनके सरल जीवन को सामाजिक या आध्यात्मिक परंपरा की उलझन को दर्शाता है। भाई संतोख सिंघ ने गुरगद्दी-परंपरा को लक्ष्मी का प्रतीक माना है तथा गुरगद्दी के उत्तराधिकार में योग्यता के आधार पर प्रजातांत्रिक मूल्यों को प्राथमिकता दी है। दैवयोग से उत्तराधिकार बदलने का माध्यम बीबी भानी जी बनीं। सेवा की दृष्टि से बीबी भानी जी का चरित्र आदर्श है किंतु उनमें अपने बच्चों के वैभवपूर्ण जीवन की ललक भी है। वे बाणी और लक्ष्मी का स्वरूप हैं:

मनहुं कीरती रूप करयो है।
कै ग्री स्री निज बेसु धरयो है ॥३॥ (अध्याय ६४)

श्री गुरु अमरदास जी गुरगद्दी की तुलना लक्ष्मी से करते हैं। वे बीबी भानी जी को वर देते समय कहते हैं कि श्री गुरु नानक देव जी तथा श्री गुरु अंगद देव जी ने लक्ष्मी को दूर

**सी-१२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद-२११०१६, फोन : ०५३२-२६५७९६१*

रखा। लक्ष्मी ने मेरे दरवाजे पर दस्तक दी क्योंकि मुझे अपने दो दामादों (भाई रामू जी और (गुरु) रामदास जी) के बीच चुनाव करना था। पुत्रों के मध्य चुनाव होने पर लक्ष्मी का घर के अंदर प्रवेश होता है जिससे श्री गुरु अमरदास जी का सीधा टकराव होता है :

आन हमारे ठांढी द्वार।
करयो अपनो जोर उदार।
पैसकार अंतर नहिं भयो।
खरी रही दर पर हित लयो ॥६०॥ (अध्याय ६२)

श्री गुरु रामदास जी जैसे सरलचित्त व्यक्ति को गुरगद्दी देते समय चुनाव पुत्रों में से करना था। भाई संतोख सिंघ ने श्री गुरु रामदास जी के श्री (गुरु) अरजन देव जी के प्रति प्रेम, प्रिथीचंद के कपट तथा उत्तराधिकार घोषणा के बाद श्री गुरु रामदास जी के मानसिक कलेश को अंतिम १० अध्यायों का विषय बनाया है। एक ओर बीबी भानी जी का श्री गुरु रामदास जी के पार्थिव शरीर के पास बैठकर *"धरी धीर भानी नहिं रोई"* का चित्र है तथा दूसरी ओर अपनी कोख से उत्पन्न पुत्रों के दुर्व्यवहार और छोटे पुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को पिता को अग्नि देते समय रोते देखकर, प्रेमातुर होकर अश्रु छोड़ने की जीवन की विडंबना। उस समय प्रिथीचंद और महादेव की बजाय बीबी भानी जी के दोनों भाई उपस्थित थे:

धरी धीर भानी नहिं रोई।
बैठी पती समीपी होई।
निकट हुते इक दिस जुग भ्राता।
दिस दूसर स्री अरजन ताता ॥१८॥ . . .
स्री अरजन लै अगनी हाथ।
लाइ तबै रोदन के साथ ॥३५॥
जब ऊचे सतिगुर सुत रोवा।
भानी आदि सभिनि ने जोवा।
प्रेमातुर हुइ आंसू छोरे।
शोक विखै सभि के मन भोरे ॥३६॥ (अध्याय २४)

भाई संतोख सिंघ ने श्री गुरु अमरदास जी द्वारा सिक्खों को दी गई शिक्षा के क्रम में तथा बीरबल द्वारा कर ग्रहण करने के लिए संदेश के बीच, कलात्मक रूप से श्री गुरु रामदास जी के जीवन की रूप-देखा प्रस्तुत करने का अंतराल निकाला है जिसे अध्याय (अंसू) ४१ की मात्र २४ चौपाई में प्रस्तुत किया गया है। श्री गुरु रामदास जी का जीवन शांतिमय गुरबणी की एक कड़ी के रूप में है। भाई संतोख सिंघ ने १५२४ से लेकर १५६९ तक की अवधि में श्री गुरु रामदास जी के जन्म से लेकर श्री गुरु अरजन देव जी के विवाह तक की ४५ वर्ष की घटनाओं का सारांश दिया है। वास्तव में यह अवधि सन् १५३४ (संवत् १५९१) से सन् १५७९ (संवत् १६३६) होनी चाहिए। श्री गुरु रामदास जी के परलोक-गमन का समय संवत् १६३८ वर्तमान मत के अनुसार ही दिया गया है।

श्री गुरु अमरदास जी के परलोक-गमन के बाद श्री गुरु रामदास जी की जीवन-गाथा का आरंभ विरह से विह्वल इंसान के रूप में किया गया है। उन्हें बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु अमरदास जी के वचन याद दिलाये और बाबा मोहरी ने संगत को दर्शन देने का आग्रह किया। गुरु जी ने आग्रह स्वीकार किया। श्री गुरु रामदास जी नित्य सतसंग के दीवान में उपस्थित होने लगे। *'राजति सतिगुरू राइ'* के २० दोहों में उनकी प्रशस्ति की गई है।

श्री गुरु रामदास जी के नैतिक उपदेशों को दो खंडों में रखा गया है। सैद्धांतिक उपदेश अन्य मतावलंबी या विद्वानों को सम्बोधित हैं। अध्याय

२ में सिध तथा अध्याय ३ में तपस्वी के प्रति उपदेश हैं। सिध को आत्म-ज्ञान का उपदेश दिया गया है जिसमें रस्सी में सांप के भ्रम और मृगतृष्णा की वास्तविकता जानने का वर्णन है तथा प्रेम-भक्ति में सत्य 'नाम' को एकाग्रता से स्मरण करने पर बल है:

प्रेम बिहीन जि साधन मुकति।
निषफल होति संत की उकति।
बिना प्रेम करि घाल बिसाला।
प्रेम करहि फल लहि ततकाला ॥३७॥ (अध्याय २)

इस सम्बंध में हठयोग की सार रहित वीणा का उल्लेख है। तपस्वी को तप की अपेक्षा सेवा का महत्व बताया गया है। सेवा अहंकार रहित होनी चाहिए। सेवा भक्ति-ज्ञान और मोक्ष के सम्बंध का कारण माला अलंकार में स्पष्ट किया गया है:

बिन सेवा ते भगति न पावहि।
भगति बिना नहि ग्यान उपावहि ॥४७॥
ग्यान बिना नहि मुकति पदारथ।
सेवा मूल सु करहु क्रितारथ ॥४८॥ (अध्याय ३)

श्री गुरु रामदास जी के समय में सिक्ख धर्म का व्यापक प्रसार हो रहा था। निकट और दूरवर्ती गांव के सिक्ख धर्म का वास्तविक स्वरूप जानने के लिए आते थे। अध्याय १७ और १८ में गुरु जी के द्वारा निष्ठावान सिक्खों को दिये गए उपदेशों की बानगी प्रस्तुत की गई है। अध्याय १७ में तीरथा सभरवाल को सत्य के व्यवहारिक पक्ष के कई पहलू समझाए गए हैं। यहां तक कि परहित के लिए सत्य छोड़कर झूठ बोलना उचित माना गया है, अगर कोई प्राणी मरने से छूट जावे तब झूठ सत्य के समान है। अध्याय १८ में महानंद तथा बिधीचंद को तन का अहंकार छोड़ने का आदेश है। जापा और रमईआ को मन संयत करने का सुझाव है। चंचल मन रोगी घोड़े के समान है। उसको दवाई के अतिरिक्त अखाद्य विषयों से दूर रखना चाहिए। प्राय: घोड़े को दवाई देने के अलावा मुंह पर कड़िआला (रस्सी से बना जाल) भी बांध देते हैं, जिससे वह अपथ्य वस्तु न खावे तब घोड़ा निरोग हो जाता है :

जिम तुरंग को देहिं मसाला।
बहुर करहिं काजै चिरकाला ॥३५॥
तब हय रोगी होइ निरोवा।
सभि सरीर की ब्याधी खोवा । . . . ३६॥
(अध्याय १८)

श्री गुरु रामदास जी का योगदान गुरबाणी के उपदेश के साथ-साथ एक ऐसे धार्मिक केंद्र की स्थापना करना था जिसका विकास 'अमृतसर' के रूप में हुआ। श्री गुरु अमरदास जी ने बादशाह अकबर से प्राप्त 'अमृतसर' का पट्टा श्री गुरु रामदास जी को दिया तथा उन्हें निर्धारित स्थान का निश्चित विवरण दिया। पहले ग्राम बसा कर अपना सदन बनावें फिर पूर्व दिशा में जाकर तालाब खुदवावें। श्री गुरु रामदास जी ने ध्यानपूर्वक स्थान की पहचान की। जल प्रवाह की समेट का एक सुंदर स्थान था। वहां बेरी के पेड़ थे। इस रमणीय स्थान के चयन की सूचना श्री गुरु अमरदास जी को दी। सरोवर की कार-सेवा आरंभ हुई। श्री गुरु नानक देव जी के पुत्र बाबा श्रीचंद का आगमन भी इस स्थान पर हुआ।

बाबा श्रीचंद ने श्री गुरु रामदास जी की नम्रता की थाह लेने का प्रयास किया। गुरु जी ने आदर-भाव से उनके मन के विकार को दूर कर दिया :

सिरीचंद बोले ततकालू।
करति परखणा प्रेम दिआलू।
'इतना दाढ़ा कैस बधाओ?'

सुनिकै सतिगुर भे निंम्रायो ॥७७॥
चरन गहे करि प्रेम सों पोंछहि बारंबार।
'इस ही हेतु वधाति भे, सुनीए गुर सुत दयार ॥७८॥
(अध्याय १४)

सरोवर की खुदाई का कार्य पूरा हुआ। 'अमृतसर' के सरोवर से श्री गुरु रामदास जी का बहुत लगाव था। परलोक-गमन के समय आसा की वार के पाठ के बाद श्री गुरु रामदास जी ने सरोवर की सेवा का संदेश सिक्खों को दिया:

सुधा सरोवर मोर सरीर।
तिस की टहिल करहु बडधीर। . . . ५४॥
(अध्याय २३)

श्री गुरु रामदास जी के गुरगद्दी के उत्तराधिकारी के विषय में अनुभव किये यथार्थ का वर्णन इस आलेख के आरंभ में दिया गया है। श्री गुरु रामदास जी का परलोक-गमन पूर्व निर्धारित था। गुरु जी के तीनों पुत्रों का आचरण अलग-अलग था। सबसे अग्रज प्रिथीचंद स्वभाव का कपटी था। उससे छोटा महादेव नित्य व्यवहार से उदासीन था और तीसरे पुत्र (गुरु) अरजन देव जी जांच में सच्चे हीरे थे। इस परिपेक्ष में गुरु जी के ताए श्री संहारी मल के पौत्र की शादी में उपस्थित होने का प्रसंग भी आया है। गुरु जी ने विनम्रतापूर्वक अपने सम्मिलित होने में असमर्थता दिखाई तथा प्रिथीचंद को जाने का निर्देश दिया। प्रिथीचंद ने जाने से इंकार किया। अंत में श्री (गुरु) अरजन देव जी माता से आशीष लेकर लाहौर गये। श्री गुरु रामदास जी का समय सिक्खों को उपदेश देने में बीतने लगा। भाई संतोख सिंघ ने श्री (गुरु) अरजन देव जी द्वारा भेजे गये पत्र को भावुक मनोभूमि में प्रस्तुत किया। दो पत्र बड़े पुत्र प्रिथीचंद ने अपने पास रख लिये। तृतीय पत्र श्री गुरु रामदास जी को प्राप्त हुआ तब उन्होंने श्री (गुरु) अरजन देव जी को बुलवाया। बड़े नाटकीय तरीके से प्रिथीचंद के पास उपलब्ध पत्रों को संगत में प्रस्तुत कराया गया तथा श्री गुरु रामदास जी ने श्री (गुरु) अरजन देव जी को गद्दी देने की घोषणा कर दी।

श्री गुरु रामदास जी के द्वारा श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी दिये जाने पर प्रिथीचंद ने श्री गुरु रामदास जी की परख करने की विधि पर व्यंग्य किया तथा अनादर के वचन कहे। श्री गुरु रामदास जी ने निश्चय किया कि वे पत्नी तथा पुत्र (गुरु) अरजन देव जी के साथ अंत-समय गोइंदवाल रहेंगे। बीबी भानी जी को यह अपराधबोध हुआ कि उन्हीं के कारण उत्तराधिकार वंश के अंतर्गत होना निश्चित हुआ जो उनके पति की विकलता का कारण है, उन्हें अपने पिता का कथन भी याद आया :

--गुरता रुके कलेश बिसाल।
पित ने कहयो बाक इस ढाल।
यांते मैं जानो उतपात।
होवहिंगे, बिगरहि सभि बात ॥२८॥ (अध्याय २३)

श्री गुरु रामदास जी ने बीबी भानी जी की अपराध-चेतना को दूर किया जिससे शोक की घड़ी में वे समरसता के भाव से धैर्य रख सकीं।

श्री गुरु रामदास जी की उपमा में भट्ट साहिबान द्वारा उच्चारित ६० सवैये हैं। विनम्रता की मूर्ति श्री गुरु रामदास जी के हृदय में निरंकार निरवैर प्रभु का निवास है : *"स्री सति नामु करता पुरखु गुर रामदास चितह बसै ॥"* श्री गुरु रामदास जी के गुणों का सिंहावलोकन भाई संतोख सिंघ द्वारा रचित सिंहावलोकन अलंकार से विभूषित चित्रपदा छंद से किया जाना उचित है :

राम सु दास गुरू सुखरास हरैं जम त्रास रिदा

निषकाम।
काम न क्रोध बिरोध निरोध, सदा सुध बोध, सरूप निकाम।
काम करे जन शाम परे तिन ताप हरे नित होत अनाम।
नाम जपे अघ ब्रिंद खपे सु रपे हरि रंग सदा अभिराम ॥४॥ (अध्याय १, रास १)

श्री गुरु रामदास जी का हृदय निष्काम है, वे सुख की राशि हैं, यम का डर दूर करने वाले हैं तथा प्रभु के सच्चे सेवक हैं। वे निष्काम हैं सदा बोध से युक्त हैं, विरोध को रोकने वाले हैं तथा विकार से रहित हैं। जो जन उनकी शरण पड़ता है वह रोग रहित (अनामय) हो जाता है, उसके तीनों ताप दूर हो जाते हैं तथा उसके सभी कार्य पूर्ण हो जाते हैं। सतिगुरु की शिक्षा में अनुरक्त व्यक्ति हरि के रंग में रंगा जाकर सनातन शोभा को प्राप्त करता है। नाम का जाप करने से पापों के समूह नष्ट हो जाते हैं। (उक्त मंगलाचरण के छंद की प्रत्येक पंक्ति के अंतिम दो अक्षरों को अगली पंक्ति के आरंभ में रखा गया है। चौथी पंक्ति के अंतिम शब्द 'अभिराम' से 'राम' शब्दांश लेकर छंद आरंभ हुआ है। इस प्रकार पंक्ति के आरंभ और अंत दोनों में तुकांत से लयात्यक संगीत की ध्वनि है।)

भाई नंद लाल जी के शब्दों में . . . *(पृष्ठ २१ का शेष)*

अर्थात् जब गुरु जी पातशाही चहारम को उस वाहिगुरु ने संसार के खास लोगों में से चुना तो खास नामवर ईश्वर-भक्तों व देव लोगों से भी गुरु जी को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया जिसका मतलब यह निकलता है कि भाई नंद लाल जी ने गुरु जी को उस समय और उस समय से पूर्व के तमाम ईश्वर-भक्तों, ऋषियों-मुनियों तथा धर्म-संचालकों में सबसे ऊपर न्यारा स्थान दिया।

हमा साजिदश दा बसिदकि जमीर
चिह आअला चिह अदना चिह शह चिह फकीर।७३।

सलतनते-चहारम श्री गुरु रामदास जी की महिमा के अंत में भाई साहिब जी कह रहे हैं कि क्या बड़े, क्या छोटे, क्या समय के हुक्मरान और बादशाह या फक्कर-फकीर लोग, सभी श्री गुरु रामदास जी की महानता को मानने लगे हैं। इसका भाव यह है कि दिनों-दिन, प्रतिदिन उत्तर भारत में बेशक मुसलमानों की इसलामी हकूमत थी और हिंदू धर्म उसका मुकाबला नहीं कर पा रहा था तथा उनका बड़ा भाग इसलाम कबूल कर रहा था, मगर फिर भी सिक्ख गुरु साहिबान ने ऐसी भयानक और इसलाम के दबदबे की परस्थितियों के बावजूद श्री गुरु नानक देव जी से लेकर बिना किसी भय के अपनी गुरबाणी के माध्यम से लोगों को जगाया, हौंसला दिया और जिंदा रहने के लिये मानसिक शक्ति प्रदान की, जिससे एक नये व मजबूत मार्ग की स्थापना हुई और यह सब गुरु साहिबान के प्रभाव से हुआ। लोगों को सिक्ख मार्ग को धारण करने के बाद अपने अस्तित्व का पता चला जिससे गुरु साहिबान का प्रभाव उस समय तथा उससे पहले के तमाम धर्म-संचालकों के दर्जों से कहीं ऊंचा उठ गया और लोग सिक्ख गुरु साहिबान को मताअ-उल-वरा और अफसरे-सरवरां, अपना सरदार, रहनुमा तथा पार लगाने वाला सतिगुरु मानने लगे।

"तवारीख गुरू खालसा" कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में श्री गुरु रामदास जी का जीवन-व्यक्तित्व

*-डॉ. परमवीर सिंघ**

श्री गुरु रामदास जी बचपन से ही गुरु-घर के साथ जुड़े हुए थे। उनका बचपन का नाम 'जेठा' था। १५३४ ई में उनका जन्म चूनी (चूना) मंडी, लाहौर में भाई हरिदास मल सोढी तथा माता दया कौर के घर हुआ। सात वर्ष की आयु में ही माता-पिता का साया उनके सिर से उठ गया था। उनका पालन-पोषण उनके ननिहाल गांव बासरके में हुआ। पिता के परलोक गमन कर जाने के बाद उनकी नानी इन्हें लेकर गांव बासरके आ गई थीं। श्री गुरु अमरदास जी इसी गांव से सम्बंधित थे। श्री गुरु अंगद देव जी के आदेशानुसार श्री गुरु अमरदास जी ने गोइंदवाल नगर बसाया तो इस नगर को खुशहाल करने के लिए उन्होंने अपना परिवार बासरके से गोइंदवाल में लाकर बसाया था तथा साथ ही गांव के अन्य लोगों को भी वहां आकर बसने के प्रेरणा की थी। इसी प्रेरणा अधीन भाई जेठा जी को लेकर उनकी नानी भी गोइंदवाल आ बसी थीं। गोइंदवाल में भाई जेठा जी घुंघणियां (चने) बेचने का काम करते थे और साथ ही गुरु-घर से गुरमति की विद्या प्राप्त करके अपना जीवन गुरु-अनुसारी बनाने का यत्न कर रहे थे। सेवा तथा परोपकार को उन्होंने अपने जीवन का अंग बनाया हुआ था।

श्री गुरु अमरदास जी की सपुत्री बीबी भानी जब विवाह योग्य हुई तो माता-पिता की ओर से लड़के की देखभाल आरंभ हो गई। एक दिन भाई जेठा जी घुंघणियां बेच रहे थे तो श्री गुरु अमरदास जी की सुपत्नी उन्हें देखकर बोली कि बीबी भानी के लिए वर में भाई जेठा जी जैसे गुण होने चाहिएं। श्री गुरु अमरदास जी ने यह सुनकर भाई जेठा जी को अपने पास बुलाया और उसके साथ कुछ विचार करने के पश्चात कहा कि "बस, इस जैसा तो यही है और देखने की कोई जरूरत नहीं। अच्छा हुआ जो मन-इच्छित लड़का मिल गया।" भाई जेठा जी के साथ बीबी भानी जी का विवाह कर दिया गया और उनके घर तीन पुत्र पैदा हुए-- प्रिथीचंद, महांदेव तथा (गुरु) अरजन देव जी।

भाई जेठा जी ने कभी भी अपने आप को श्री गुरु अमरदास जी का दामाद नहीं समझा। गुरु-घर के प्रति सेवा, नम्रता तथा श्रद्धा के कारण वे हमेशा अपने आप को एक साधारण सेवादार ही समझते रहे। ज्ञानी गिआन सिंघ बताते हैं कि एक बार श्री गुरु अमरदास जी ने अपने चुनिंदा सिक्खों को बाउली के चारों तरफ चबूतरे बनाने के लिए कहा तो सब ने बहुत उत्साह से चबूतरे बनाए। वे चबूतरे गुरु जी को पसंद न आए तो उन्होंने ढहा दिए और दोबारा चबूतरे बनाने के लिए कह दिया। यह कार्य कई बार दोहराया गया। गुरु जी के पुत्र तथा सेवक चबूतरे बनाएं और गुरु जी तुड़वा कर पुन: नए बनाने के लिए कह दें। धीरे-धीरे सबका संयम खत्म हो गया तथा उन्होंने और चबूतरे बनाने से इंकार कर दिया, लेकिन भाई जेठा जी गुरु जी के बताए काम में निरंतर लगे रहे। जब भाई जेठा जी से इसका कारण

**सिक्ख विश्वकोश विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो: ९८७२०-७४३२२*

पूछा तो उन्होंने कहा कि "मैंने तो गुरु जी का हुक्म मानना है और सेवा करनी है, चाहे उम्र भर यही काम कराते जाएं।" भाई जेठा जी का धैर्य देखकर श्री गुरु अमरदास जी बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने भाई जेठा जी को श्री गुरु नानक देव जी की गद्दी का वारिस बना दिया और उसी दिन से उनका नाम 'गुरु रामदास जी' प्रसिद्ध हो गया।

श्री गुरु अमरदास जी ने सुलतानविंड, तुंग, गुमटाला तथा गिलवाली गांवों के पंचों को बुलाकर उनसे जमीन ले ली और उस जमीन पर श्री गुरु रामदास जी को नया नगर बसाने के लिए कहा। इस नगर का नाम 'रामदासपुर' रखा गया। श्री गुरु रामदास जी ने संगत को इस गांव को आबाद करने के लिए कहा और गांवों के लोगों तथा संगत ने तुरंत छप्पर-कोठे तैयार कर दिए तथा कई दुकानें बनाईं, जिनका नाम अब 'गुरु का बाजार' है। भाई सालो, रूपराम, गुरीआ, गुरदास, उदम आदि सिक्खों ने ५२ जातियों के लोग गुरु जी के महलों के इर्द-गिर्द बसा दिए।

श्री गुरु रामदास जी रामदासपुर में संगत को प्रभु-नाम के साथ जुड़ने का उपदेश करते। गुरु की शिक्षा को गुरु का आदेश मानकर धारण करना तथा अपना समूचा जीवन उसी अनुसार बनाना गुरमति का उद्देश्य है। गुरु की आज्ञा का पालन करने वाला सिक्ख कहीं भी बैठा हो, गुरु खुद उसके हर कार्य में सहायी होता है। गुरु की आज्ञा का पालन न करने वाले को गुरमति अनुसार कोई स्थान नहीं दिया गया बल्कि गुरमति संदेश की पालना न करने वाले को 'मनमुख' कहा जाता है और ऐसे व्यक्तियों को कई बार सिक्खी से बाहर भी कर दिया गया है, चाहे वो गुरु-पुत्र ही क्यों न हों। ऐसी ही एक उदाहरण हमें श्री गुरु रामदास जी के जीवन में देखने को मिलती है। गुरु जी ने प्रिथीचंद के जीवन को गुरमति शिक्षा के अनुकूल न जानकर उसे गुरगद्दी का हकदार नहीं समझा था। गुरु साहिब ने यह स्पष्ट कर दिया कि गुरगद्दी विरासत में नहीं मिलती बल्कि इसे ग्रहण करने के लिए गुरमति के अनुकूल योग्यता का होना आवश्यक है। कोई भी सिक्ख या गुरु-पुत्र, जो योग्यता रखता हो, गुरगद्दी हासिल कर सकता है। श्री गुरु रामदास जी के तीन सपुत्र थे। गुरु जी ने अपने सबसे छोटे सपुत्र (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी के योग्य वारिस जानकर उन्हें यह सेवा सौंप दी थी। प्रिथीचंद घर में सबसे बड़ा पुत्र था। समूह संगत के साथ उनका सम्पर्क था, गुरु-दर्शन हेतु आने वाली संगत से चढ़ावा भी वो खुद लेता था और उनकी सेवा के रूप में उनका सत्कार और उन्हें सिरोपा देने का काम भी वो खुद करता था, जिस कारण उसका विभिन्न क्षेत्रों की संगत के मुखिया सिक्खों के साथ नजदीकी सम्बंध स्थापित हो गया था। इतना सब कुछ होने के बावजूद भी वो श्री गुरु रामदास जी के अनुसार गुरगद्दी का योग्य अधिकारी नहीं था। लेखक इसका कारण उसकी लालची, अहंकारी तथा गुरु की आज्ञा-पालन न करने की वृत्ति को मानता है। लेखक बताता है कि एक बार श्री गुरु रामदास जी के ताऊ का पुत्र संहारीमल उनके पास आया और अपने पुत्र के विवाह के अवसर पर उसने गुरु जी को लाहौर आने का निमंत्रण दिया। गुरु जी खुद इस विवाह में इस कारण नहीं जाना चाहते थे क्योंकि जहां गुरु जी खुद हाजिर रहेंगे वहां संगत भी बड़ी संख्या में आ जाती है। वे नहीं चाहते थे कि किसी कारण विवाह के प्रबंधों में विघ्न पड़े या लड़की वालों पर अतिरिक्त भार डाला जाए। गुरु जी ने

(शेष पृष्ठ ३८ पर)

"पंथ प्रकाश" कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में श्री गुरु रामदास जी का नूरानी जीवन-विवरण

-डॉ. मनजीत कौर*

गुर पारस हम लोह मिलि कंचनु होइआ राम ॥
जोती जोति मिलाइ काइआ गडु सोहिआ राम ॥
काइआ गडु सोहिआ मेरै प्रभि मोहिआ किउ सासि गिरासि विसारीऐ ॥
अद्रिसटु अगोचरु पकड़िआ गुर सबदी हउ सतिगुर कै बलिहारीऐ ॥
सतिगुर आगै सीसु भेट देउ जे सतिगुर साचे भावै ॥
आपे दइआ करहु प्रभ दाते नानक अंकि समावै ॥ (पन्ना ११९४)

सेवा और सिमरन की अप्रतिम मिसाल श्री गुरु रामदास जी का सम्पूर्ण जीवन सतिगुरु को समर्पित है। गुरदेव के मुखारबिंद से उच्चरित पावन शबद समर्पण की पराकाष्ठा है, जहां केवल एक ही विश्वास है कि प्रभु रूप गुरु के चरणों में मैं अपना सिर भेंट कर दूं। अगर सतिगुरु की रहमत हो जाए तो पारब्रह्म परमेश्वर की गोद नसीब हो जाती है अर्थात् हर पल यह हृदय प्रभु-चरणों में लीन रहता है।

उपरोक्त विषयानुसार सिक्ख पंथ के महान विद्वान कवि ज्ञानी गिआन सिंघ ने ब्रज भाषा में बड़ी सुंदर शैली में सिक्ख इतिहास को काव्य रूप में कलमबद्ध किया है। 'भाषा विभाग पंजाब' द्वारा प्रकाशित "पंथ प्रकाश" १३१९ पृष्ठों का विशाल तथा बेशकीमती ग्रंथ है।

विविध महान लेखकों द्वारा तीन गुरु साहिबान का जीवन-वृत्तांत आप पढ़ चुके हो। चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी का पावन जीवन-वृत्तांत "पंथ प्रकाश" में पन्ना ९९ से १०८ तक अलंकृत है। ज्ञानी जी की इस काव्य-रचना के भावों को सुधी पाठकों के समक्ष सही रूप से प्रस्तुत करने का उद्यम कर रही हूं:

संक्षिप्त जीवन परिचय : ज्ञानी गिआन सिंघ श्रेताओं से अनुनय-विनय करते हुए लिखते हैं कि इस अध्याय में मैं चौथे गुरु की जीवन-गाथा का वर्णन करने जा रहा हूं। समस्त श्रोता ध्यानपूर्वक प्रसन्न मुद्रा में श्रवण करें :

चौपई।

लौ पुर मैं रहि सोढी खत्री।
बिदत ठाकर हरि दास सुअत्री।
दया कौर पतनी तिस केरी।
पति ब्रता गुन गनै उजेरी।
रामदास सुत तिन के जयो।
सूरज सोढ बंस का भयो।
कातक वदी दूज सुभ जानव।
संमत पंदरां सै एकानव।

ज्ञानी जी के अनुसार कार्तिक माह के संवत् १५९१ को लाहौर शहर में सोढी वंश के खत्री (क्षत्रिय) श्री हरिदास के गृह में पतिव्रता तथा गुणों की खान दया कौर ने 'रामदास' पुत्र को जन्म दिया जो सोढी वंश में सूर्य की तरह उदीप्त हुआ और वे अति उदार वृत्ति एवं अत्यंत गुणों के मालिक थे।

श्री गुरु रामदास जी का बाल्यकाल : "पंथ प्रकाश" के अनुसार बचपन में ही श्री (गुरु) रामदास जी के सिर से माता-पिता का साया

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३

उठ गया और उनको ननिहाल बासरके ले जाया गया। वहां वे सुखपूर्वक रहते और घुंघणियां (उबले चने) बेच कर अपना गुजारा चलाते :

मात पिता परलोक सिधारे।
रहिओ नानके सुखी अपारे।
बासर के पिंड सोऊ रहावै।
बेच घुंघणी क्रित चलावै।

ज्ञानी गिआन सिंघ ने लिखा है कि बचपन में ही उनके माता-पिता का देहांत हो गया। जब उनकी नानी उन्हें अपने साथ गांव बासरके ले आईं तो वे ननिहाल में सुखपूर्वक रहने लगे, साथ ही उन्होंने वर्णित किया कि उन्हें घुंघणियां बेचकर जीवन-निर्वाह करना पड़ता था। समस्त विद्वानों इतिहासकारों ने उनका बचपन का नाम 'जेठा' लिखा है जिसका जिक्र "पंथ प्रकाश" में नहीं आया। साथ ही लगभग समस्त इतिहासकारों ने उनकी नानी जी की भी आर्थिक तौर पर दयनीय स्थिति का वर्णन किया है जिसका उल्लेख यहां नहीं हुआ।

गुरु-मिलाप एवं विवाह : ज्ञानी गिआन सिंघ के काव्यानुसार एक दिन श्री गुरु अमरदास जी और उनकी सुपत्नी के बीच वार्तालाप हो रहा था। गुरु साहिब ने फरमाया कि अब बीबी भानी हेतु कोई योग्य वर देखकर उसकी कुड़माई (सगाई) करनी चाहिए। इसी दौरान श्री (गुरु) रामदास जी सामने से आ रहे थे। माता रामो (राम कौर) जी ने कहा कि यह मेरे मन को अच्छा लगता है, बीबी भानी के लिए ऐसा सुंदर वर होना चाहिए। यह सुनकर श्री गुरु अमरदास जी बोले, ईश्वर भला करे और तुरंत सेवक को भेज कर श्री (गुरु) रामदास जी को अपने पास बुलवाया। नाम वगैरा पूछ कर, गुरु जी बोले, इस जैसा तो यही है और कोई नहीं। श्री (गुरु) रामदास जी की झोली में शगुन डाल दिया गया और बीबी भानी जी का विवाह श्री (गुरु) रामदास जी के साथ कर दिया। "पंथ प्रकाश" की पृष्ठ संख्या १०० पर इसे इस प्रकार काव्यबद्ध किया गया है :

इक दिन अमरदास जी खास।
दिजवर बोल बठाइओ पास।
कह्यो जाहु करहो कुड़माई।
भानी की सभ बिधि भलथाई।
रामदास था सनमुख आवत।
बोली रामो मम मन भावत।
ऐसो बालक सुंदर होई।
इहु सुन अमरदास ने गोई।
भली करै अब राम हमारा।
इम कहि बालक निकट हकारा।
नाम राम पुछ ऐस उचारो।
इस सम एही औरन बारो।
इस की झोली सगन पवायो।
बीबी भानी सैं परनाइओ।

श्री गुरु अमरदास जी का खडूर प्रस्थान: सन् १५९९ को फाल्गुन माह की पूर्णिमा पर श्री गुरु अमरदास जी खडूर साहिब जाकर श्री गुरु अंगद देव जी की सेवा में लीन हो गए और इस सेवा की बदौलत ही गुरगद्दी प्राप्त की। गुरगद्दी संभाल कर गोइंदवाल आ बसे :

अमरदास जी गोइंदवाल।
बसे जबै गुरता संभाल।

श्री गुरु रामदास जी को गुरगद्दी सौंपना : गोइंदवाल में श्री गुरु अमरदास जी ने अपने परिवार के साथ श्री (गुरु) रामदास जी को भी रखा, जहां बीबी भानी जी और श्री (गुरु) रामदास जी ने श्री गुरु अमरदास जी की बहुत सेवा की और इसी सेवा के फलस्वरूप संवत् १६२७ में गुरगद्दी प्राप्त की :

निज कुटंब सब तहां बसाइओ।

रामदास भी पास रखाइओ।
दंपति अमर देव की सेवा।
कर गुरता लीनी सुभ मेवा।
संमत सोला सै सताई।
रामदास गुरु गादी पाई।

अमृत-सरोवर का बनना : श्री गुरु रामदास जी ने 'रामदास नगर' बसाया, जिसका वर्णन ज्ञानी जी पिछले अध्याय में कर चुके हैं। वहीं श्री अमृतसर पवित्र तीर्थ था जो बहुत समय से आलोप था। श्री गुरु रामदास जी उसे अब प्रकट करना चाहते थे। उसे किस प्रकार प्रकट किया, उसकी रोचक कथा ज्ञानी गिआन सिंघ ने इस प्रकार वर्णित की है : "मद्र देस में पट्टी नामक गांव है। वहां राय दुनीचंद नाम का खत्री रहता था। उसकी पांच बेटियां थीं। एक दिन दुनीचंद ने अपनी बेटियों से प्रश्न किया कि तुम किसके भाग्य का खाती हो? चार बेटियों ने कहा कि हम पिता जी आपके भाग्य से खाती हैं। पांचवीं बेटी का जवाब था, मैं अपने भाग्य का खाती हूं। यह सुनकर दुनीचंद क्रोधित हो गया और इसी कारण से उसने उस बेटी की कोढ़ी (पिंगले) के साथ शादी कर दी। उसे ही पति परमेश्वर मान कर, टोकरी में डाल कर सिर पर उठा लिया। भिक्षा मांग कर उसे खिलाती और बचा हुआ स्वयं खाती, यथा :

मद्र देस मध पटीग्राम।
खत्री राइ दुनी चंद नाम। . . .
भोगत हौं जो लिखयो अलेख।
इह्हु सुन दुनी चंद रिस धार। . . .
भिच्छया कर तिस तईं छकावै।
पाछे सीत तांहि का पावे।

ज्ञानी जी के चिंतनानुसार उसकी सेवा की चर्चा सर्वत्र होने लगी। इसी दौरान वह अपने पति को सिर पर उठाए रामदास नगर (श्री अमृतसर) पहुंची। सरोवर के किनारे पति की टोकरी को रखकर स्वयं गुरु के लंगर में प्रसाद लेने चली गई। इस दौरान उसके पति ने देखा कि एक पोखर में कौए नहा कर हंस बन कर उड़ रहे हैं। कुष्ठी आश्चर्यचकित रह गया और तुरंत उसने (स्वयं भी) उस पोखर में स्नान किया। तत्काल ही वह निरोग हो गया। जब उसकी पत्नी वहां आई वह देख कर दंग रह गई। तभी उसके पति ने उस तीर्थ की महानता बतलाई। तभी दोनों श्री गुरु रामदास जी के समक्ष गए तथा अपनी सारी व्यथा सुनाई, यथा :

सरब देस मै चरचा चाली।
तिसकी सेवा होइ बिसाली।
इक दिन रामदासपुर आई।
अंम्रतसर तट ताहि टिकाई। . . .
काक न्हाइ हुइ कुसल सिधाए।
पिख कुसटी रहिगो बिसमाए। . . .
दोऊ स्री सतगुर ढिग गए।
बिरथा सगल सुनावत भए।

इस प्रकार घट-घट की जानने वाले श्री गुरु रामदास जी ने दोनों का बहुत सत्कार किया और वचन किए कि हे देवी, तुम्हारे पतिव्रता धर्म के कारण इसकी कंचन-सी काया हुई है। उस स्थान का नाम 'दुख भंजनी' रख दिया। इस प्रकार तीर्थ की महिमा बयान की तथा साथ ही शबद उच्चारण किया :

अंम्रित सरु सतिगुरु सतिवादी जितु नातै कऊआ हंसु होहै ॥
नानक धनु धंनु वडे वडभागी जिन्ह गुरमति नामु रिदै मलु धोहै ॥ *(पन्ना ४९३)*

ज्ञानी जी के अनुसार श्री गुरु रामदास जी ने ऐसे कितने ही उपकार किए जिसके फलस्वरूप हजारों लोग जन्म-मरण के दुखों से

मुक्त हो गए।

ऐसे ऐसे और बहु कीने गुरु उपकार।
लोग हजारों तर गए जनम मरन दुखटार।

श्रद्धालुओं का देश-देशांतरों से गुरु-चरणों में आना : आगे 'त्रिभंगी छंद' में ज्ञानी गिआन सिंघ ने दर्शनार्थियों का प्रेम-भाव एवं श्री गुरु रामदास जी का यशोगान बड़े सुंदर शब्दों में अभिव्यक्त किया है : "दूर-दूर से सिक्ख अनुपम भेंटें लेकर गुरु-चरणों में आते। दर्शन करके उनके हृदय पुलकित हो जाते। गुरु-उपदेश लेकर उनका अज्ञानता का अंधेरा मिट जाता, उनके समस्त कलेश-संताप मिट जाते। मनोवांछित फल प्राप्त करके भाव-विभोर प्रसन्न हृदयों से घर लौटते। इस प्रकार गुरु-घर में श्रद्धालुओं की भीड़ लगी रहती। गुरदेव नित्य सभा लगाते, संगीत की लहरियां उठतीं, रबाबी आकर कीर्तन करते, अनहद शबद-ध्वनियां गूंजतीं। मुनि-जन सुंदर शबदों का गायन करते। गुरु-घर में (आत्मिक भोजन के साथ) शरीर के लिए भी भोजन (लंगर) सबको समान रूप से वितरित किया जाता। जो जैसी भावना रखता उसे वैसे ही फल की प्राप्ति होती। गुरु पातशाह स्वयं अमृतमयी बाणी का उच्चारण करते। जो संगत चढ़ावा (भेंट) चढ़ाती उस चढ़त को श्री गुरु रामदास जी नित्य परोपकार के कार्यों में खर्च कर देते। गुरबाणी सुन कर सबके विकार दूर होते, उनके हृदयों में विगास आनंद की अनुभूति बनी रहती। गुरु ऐसे-ऐसे कौतुक करते जो परम, पवित्र और सुखदायी होते। इस प्रकार कृपालु गुरदेव ने अनेकों सिक्खों को इस संसार रूपी भवसागर से पार उतारा, यथा :

बहु संगत आवत बित्त चढ़ावत नित्तै लगावत गुरु सोई। . . .
इम सिख अपारे सतगुरु भारे भव निधि तारे करपारे।

श्री गुरु अरजन देव जी को लाहौर भेजना: गुरु नानक-घर की मर्यादानुसार गुरगद्दी 'सेवादार' की वस्तु है। जो तख्त के लायक है उसे ही तख्त पर बिठाया गया है, न उम्र का तकाजा है न ही जाति या रिश्ते का, अत: श्री गुरु रामदास जी ने भी गुरगद्दी सबसे योग्य सपुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को बख्शी थी। यह बख्शिश श्री गुरु अरजन देव जी को कैसे प्राप्त हुई, उसे काव्य-शैली में सहज अभिव्यक्त करते हुए ज्ञानी जी ने श्री गुरु अरजन देव जी के आज्ञाकारी स्वभाव को मूर्त रूप देते हुए पारिवारिक सम्बंधों का भी जिक्र किया है कि किस प्रकार एक बार श्री गुरु रामदास जी का (रिश्ते में) एक भाई, जो गुरु जी का बड़ा श्रद्धालु भी था, गुरु जी के समक्ष आया और लाहौर, अपने पुत्र के विवाह में सम्मिलित होने हेतु गुरु जी से विनती की कि हे सुखों के दाता, आप चलें और लाहौर की धरती को पवित्र करें। तब गुरु जी ने वचन किये कि कार्य की व्यस्तता के कारण हमारा आना नहीं हो सकेगा:

उन अरज गुजारी गुरू अगारी चलयो मुरारी लाहौरैं।
ममसुत को बयाहू है उतसाहू आपतहाहू सिर मौरैं।
चलीए सुख दावन करीए पावन भूमि सुहावन सोइ सही।
तब गुरु वखाना हमरा जाना बनै न आना कोइ कही।

आगे ज्ञानी गिआन सिंघ 'दोहरा' में विनती करते हुए उस आगंतुक के हृदय के भावों को सुंदर शब्दों में अनुनय-विनय करते हुए दर्शाते हैं कि हे गुरदेव, अगर आप नहीं चल सकते हो अपने किसी पुत्र को हमारे साथ भेज दीजिए, यथा:

पुना सहारी जोर कर कहयो गुरू के पास।
जेकर आप न चलत हो पठो एक सुत खास।

प्रिथीचंद का गुरु-आदेश की अवज्ञा करना: आगे 'तोटक छंद' में ज्ञानी गिआन सिंघ प्रिथीचंद और श्री गुरु रामदास जी के बीच हुए वार्तालाप को अभिव्यक्ति देते हुए लिखते हैं कि प्रिथीचंद को गुरु जी ने कहा, तुम इनके साथ लाहौर जाओ। तब प्रिथीचंद ने कोरा जवाब दे दिया और कहा कि हमारे वहां जाने से यहां का कामकाज नहीं चलेगा, यथा :

तब प्रिथी चंद को गुरू कहा। . . .
हमरे तहि गए न काम चले।

श्री गुरु अरजन देव जी का कसौटी पर खरा उतरना : ज्ञानी जी की काव्यरचनानुसार तब श्री गुरु अरजन देव जी को वहां भेजने का आदेश हुआ और साथ परख की कसौटी (जो कि गुरु-घर की मर्यादा रही है) के अनुसार वचन किया कि जब तक हम न बुलायें तुम यहां मत आना। गुरु-वचनों को हितकारी मान कर श्री गुरु अरजन देव जी उनके साथ लाहौर चले गए। श्री (गुरु) अरजन देव जी से उस विवाह वाले घर में, जहां और भी बहुत सगे-सम्बंधी आए हुए थे, दिन-रात उनसे मिलने हेतु आते, अनेक तरह से स्नेह करते, श्री (गुरु) अरजन देव जी से हास-परिहास करते, लेकिन गुरु जी कुछ भी भला-बुरा न कहते, वे अपने ही ध्यान में स्थिरचित्त रहते, यथा :

तब गुरु अरजन को पठयो तहा।
हित परखन के इस भांत कहा।
हमरे बुलवाए बिन कबही।
तुम आवन आपहि करयो नहीं। . . .
मिल बालक हास बिलास ठटैं।
बहु हसन रसन की बात रटैं।
गुर भला बुरा किछु नाहि कहैं।
निज ध्यान विखै थिर चाहि रहैं।

पिता-गुरु के दर्शन की तीव्र अभिलाषा : लाहौर में गुरु-पिता के वचनानुसार रहते हुए नित्यप्रति उस संदेश का बेसब्री से इंतजार करते हुए श्री (गुरु) अरजन देव जी पिता जी के पास पहुंचने की युक्ति सोचते रहते हैं। विरही हृदय का मार्मिक चित्रण ज्ञानी गिआन सिंघ ने 'गीआ छंद' में वर्णित किया है कि किस प्रकार श्री गुरु अरजन देव जी का तन तो लाहौर में है लेकिन मन गुरु-पिता के पास है। हर दिन इसी आस में व्यतीत करते हैं कि पिता-गुरु मुझे कब बुलाएंगे। मन पिता गुरदेव से मिलने को तड़प रहा है, नयनों से जल छलक रहा है, हर रोज छत पर चढ़ कर देखते हैं कि कोई संदेशवाहक आए क्योंकि बिना गुरु की आज्ञा से वे स्वयं वहां जा भी तो नहीं सकते। तब उन्होंने एक चिट्ठी लिखी।

आगे ज्ञानी जी इसे काव्यबद्ध करते हुए लिखते हैं कि उन्होंने चिट्ठी लिख कर कुशलतापूर्वक श्री गुरु रामदास जी के पास भिजवा दी, लेकिन कई चिट्ठियां प्रिथीचंद के हाथ लग गईं और जब उसने उन्हें पढ़ा तो कुटिलता के कारण उन्हें अपने पास ही रख लिया, श्री गुरु रामदास जी को नहीं दिया। कितने ही दिन बीत गए और कोई जवाब न आया। श्री (गुरु) अरजन देव जी ने दूसरी चिट्ठी लिखी।

ज्ञानी जी के चिंतनानुसार तथा लगभग सभी इतिहासकारों ने इस तथ्य को उजागर किया है कि दूसरी चिट्ठी भी प्रिथीचंद के हाथ आ गई और श्री गुरु रामदास जी तक नहीं पहुंची। ज्ञानी जी ने बड़ी बारीकी से प्रिथीचंद के दुष्ट इरादों तथा कूटनीतिक चालों को काव्यबद्ध किया है कि किस प्रकार प्रिथीचंद यह सोचता है कि अगर यह प्रेम-पाती गुरु-पिता ने

सुन ली तो तत्काल श्री (गुरु) अरजन देव जी को बुलवा लेंगे और उसे गुरगद्दी सौंप देंगे, तब मेरा कोई जोर नहीं चलेगा, मैं तो खाली हाथ रह जाऊंगा, यथा :

यह पठी चिठी पुना गुर ढिग लई प्रिथीए तैसहै।
नहि गुरू चत्रथको दिखाई पिरथीए रख दवैस है। . . .
पुन पेख कै अति प्रेम तां का गुर गुरिआई देवहीं।
नहि चलैगो फिर जोर मेरा रहों खाली एवहीं।

लेकिन ईश्वर के विधान को कौन मिटा सकता है? श्री (गुरु) अरजन देव जी ने एक और चिट्ठी लिख कर प्रेषित की। वह विशेष रूप से श्री गुरु रामदास जी के कर-कमलों में देने की हिदायत की गई, जिसमें हृदय की विह्वलता छलक रही थी।

आगे 'त्रिभंगी छंद' में ज्ञानी जी लिखते हैं कि यह चिट्ठी लिख कर सिक्ख को अच्छी तरह समझा-बुझा कर भेजा कि यह पिता गुरदेव के सिवाय किसी को भी नहीं देनी। सिक्ख ने वैसा ही किया। गुरदेव के हाथों में वह चिट्ठी दी जिसे गुरु जी ने प्रेमपूर्वक लिया। श्री (गुरु) अरजन देव जी की चिट्ठी पाकर गुरु जी अत्यंत प्रसन्न हुए। यह देखकर कि यह तीसरी चिट्ठी है, इससे पहले वाली दो चिट्ठियां किसको दी हैं? तब सिक्ख ने जवाब दिया कि वे तो प्रिथीचंद ने ले ली थीं। तभी प्रिथीचंद को बुलवाकर पूछा कि तुम्हारे पास तुम्हारे भाई श्री (गुरु) अरजन देव जी की कोई चिट्ठी आई थी? कपट से भरे हृदय वाला प्रिथीचंद सत्य से डोल कर झूठ बोलता है कि मेरे पास तो कोई चिट्ठी नहीं आई। आपसे जरूर किसी ने झूठ कहा है। आप तो जगत के स्वामी हो, आप झूठ नहीं बोल रहे, पर कोई हुंडी भारी रकम थी जो मैंने मार ली, जिसके कारण मुझे प्रताड़ित कर रहे हो, गुस्से से देख रहे हो। आपने मुझ पर चोरी का इल्जाम लगा दिया :

इह पौड़ी लिख कै दैकर सिख कै पठयो सिख कै बहु भाती।
नहि औरे दयो गुर ढिग जयो तिंह पकरयो यहि पाती। . . .
हम कार तुमारी निस दिन भारी करहैं सारी जग हेरैं।
यहि दई वडाई आखर आई चोरी लाई सिर मेरै।

प्रिथीचंद की पोल खुलना : प्रिथीचंद की कुटिल चालों का किस तरह पर्दाफाश हुआ, ज्ञानी गिआन सिंघ उसका जिक्र करते हुए लिखते हैं कि श्री गुरु रामदास जी ने ध्यानपूर्वक प्रिथीचंद की जेब में रखी चिट्ठी को निहार लिया। अंतरयामी गुरु जी ने जान लिया कि यह चोर है, स्वयं को बड़ा चतुर समझता है और ढीठताई से झगड़ता हुआ उल्टा हमें ही दबाने की कोशिश करता है। तब गुरु जी ने एक सेवक को उसकी जेब की तलाशी लेने को कहा। तब उसकी जेब से चिट्ठी निकल आई। प्रिथीचंद ने फिर गुरु साहिब से कटु वचन बोले। गुरु जी ने रोष में आकर उसे तत्काल वहां से जाने को आदेशित किया, "पिता के साथ झगड़ने का तुम्हें महा पाप लगेगा। कपटी और मक्कार प्रवृत्ति के तुम यहां नहीं रह सकते।" यह सब सुनकर कड़वे वचन बोलता हुआ प्रिथीचंद वहां से चला गया:

गुर रामदास धर धयान पिखयो तब चीरी उभै निहार लई।
वहि प्रिथीचंद की जेब बिखै थी तहिठां भल मौजूद पई। . . .
पुन बैन कठोर पिरथीए केतक गुर को कहे अवाच तबै।

सुन रामदास गुर कोप होइ कर कहयो जाहु मुझ ढिगों अबै।
पिता संग झगरन तै हवै है पाप तुझै संताप महां।
कपटी कूर कलापी मीणे पापी तुम ना रहो इहां।
या बिधि सुन कर तबै प्रिथीआ कहि कुबैन निज धाम गयो।

श्री (गुरु) अरजन देव जी को वापिस बुलाना तथा गुरिआई बख्शना : ज्ञानी जी आगे वर्णन करते हैं कि श्री गुरु रामदास जी ने श्री (गुरु) अरजन देव जी को वापस बुला लिया और फिर बहुत दिनों तक श्री (गुरु) अरजन देव जी ने श्री गुरु रामदास जी की सेवा की। वे पूर्णतया पिता-गुरु के वचनों की पालना करते हुए हमेशा गुरु-चरणों में रहते, ईश्वर रूप निर्मल हृदय गुरदेव के मन के विपरीत कोई भी कार्य न करते। जितने गुण ग्रंथों में वर्णित हैं वे समस्त गुण श्री (गुरु) अरजन देव जी में परिपूर्ण थे। बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी, भाई सालो जी आदि अनेक गुरसिक्ख कितनी बार श्री गुरु रामदास जी से इस संदर्भ में विचार-विमर्श करते कि अब श्री (गुरु) अरजन देव जी सब तरह से गुरगद्दी के योग्य हो गए हैं, अत: गुरु नानक-घर की परंपरा के अनुसार श्री गुरु रामदास जी ने श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरिआई बख्श कर सारा कार्य-भार उन्हें सौंप दिया। समर्थ गुरु जी ने बख्शिश का हाथ उनके शीश पर रख कर अपनी ज्योति उनमें टिका कर श्री (गुरु) अरजन देव जी को पूर्णतया समर्थता बख्शिश की। नौ निद्धियां-अठारह सिद्धियां उन्हें भली-भांति समर्पित कर दीं। गुरु-घर के समस्त व्यवहार सहजता से उनके पास चले गए :

पुन लहौर ते अरजन तांई रामदास गुर बोल लयो।
दिन केतक फिर गुर रामदास की सेवा अरजन देव करी। . . .
अब ठीक भयो गुर गादी लायक अरजन सभ बिध हम लखयो।
पुन रामदास सतगुर ने भी अधिकारी अरजन नीक पिखयो। . . .
नव निध रिध दस सिध दई समरिध करयो सभ बिध भले।
बिवहार जिते गुर के घर के परयास बिना सभ जाहि चले।

आगे ज्ञानी जी 'दोहरा' में श्री गुरु रामदास जी के वचनों से शबद की चौथी पउड़ी उच्चारण करने का जिक्र करते हैं :

चत्रथ गुर की आगिआ पुन पंचम गुर पाइ।
चौथी पौड़ी सबद की उचरी तब इस भाइ।
"भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥
प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ ॥
सेव करी पलु चसा न विछुड़ा जन नानक दास तुमारे जीउ ॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई जन नानक दास तुमारे जीउ ॥"

श्री गुरु रामदास जी गुरगद्दी श्री गुरु अरजन देव जी को बख्श कर गोइंदवाल में ज्योति-जोत समा गए, अनेकों सिक्खों का उद्धार कर सचखंड में जा निवास किया :

दै गुरता गुर अरजनै रामदास गुर खास। . . .
अवसर पाइ धिआइ इहु थिरिओ गुरै जुहार।

इस प्रकार "पंथ प्रकाश" में ज्ञानी गिआन सिंघ द्वारा विरचित चतुर्थ गुरु श्री गुरु रामदास जी का जीवन-प्रसंग सम्पूर्ण होता है :

इति स्री गुर पंथ परकाशे गिआन सिंघ विरचिते चतरथ गुरू का परसंग वरननं नाम त्रै दसमो बिसराम।

"बंसावलीनामा दसां पातशाहीआं का" में प्रस्तुत एवं चित्रित श्री गुरु रामदास जी का जीवन

-बीबी अमरजीत कौर*

"बंसावलीनामा दसां पातशाहीआं का" भाई केसर सिंघ छिब्बर की महत्वपूर्ण रचना है। यह पुस्तक सिक्ख धर्म के इतिहास को जानने का एक बढ़िया स्रोत है। जहां तक चौथी पातशाही साहिब श्री गुरु रामदास जी के जीवन और व्यक्तित्व को प्रस्तुत तथा चित्रित करने का संदर्भ है, भाई केसर सिंघ ने चौपई छंद के ३७ पद्यों में गुरु साहिब के जीवन एवं उनके व्यक्तित्व का बहुत सुंदर चित्रण किया है। कवि ने सर्वप्रथम साहिब श्री गुरु रामदास जी की वंशावली भाव उनके पूर्वजों के बारे में जानकारी दी है। बताया गया है कि संवत् १५३१ को लाहौर के रहने वाले श्री गुरदिआल सोढी के घर श्री ठाकुर दास सोढी का जन्म हुआ। श्री ठाकुर दास सोढी श्री हरिदास सोढी के पिता और श्री गुरु रामदास जी के दादा जी थे। कवि श्री गुरु रामदास जी के जन्म का समय २० कार्तिक, संवत् १५८७ बताता है जो कि अन्य ऐतिहासिक स्रोतों से मेल नहीं खाता। वह गुरु साहिब के भाई श्री हरदिआल सोढी और गुरु साहिब की बहिन रामदासी का भी जिक्र करता है। गुरु साहिब के जन्म के बारे में वह इस प्रकार लिखता है :

संमत पंद्रा सै सतासी कहीऐ।
कतिक महीने दिन बीस लहीऐ।
क्रिशना पक्ख चार घटिका दिन चढ़े।
नछत्र चित्रा दिज भना पत्री पड़े।४।

श्री गुरु रामदास जी (भाई जेठा जी) की सगाई श्री गुरु अमरदास जी की सपुत्री बीबी भानी जी के साथ श्री गोइंदवाल साहिब में हुई। विवाह के बाद भाई जेठा जी गुरु-चरणों में रहकर ही सेवा में समर्पित होकर लगे रहे। आपने तन-मन से गुरु-घर की सेवा की, कभी भी अपना रिश्ता न प्रकट किया, सदैव गुरु-घर के प्रेमी सिक्ख के रूप में जीवन बिताया। श्री गुरु अमरदास जी की शरण में रहते हुए ही आपके घर संवत् १६०५ आश्विन के महीने प्रिथीचंद का जन्म हुआ। आषाड़ के महीने संवत् १६०८ को महादेव ने और १८ वैसाख संवत् १६१० में श्री (गुरु) अरजन देव जी ने जन्म लिया।

संवत् १६३१ में श्री गुरु अमरदास जी ज्योति-जोत समा गए। श्री गुरु अमरदास जी का अंतिम संस्कार ब्यास नदी के किनारे किया गया। सभी कर्म श्री मोहरी जी के हाथों कराये गए, जैसे कि :

सोलां सै इकत्री गुरू अमरदास जी सवारा कर गए।
बिआसा नदी किनारे सिसकार करते भए।
मोहरी जी करमां परि बैठे।
दिन तेरां सभ रहे इकठे।१६।

श्री गुरु अमरदास जी गुरगद्दी की जिम्मेदारी श्री रामदास जी को दे गए थे। गुरगद्दी पर विराजमान होने के बाद गुरु जी ने कई कार्यों को सम्पूर्ण किया। भाई केसर सिंघ के अनुसार श्री गुरु रामदास जी संवत् १६३३ में अमृतसर

*सहायक रीसर्च स्कालर, सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर। मो ९८५५५-१९७१९

आ गये थे और यहां आकर आपने निर्माण का कार्य आरंभ करा लिया था:

संमत सोलां सै तेते जब गए।
तब गुरू रामदास जी अंम्रितसर आवत भए।
संगति नाल लै के साहिब आए।
सद्दे कुलाल, आवे इट्टां दे चढ़वाए।१९।

गुरु साहिब ने श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण-कार्य के साथ-साथ कई जातियों और व्यवसायों के लोगों को बुला कर यहां नगर बसाया, जिसका नाम 'गुरू का चक्क' रखा गया:

तटि नगरी करन का कीआ उपाउ।
'चक्क गुरू का' धरिआ नाउ।
कोटु उसारि विच घर बणवाए।
सद्दे खत्री ते विच वसाए।

गुरु साहिब ने व्यापारी और अन्य व्यवसायों वाले लोगों को गुरू के चक्क (अमृतसर) में आकर यहां निवास कर किरत करने का उपदेश दिया और बाद में कुछ समय के लिए आप जी स्वयं भी यहां आकर रहने लग गए। भाई केसर सिंघ के अनुसार श्री गुरु रामदास जी सात वर्ष गुरिआई करके संवत् १६३८ में ज्योति-जोत समा गए :

सत्त बरस गुरिआई गुरू रामदास जी करि जस लीते।
संमत सोलां सै अठत्री भए।
तब गुरु रामदास जी भी दिवपुरी नूं गए।२६।

ज्योति-जोत समाने से पूर्व श्री गुरु रामदास जी ने गुरगद्दी श्री (गुरु) अरजन देव जी को सौंप दी, जिस कारण प्रिथीचंद ने काफी विवाद भी किया था। श्री गुरु रामदास जी ने उसे समझाया कि (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी की बख्शिश उनके अपने नाना श्री गुरु अमरदास जी की ओर से हुई है, उनके वचन झुठलाये नहीं जा सकते। तुम सब परस्पर प्यार से रहो और गुरु के वचन मानो। प्रिथीए ने उस समय तो पिता की बात सुन ली, परंतु वह अपने मन की मैल दूर न कर सका। भादों सुदी तीन, शुक्रवार को गुरु साहिब का अंतिम संस्कार किया गया :

भाद्रों सुदी त्रितीआ कीता सिसकारु।
नदी किनारे शुकरवार। . . .।३४।

इस प्रकार भाई केसर सिंघ श्री गुरु रामदास जी के जीवन-विवरण बहुत संक्षेप में प्रस्तुत करता है। इस रचना में से श्री गुरु रामदास जी के व्यक्तित्व के कई पक्ष उभर कर सामने आते हैं। गुरु साहिब अपने बाल्यकाल से ही बहुत ऊंचे व निर्मल व्यक्तित्व के धारक थे। आप नम्रता के पुंज थे। गुरु-घर के जमाई होने पर भी आप में तनिक-सा अहंकार न था। आप सदैव गुरु साहिब के चरणों में सेवकों की भांति रहे :

साक न जाता, हिरदे रखिआ सेवकी भाउ।
चंचलताई चतुराई न खेडण हस्सण दा चाउ।
प्रीत चरनां दी सेवकी रखी।
बिना सतिगुरू होर न कोई देखण अक्खीं।७।

आप अध्यात्म के ऊंचे मंडलों में विचरण करते थे। इसीलिए आप ने तन-मन से सेवा करके श्री अमृतसर का निर्माण किया जो कि सदा-सदा के लिए मानवता को सुख देता रहेगा। इस नगर में विभिन्न तरह के व्यवसायियों को बसा कर आपने सच्ची व निर्मल किरत-कमाई का संदेश दिया। भाई केसर सिंघ के अनुसार गुरु साहिब ने अमृतसर वासियों को इस प्रकार निर्मल वचन किये :

बचन कीता, चउका पाइ हट्टी बहो।
जो चाहो सो सतिगुर ते लहो।२४।
दुइ नाम तीरथ दे पए संसारि।
कोई कहो रामदास दे पए संसारि।
कोई कहे रामदास सर कोई कहे अमरसर

उचारि।२५।

अमृतसर (गुरू का चक्क) नगर का बसाना आपके व्यक्तित्व के एक अन्य पक्ष को प्रस्तुत करता है, जो है आपका सामाजिक निर्माण-कर्ता होना। आपने यह नगर बसाकर कई लोगों को रोजगार दिया और देश की सामाजिक तथा आर्थिक प्रगति में भरपूर योगदान डाला।

आप गुरु के हुक्म के धारक और प्रभु की रजा में रहने वाले थे। आप जानते थे कि श्री (गुरु) अरजन देव जी ही गुरिआई के योग्य अधिकारी हैं। फिर भी इस पक्ष को बंसावलीनामे का कर्त्ता बताता है कि श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी मिलने का उनके नाना जी श्री गुरु अमरदास जी ने ही वचन किया हुआ था और श्री गुरु रामदास जी उनके इस हुक्म को पीछे नहीं डाल सकते थे तथा उन्होंने बड़े पुत्रों को छोड़कर श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी सौंप दी:

गुरू रामदास समें चलाणे दे बचन इह कीता।
जो बचन वड्डिआं दा मंने, तिने ही जीता।
अरजन है निक्कड़ मैं भी जाणा।
तू है वड्डा बुधिवान सिआणा।२९।
इस नूं मै नहीं दिती गुरिआई।
इह थापी इस नूं नाने है लाई।
मैं उसदा कीता मेट नहीं सकिआ।
इस वासते मैं है इसनूं टिकिआ।३०।

इस प्रकार श्री गुरु रामदास जी नम्रता के पुंज, सहन्शीलता के धारक, समाज के अच्छे निर्माता, ऊंचे एवं निर्मल आध्यात्मिक व्यक्तित्व के स्वामी थे। आपने गुरु-घर के जमाई (दामाद) होने के बावजूद भी सेवक वाला रिश्ता रखा और गुरु की पदवी प्राप्त करके भी नम्र स्वभाव के साथ सबको सम्मान व सत्कार बख्शा। आपने श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण करके अकेली सिक्ख कौम अथवा मात्र सिक्ख पंथ को ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया को मार्ग-दर्शन का केंद्र बख्श दिया। सिक्खी के प्रचार एवं प्रसार में आपका योगदान अत्यधिक है तथा कोई भी उपमा आपके व्यक्तित्व का वर्णन करने के लिए असक्षम है।

"तवारीख गुरू खालसा" कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में *(पृष्ठ २८ का शेष)*

प्रिथीचंद को विवाह-अवसर पर लाहौर जाने के लिए कहा, मगर उसने इंकार कर दिया। जब यही बात उन्होंने अपने सबसे छोटे सपुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को कही तो उन्होंने इसे गुरु-आदेश मानते हुए तुरंत स्वीकार कर लिया। लाहौर जाने से पहले उन्होंने श्री (गुरु) अरजन देव जी को यह भी कह दिया कि विवाह के बाद वे वहीं रहकर गुरमति का प्रचार करें और जब तक वापिस न बुलाया जाए वहीं पर निवास करें। विवाह हो जाने के बाद गुरु-आदेश के अनुसार श्री (गुरु) अरजन देव जी कुछ समय वहीं टिक गए और गुरमति प्रचार की सेवा निभाने लगे। जब कुछ समय बीत गया और श्री गुरु रामदास जी ने उन्हें वापस न बुलाया तो लेखक बताता है कि श्री (गुरु) अरजन देव जी ने गुरु-दर्शन के लिए एक के बाद एक चिट्ठी लिखकर अपने मन की इच्छा जाहिर की जो कि प्रिथीचंद छुपा लेता था। इस तरह उसने (गुरु) अरजन देव जी को बहुत समय अमृतसर आने से रोके रखा। जब इस बात की जानकारी श्री गुरु रामदास जी को मिली तो वे प्रिथीचंद से बहुत नाराज हुए और आखिर में उन्होंने श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी के योग्य जानकर यह सेवा उन्हें सौंप दी।

"गुर कीरत प्रकाश" कृत कवि वीर सिंघ बल में श्री गुरु रामदास जी सम्बंधी विवरण

-स. सतविंदर सिंघ फूलपुर*

कवि वीर सिंघ बल ने "गुर कीरत प्रकाश" में दस गुरु साहिबान के चरित्रों को संक्षिप्त चरित्र-शैली में बयान किया है। कवि ने इन चरित्रों में गुरु साहिबान के जीवन के उपलक्ष्य में कुछ चुनिंदा परंतु महत्वपूर्ण घटनाओं को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार यह रचना दस गुरु साहिबान के चरित्रों का एक लघु संकलन है। कुल २१९१ पदों की इस रचना को कवि ने दस हुलासों (उलास का तद्भव रूप, गुरु साहिबान के चमत्कारी जीवन का पर्व या कांड) में विभाजित किया है।

इस रचना में कवि ने पंद्रह छंदों का प्रयोग किया--दोहरा, सोरठा, सवैया, कबित्त, चोपई, भुजंग प्रयात, गीआ मालती, अड़िल, संख नारी, छपै, सिरखंडी, संकर, नराज, तौमर और तोटक। इस रचना की प्रधान भाषा ब्रज है परंतु इसमें अरबी और फारसी के अंश भी विद्यमान हैं। इस रचना के चौथे हुलास में कवि ने १५३ पदों में श्री गुरु रामदास जी के जीवन-चरित्रों का वर्णन इस प्रकार किया है:

१. श्री अमृतसर की स्थापना करना।
२. श्री अमृतसर कई वर्ष व्यतीत करने के उपरांत लाहौर जाना।
३. गोरख तथा भरथरी की साखी में गुरु के नाम पर सिक्ख के त्याग की भावना को उत्तम बताना।
४. हरदास राम को वेश्या से बचाना।
५. भाई सालो जी का श्री गुरु रामदास जी को मिलना तथा वर प्राप्त करना।
६. श्री गुरु अरजन देव जी का लाहौर से प्रभु-स्वरूप पिता को वैराग्य भरी चिट्ठियां लिखना।
७. श्री गुरु रामदास जी का उनको लाहौर से श्री अमृतसर बुलाना।
८. श्री गुरु अरजन देव जी को गुरगद्दी बख्शना और बाबा बुड्ढा जी द्वारा गुरिआई की रस्म अदा करना।

तीसरे हुलास में १५२ से १५९ पदों में कवि ने श्री गुरु अमरदास जी द्वारा गुरिआई श्री गुरु रामदास जी को सौंपने का वृत्तांत प्रस्तुत किया है। कवि के अनुसार श्री गुरु अमरदास जी ने (गुरु) रामदास जी को गुरिआई की रस्म अदा करने के लिए बाबा बुड्ढा जी को बुलवाया और गुरिआई की रस्म अदा करने के लिए कहा:

गुर तां समै रामदास बुड्ढा लइआ बोल हजूर।
कहिआ अजु स्री रामदास जू के देहु तिलक जरूर।
जिउं पातशाही तखत बैठे तिउं करो सभ साज।
गुर राज गादी दीजीए रामदास जू करै राज।
(३, १५४)

श्री (गुरु) रामदास जी को गुरिआई बख्श कर श्री गुरु अमरदास जी ने स्वयं माथा टेका और अपने सपुत्र बाबा मोहरी को श्री गुरु रामदास जी के चरणों पर झुकाया :

गुर राज गद्दी बखश तब रामदास जू गुरू थाप।
निज दै गुराई तां समै आनिन होए आप।
सुतु मोहरी ढिग बोल गुर रामदास पैरीं पाइ।
(३, १५७)

*सहायक रीसर्च स्कालर, सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर, मो : ९९१४४-१९४८४

श्री गुरु अमरदास जी ने गुरिआई बख्शने के बाद श्री गुरु रामदास जी को 'गुरु का चक्क' बसाने का वर दिया :

कहिआ बंधि लै रामदास वरु गुर चक्क सों कर चोंप। (३, १५८)

रामदासपुर/श्री अमृतसर नगर बसाना : श्री गुरु अमरदास जी की आज्ञा मानकर श्री गुरु रामदास जी ने आनंददायक अमृत-सरोवर का निर्माण कराया तथा नगर बसाया। इस पावन स्थान का नाम 'रामदासपुर' रखा। बाद में श्री गुरु अमरदास जी के नाम पर इसका नाम 'अमरसर' (अमृतसर) रखा:

आ उतरे तद सुधासर साजिआ आप अभरामु।
रामदास गुर धरिआ तब रामदासपुर नामु। (४,४)

तब गुर मंत्र बीचार मन रामदास गुण धाम।
अमरदास गुर नाम धर धारिआ अम्रसर नाम। (४,६)

सरोवर को वर देना : श्री गुरु रामदास जी ने अमृत-सरोवर तैयार करवा कर वर दिया कि जो इस पावन सरोवर में स्नान करेगा, उसका जन्म-मरण काटा जाएगा :

रामदास गुर सुधासर बरु दीना तिह काल।
अंम्रितसर मज्जन करे परै ना जम कै जाल। (४, १५)

कवि श्री गुरु रामदास जी के दरबार की उपमा करता हुआ लिखता है कि देव, दानवों, शाह-सुलतानों और सारे जहान के दरबारों में से कोई भी दरबार श्री गुरु रामदास जी के दरबार जैसा नहीं है जहां आठों पहर परमेश्वर की स्तुति की जाती है :

देव दानवान के न साह सुलतान के,
जहान मै न आन धाम ऐसे अभराम है।
गुरू रामदास के अवास मै प्रकाश रही,
कीरत क्रतार जी की सदा आछो जाम है। (४, २१)

श्री गुरु रामदास जी रामदासपुर विराज रहे थे। गुरु के दरबार में लोह लंगर अटूट चलते हैं। जो भी साधु, संत, गुरसिक्ख गुरु जी के दर्शनों के लिए आते हैं, सभी गुरु के लंगर में से परशादा छक कर गुरु-घर की खुशियां प्राप्त करते हैं :

लोह लंगर गुर दीने साज।
रामदासपुर कहे बिराज।
साध संत गुर सिख जु आवै।
सभु प्रसादु गुर लंगर पावै। (४, ३६)

लाहौर जाना : कई दिन श्री अमृतसर व्यतीत करने के पश्चात श्री गुरु रामदास जी एक दिन प्रिथीचंद और श्री (गुरु) अरजन देव जी को साथ लेकर लाहौर की ओर चल पड़े। गुरु जी घोड़े, हाथी, पिआदे, ऊंठ आदि साथ लेकर रावी के नजदीक अपने व्यक्तिगत घर में जा विराजे। सभी रिश्तेदार खुशी से आ मिले। दूर-दूर से सिक्ख संगत गुरु जी का आगमन सुनकर आने लग गई। गुरु जी के दरबार में सिक्ख कीर्तन करने लग गए :

चौपई।

कितक दिवस सुरसुधा बीताए।
पुन स्री गुर लाहौर सिधाए।
प्रिथी समों स्री अरजन संगा।
लइयो संग रिपुदेव अनंगा। (४, ३७)
बजे निशान चड़ी सभी सैना।
गज अरूढ गुरु करुणा ऐना।
लौपुर को तब चले सिधाइ।
चतुरंग नसंग चमूं सुहाइ। (४, ३८)
सीता सुत पुर आए जबरी।
ऐरावती तीर गए तब ही।

सरता तट सभ चमूं उतारी।
प्रवेस कीआ गुरू मुरारी। *(४, ३९)*
निज अंदर गुर आइ बिराजे।
सिक्ख सेवक स्री गुर ढिग छाजे।
मिलियो सु बंसु सरब सुखदाई।
देस देस सुण संगत आई। *(४, ४०)*
पढै सबद सिख साज बजावै।
कीरतन करै राम गुन गावै।

गोरख तथा भरथरी की साखी में गुरु के नाम पर सिक्ख के त्याग की भावना को उत्तम बताना : एक दिन दरबार में किसी ने भरथरी की बात की कि जब उसने गोरख के दर्शन किये तो उसने राज-पाट का मोह त्याग दिया। वह अठारह सौ रानियां, हाथी, रथ आदि सब दुनियावी सुख-भोग त्याग कर भरथरी की शरण में आ गया, परंतु अब कोई भी गुरु का सिक्ख भरथरी राजा जैसा गुरु-प्रेमी नहीं है :

एक दिवस साखी इह भई।
साख कहूं भरथ्री की दई। (४१)
जब गोरख का दरसनु कीनो।
न्रिप तज मोहु राज को दीनो।
सहंस अठारां तिआगी दारा।
राज रथ बाजी भजे अपारा। (४२)
अब गुर सिक्ख नही कोऊ ऐसा।
गुर प्रेमी भरथ्री न्रिप जैसा।

उस समय जगत के मालिक श्री गुरु रामदास पातशाह बोले कि हमारे सिक्ख भरथरी से उत्तम गुरु-प्रेमी हैं। भरथरी तो राज-भोग भोग कर जब उपराम हो गया तो उसने गोरख के पास आकर उदासी धारण कर ली, तो भी उसका भ्रम समाप्त नहीं हुआ। वह कभी पर्वत पर जा चढ़ता था, कभी पुन: धरती पर आ जाता था, कभी समाधि लगा लेता था। उसका मन भटकाव में ही रहा। उसको प्रभु की प्राप्ति नहीं हुई थी। क्या हुआ यदि भरथरी ने स्त्रियों का त्याग कर दिया? सच्चे सिक्ख गुरु का हुक्म सुनकर दूसरी दिशा में कदम भी नहीं रखते और सीधे अपने गुरु की ओर चल पड़ते हैं :

तब बोले स्री गुरू जगतेस।
हमरे सिख भरथ्री ते बेस। (४३)
भरथ्री भोग राज कीआ जीरण।
भोग भोग सुख भइआ उजीरण।
तब गोरख मिल भइआ उदासी।
तउ नकटी मोहि भ्रम की फासी। (४४)
कबहूं उडे सुमेर सिधाए।
कबहूं फिर प्रिथवी पर आवै।
कबहूं लाइ बहै बन तारी।
कबहूं पूजावै राज दुआरी। (४५)
गुर पाती लख जो तज आई।
सो भरिथ्री साहो इन नाही।

यह वचन सुनकर संगत कहने लगी, "गुरु जी! हमको ऐसा गुरसिक्ख दिखाना करो।"

तब संगत इह कीन उचारु ऐसा सिख प्रभ हमै दिखारु। (४८)

उस समय सतिगुर पातशाह ने अपने एक सेवक की तरफ चिट्ठी लिखी कि यह चिट्ठी मिलते ही तुम सभी काम छोड़कर मेरे पास आ जाओ, दूसरी ओर कदम नहीं बढ़ाना:

स्री गुर तब अरदास लिखाई।
निज सेवक प्रित एहु अलाई।
हुकम हर मेरे ढिग आवो।
मतु दूजी दिस पैर टिकावो। (४९)

दोहरा

नात खात बैठत उठत अवर जु काज अपार।
सत तज आवो मोहि ढिग हे सिख हुकम निहार। (५०)

फिर गुरु जी ने एक सिक्ख को पास बुलाकर कहा कि यह चिट्ठी लेकर करतारपुर

चले जाओ, वहां हरदम राम का घर पूछ कर उसको मिलकर सिरोपा दे दो और चिट्ठी अपने पास रखना। उसका विवाह नजदीक आ गया है। प्रातः उसकी बारात के साथ ही चले जाना और उसके साथ रहना। जब वह ससुराल-घर पहुंच कर तीन लावें ले ले उस समय उसको यह चिट्ठी दे देना :

चौपई

तब स्री गुर इकु सिक्खु बुलाइआ।
दै पाती नीकै समझाइआ।
स्री करतारपुर दोदे जावो।
हरदम राम का धाम पुछावो। (५१)
सिरेपाउ मिल तां को दीजो।
पाती अपुने पास रखीजो।
तां को बिआहु आइआ अब नेरे।
ब्रात जाहु तिंहि साथ सवेरे। (५२)
तुम रहीउ तिंहि साथ हमेसा।
सासरु पुर जब करे प्रवेसा।
तीन लाव लवै वहु जब ही।
गुर पाती दीजो तिंहि तब ही। (५३)

सिक्ख ने उसी प्रकार ही किया। हरदम राम ने जब तीन लावें ले लीं तो उस सिक्ख ने गुरु जी की चिट्ठी निकालकर उसको पकड़ा दी। हरदम राम ने चिट्ठी पढ़कर एक कदम भी आगे न रखा और कहने लगा, "मेरे धन्य भाग्य हैं कि मुझे सतिगुरु रामदास जी ने बुलाया है।"

चड़ी ब्रात नीसांन बांए।
हरदम राम सासुर पुर आए। (५६)
जा तनी छुही खारे पगु धरिआ।
लांव लैण का आहरु करिआ।
प्रिथम लांव सतजुग की गाई।
त्रेते की दिज लांव अलाई। (५७)
दवापर लांव पढी दिज जब ही।
गुर पाती दीनी सिख तब ही।
हरदम राम गुर हुकम निहारिआ।
नैकु न निज पगु आगै धारिआ। (५८)
हुकमु हेर ठाढा हुवै रहिआ।
धंन भाग मेरे मुख कहिआ।
चड़ी घड़ी सफली मम आज।
याद कीआ मैं गुरू महाराज (५९)

हरदम राम के पिता, सास और ससुर ने बहुत समझाया कि चौथी लाव ले लो। जब हम विवाह करके घर चले जाएंगे फिर उधर से डोला वापस इस घर आ जाएगा, तब तुम चले जाना, परंतु हरदम राम ने किसी की कोई बात न मानी और गुरु जी की तरफ चल पड़ा:

हरदम राम तब एहु अलाइआ।
स्री गुर मो प्रित बेग बुलाइआ।
तात कहिआ सुत हरदम राम।
अब तो लेहु चतुरथी लांम। (६०)
बिदा होइ जब हम घर जावैं।
उत ते डोला इत घर आवै।
तब तुम जाहु सिरी गुर ओर।
गुर दरसुनु जा करो लहौर। (६१)
हरदम राम तब एहु अलाई।
बनी बात अत सै कठनाई।
स्री गुर ऐसे पठिआ लिखाइ।
जलु पीवो मम ओर सिधाइ। (६२)
सरब बात का एहु नचोरु।
मतु पगु राखो दूजी ओरु।
सनमुखि स्री गुर ओर सिधावो।
मतु पगु दूजै पासे पावौ। (६३)
बहु प्रकार ब्रिहमन सिख कही।
सरब ब्रात हार पच रही।
सासु ससुर बहु करी कहानी।
हरदम राम तब एकु न मानी। (६४)
पटुका तीर कटारु सु धार।
हरदम राम एहु कही पुकार।

इस संग चौथी लांव दिवाइ।
मम पुर डोला देहु पुचाइ। (६५)
ऐसे कहि गुर मारग पाइआ।
गुर का हुकमु सीस धर लइआ।
केसर भीने बसतर अंग।
कर कंगुना चड़ सबज तरंग। (६७)

हरदम राम को वेश्या से बचाना : इस रचना में कवि बताता है कि गुरु अपने सिक्ख की खातिर कितनी बड़ी कुर्बानी देने को तैयार हो जाता है। हरदम राम जब मार्ग में वेश्या के द्वार के नजदीक जाकर डगमगा जाता है तो गुरु जी अपने सिक्ख का सत रखने के लिए प्रहरी बनकर वेश्या के द्वार के आगे जाकर खड़े हो जाते हैं :

हरदम राम गुर ओर सिधाइआ।
सायं काल भए लौ पुर आइआ।
मिलियो मित्रपुर ढिग इकु तां को।
दुराचार खोटा मतु जां को। (६७)
राम राम प्रिथमै दुहू भाखिया।
चलो धाम बहुरों तिन आखिया।
हरदम राम को घर लै गइआ।
भली ठौर डेग तिह दइआ। (६८)
बहुरो लाइ गइआ संग बजार बैठाइआ।
खोटा मतु कहि अत भरमाइआ। (६९)
बार बधू संग कीए करार।
फिर लै गइआ आपणे दुवार।
खोटा संग मिले जनु जां कै।
लगै छोडतु रतै तन तां कै। (७०)
उत स्री गुर इहि कहिआ बीचार।
मो सिखु डोलिआ आ दरबार।
खोटे जन खोटा मतु दीना।
सिक्खु भ्रमाइ कै बेमुखु कीना। (७१)
अब चहीए मुहि परदा ढाकिआ।
चहीए सिख का सतु दिढ राखिआ।
ऐसे कहि गुर बाज मंगाइ।
होम जीनु पा तंगु कमाइ। (७२)
लैआ सुव्रण का आसा हाथ।
सिख सेवकु कोऊ लइआ न साथ।
गनका दुवारे बैठा आइ।
कर आसा कुरसी डसवाइ। (७३)

लाहौर से अमृतसर को लौटना : कुछ समय लाहौर रहने के पश्चात श्री गुरु रामदास जी ने श्री अमृतसर लौटने की तैयारी की। उस समय प्रिथीचंद ने अपनी करूप चाल चलते हुए गुरु जी को कहा कि (गुरु) अरजन देव बहुत तीक्ष्ण बुद्धि वाला है, इसको लाहौर में ही छोड़ जाएं, इसलिए कि यहां रहकर यह फारसी, अरबी, संस्कृत, हिंदी, पशतो, तोरकी आदि भाषाएं सीख ले। श्री गुरु रामदास जी ने उसकी बात मानकर श्री (गुरु) अरजन देव जी को लाहौर में टिकने के लिए कहा तथा स्वयं सारी संगत सहित वापस आ गए :

चौपई

अंम्रितसर को करे चढाई।
प्रिथी चंद अब इह अलाई।
अरजन देव को ईहां ठहिरावो।
पढन पारसी इलम सिखावो। (१०४)
इस को बुध तीशन अत ऐसी।
ब्रिंच देव गुर की नहीं वैसी।
प्रिथम पारसी, अरबी सिखै।
सहसक्रित, हिंदी फिर लिखै। (१०५)
पढै पहिली पसतुम जाने।
देस भाखा तोर की पहिचानै।
बहुर गुरमुखी करि परगासु।
तो आवै सतगुर के पासु। (१०६)
स्री रामदास सूधे वडभाग।
प्रिथी चंद के कहे सो लाग।
अरजन देव लहोर ठहिराइआ।

पढो पारसी आप अलाइआ। (१०७)

भाई साल्हो जी का श्री गुरु रामदास जी को मिलना तथा वर प्राप्त करना : श्री अमृतसर में श्री गुरु रामदास जी के दरबार में नित्यप्रति दूर-दूर से चलकर संगत आती और गुरु जी के दर्शन करके निहाल होती। उस समय भाई साल्हो जी भी गुरु साहिब को मिले। गुरु जी ने उसको गुरु-घर की सेवा बख्शिश की। भाई साल्हो जी गुरु साहिब द्वारा बख्शिश की गई सेवा को दिन-रात पूरी लगन के साथ करते रहते :

तां छिन भाई सालो मिलिआ आए कै।
रुपईआ गुड़ प्रसाद सो भेट चड़ाए कै।
स्री गुर जाणीजाण सो मनसा पूरदा।
हो सालो थापिआ सेवक खास हजूर दा। (११५)
करी टहिल मनजूर सीस पर धार के।
सालो आठो जाम कंम सरकार के।
रहिण दिने कर प्रेम सु कार कमांमदा।
हो सवास-सवास मन माहिं स्री गुरू धिआंवदा। (११७)

श्री गुरु रामदास जी ने भाई साल्हो जी की सेवा से प्रसन्न होकर उसको वरदान दिया कि श्री अमृतसर में किया स्नान उनका स्वीकृत होगा जो तेरी धरमसाल के दर्शन करके आयेंगे:

स्री गुर स्री मुख तां छिन इह अलाइआ।
साध साध कहि सालो कंठ लगाइआ।
अंम्रितसर इशनान पवै प्रवान तों।
हो धरमसाल नर परसै तेरी आइ जो। (११२)

श्री (गुरु) अरजन देव जी का श्री गुरु रामदास जी को पत्र लिखना : लाहौर में कुछ समय रहने के पश्चात श्री (गुरु) अरजन देव जी द्वारा श्री गुरु रामदास जी को विछोड़े के वैराग्य में आकर तीन पत्र लिखे जो प्रिथीचंद ने अपनी खोटी नीयत के कारण श्री गुरु रामदास जी तक न पहुंचने दिये। कुछ समय के पश्चात श्री (गुरु) अरजन देव जी को श्री गुरु रामदास जी ने लाहौर से वापिस बुला लिया। वापिस लौटने पर श्री गुरु रामदास जी ने श्री (गुरु) अरजन देव जी को गले से लगाया और कहा कि "आपने कोई सुख-शांति का पत्र क्यों नहीं लिखा?" तब श्री (गुरु) अरजन देव जी कहने लगे, "सतिगुरु जी! मैंने तो आपको तीन पत्र लिखकर भेजे थे। आप जी ने मुझको उनका कोई उत्तर नहीं दिया। यह आप क्या फरमा रहे हैं?"

लगे परसपर करने बाता।
अंम्रित रस समसुत औ ताता।
अरजन प्रित गुर इहु अलाइआ।
कुसल संदेसा किउ नां पठाइआ। (१३३)
अरजन जु कहिआ स्री गुरु पास।
तीन पठी तुम पहि अरदासि।
तां को उतर को गइआ।
उलटा हमे उलामा दिआ। (१३४)

उस समय श्री गुरु रामदास जी ने मसंद को बुलाया और पत्रों के बारे में पूछा तो मसंद ने कहा कि वे सारे पत्र तो मुझसे प्रिथीचंद ने ले लिये थे। उसी समय श्री गुरु रामदास जी ने प्रिथीचंद को बुलाया और कहा, "मीणिआ! तूने तीनों पत्र छुपा लिये। मुझे क्यों न दिये? यदि अपना भला चाहता है तो तीनों पत्र ला दे।"

गुर अरजन मसंद बुलाइआ।
अरदासु कहां स्री मुख फुरमाइआ।
तब मसंद तब ऐसे कहि दयी।
प्रिथी चंद हम ते सभ लई। (१३६)
तब स्री गुर प्रिथीआ ही कहा।
किउं मीणिआ, ते चुप कर रिहा।
मों प्रित किउं ना दीनी आइ।
तीन लई अरदास छपाए। (१३७)
लिआओ शीघर तीनो अरदासु।

जे चाहे अपणा सुक्ख वास।
कंपत जात बेग लै आइआ।
पड़ स्री गुर पूरन सुख पाइआ। (१३८)

श्री गुरु रामदास जी का श्री (गुरु) अरजन देव जी को लेकर गोइंदवाल जाना : प्रिथीए की करतूत गुरु जी को बहुत बुरी लगी और वे श्री (गुरु) अरजन देव जी को साथ लेकर गोइंदवाल चले गए:

कंठ लगाइ सु चूम लिलार,
गुरू करतार जू इह अलाई।
तूं प्रिथीआ रहु धाम सुधासर,
अरजन जू हमरे संग जाई।
पाछै जो खोटी करी प्रिथीए,
रामदास गुरू न मनों बिसराई।
संग लए स्री अरजन जू,
गुरू गोइंदवाल को कीन चड़ाई। (१४१)

श्री अरजन देव जी को गुरिआई सौंपना : गुरु जी ब्यास नदी के किनारे गोइंदवाल में आ विराजे। एक दिन सभी वजीरों को बुलाकर श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरिआई बख्शिश करने का निर्णय सुनाया :

तां नद नीरहि तीर तबै गुर बैठ वजीर लए बुलवाई।
मंत्र करियो मिल तांहि समैं भुज अ्रजन राज धरो गुरिआई। (१४४)

उस समय राज-सिंघासन सजाकर उस पर श्री (गुरु) अरजन देव जी को बिठाया:

राज सिंघासन साज भवे तिहि ऊपर अ्रजन देव बैठाई।

बाबा बुड्ढा जी ने गुरिआई की रस्म अदा की:

रमदास स्री रामदास के नंदै लैकर दच्छन भाल चढाई।

उस समय श्री गुरु रामदास जी ने श्री गुरु अरजन देव जी को गुरु नानक साहिब का स्वरूप समझकर प्रणाम किया :

नानक साहिब सरूप विलोक स्री मुख ते प्रणाम अलाई। (१४७)

कवि लिखता है कि उस समय श्री गुरु अरजन देव जी का तेज (प्रताप) करोड़ों सूरजों और चंद्रमाओं की भांति शोभा दे रहा था:

कोट ससी रव कोट समंसिरी अरजन देव को तेज सुहाई।

श्री गुरु रामदास जी का ज्योति-जोत समाना : कवि के लिखे अनुसार श्री गुरु रामदास जी छ: वर्ष, ११ महीने, १८ दिन राज कमाकर संवत् १६५८ में ज्योति-जोत समा गए:

आप स्री रामदास गुरू,
प्रभ जोत बिखै निझ जोत समाई।
मास इकादस साल खटं,
दिन आठ दसं गुर राज कमाई।
खोड़ ससै नव तीसवैं संवत भादरों,
सुदी म्रित तीन को पाई। (१४८)

शोक समाचार

बड़े शोक का समाचार है कि 'गुरमति ज्ञान' के अनुभवी तथा प्रतिभावान लेखक डॉ. अविनाश शर्मा (१२०५, फेज-१, अर्बन अस्टेट, जलंधर) का अकस्मात निधन हो जाने से 'गुरमति ज्ञान' के सितारे रूपी लेखकों के मंडल में से एक सितारा अचानक अपनी रोशनी खोकर इस दुनिया को अलविदा कह गया। हम डॉ. शर्मा जी के परिवार के साथ इस दुख की घड़ी में गहरी सहानुभूति का इज़हार करते हैं। हमारा सौभाग्य रहा है कि हम डॉ. शर्मा जी की रचनाओं को गत लम्बे समय से 'गुरमति ज्ञान' में प्रकाशित कर पाठकों के रूबरू करते रहे हैं। हम परमात्मा के चरणों में अरदास करते हैं कि वे डॉ. शर्मा की रूह को अपने चरणों में यथास्थान प्रदान करें। *-संपादक।*

"दस गुर कथा' कृत कवि कंकण में वर्णित श्री गुरु रामदास जी सम्बंधी वृत्तांत

*-बीबी रविंदर कौर**

"दस गुर कथा' में कवि कंकण ने दस गुरु साहिबान के जीवन-इतिहास को चित्रित किया है। यद्यपि यह रचना अधिकतर उपमामयी है फिर भी ऐतिहासिक पक्ष से यह रचना गुर इतिहास और सिक्ख इतिहास के बारे में जानकारी अवश्य प्रदान करती है। श्री गुरु रामदास जी के बारे में "दस गुर कथा" में कुल आठ बंद हैं। इन आठ बंदों में श्री गुरु रामदास जी की उपमा को रूपमान किया गया है। कवि ने भले ही अपनी रचना में श्री गुरु रामदास जी के जीवन-इतिहास को विस्तृत रूप में वर्णन नहीं किया है फिर भी कवि ने उपमामयी और सांकेतिक वर्णन के द्वारा इतिहास की कुछ कड़ियों को जोड़ा है। श्री गुरु रामदास जी से संबंधित आठ पद्यों में से मुख्यत: चार पक्ष उभर कर सामने आते हैं :

१. सोढी वंश को गुरगद्दी की प्राप्ति
२. श्री गुरु रामदास जी की सेवा-भावना
३. अमृतसर नगर की स्थापना
४. श्री गुरु रामदास जी का व्यक्तित्व

१. सोढी वंश के संबंध में : बाबा (गुरु) रामदास जी सोढी कुल में प्रकट हुए। यह ऐतिहासिक तथ्य कई ग्रंथों में आता है। इन ग्रंथों ने बेदी और सोढी वंश की परंपरा के बारे में चर्चा की है। कवि कंकण के अनुसार श्री गुरु नानक देव जी बेदी कुल में प्रकट हुए और श्री गुरु रामदास जी सोढी कुल में भले ही पीछे वाली वंशावली के साथ संबंध की गुरु-घर में कोई महानता नहीं है। सिक्ख पैरोकारों का संबंध गुरु नानक साहिब के इस संसार में प्रकट होने से ही जुड़ता है, परंतु क्योंकि यही रीति चली आ रही है इसलिए "दस गुर कथा" के कर्त्ता ने भी श्री गुरु रामदास जी के सोढी वंश में जन्म लेने के बारे में लिखा है :

दोहरा ॥
सतिगुर सकल जहान के, सोढी बंस कहाइ।
रामदास गुर नाम है, जनमे प्रगटे आइ।२।

सोढी वंश में श्री गुरु रामदास जी गुरगद्दी प्राप्त होने के बारे में कवि ने आगे फिर जिक्र करते हुए लिखा है कि सोढी वंश एक बहुत बड़ा वंश है। यह वंश, कवि के लिखे अनुसार रघुवंश है भाव यह श्री रामचंद्र वंश है जिनके हाथों रावण मारा गया था :

सोढी को बंस सु बंस बडो इस बंस समान नही कोऊ हूआ।
है रघूबंस की बंस इहै जिस राम कै हाथ ते रावण मूआ।
सो कुल में रामदास भए उस राग औ याही में भेद न दूआ।

२. श्री गुरु रामदास जी की सेवा-भावना के उपलक्ष्य में : सिक्ख धर्म में गुरगद्दी-प्राप्ति का आधार सदैव सेवा-भावना रहा है। "दस गुर कथा' में इसके बारे में एक सांकेतिक साखी कवि ने दी है। इस साखी के अनुसार बाबा (गुरु) रामदास जी ने श्री गुरु अमरदास जी के चरणों पर अपना शीश झुकाया और चरण-भेंट एक खरबूजा रखा। श्री गुरु अमरदास जी ने यह भेंट स्वीकार की। खरबूजा भेंट करने वाली

***२३, क्रउन एन्कलेव, जी. टी. रोड, श्री अमृतसर, मो : ९७८११-६२१११*

साखी "गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" में अंकित साखी के साथ मिलती-जुलती है। "गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की साखी में खरबूजे की जगह आम भेंट किया गया है। इस साखी के अनुसार जब ब्राह्मणों तथा खत्रियों की तरफ से अकबर बादशाह के पास गुरु-घर के विरुद्ध एक शिकायत की गई थी कि श्री गुरु अमरदास जी ने पुरानी मर्यादा को तोड़ कर चार वर्णों का भेद मिटा दिया है और नया धर्म चला लिया है अत: उनको रोको, तो अकबर बादशाह ने श्री गुरु अमरदास जी को इसके बारे में अपना पक्ष रखने के लिए बुलावा भेजा। श्री गुरु अमरदास जी ने भाई जेठा जी (श्री गुरु रामदास जी) को बादशाह अकबर के पास भेजा। जब अकबर के दरबार में से विजय प्राप्त करके (गुरु) रामदास जी वापस लौट रहे थे तो आप जी ने एक कुर्ता (बिमौसमी) बाजार में देखा तो वे लाहौर से खरीद कर लेकर आये और श्री गुरु अमरदास जी को भेंट किया। श्री गुरु अमरदास जी ने यह भेंट स्वीकार कर ली। श्री गुरु अमरदास जी ने प्रसन्न होकर सगल जहान की गुरिआई देते हुए सात बार वाक्य करके आगे से सात पातशाहियों की बख्शिश कर दी भाव कि आगे से सात पीढ़ियों की गुरिआई सोढी वंश के घर ही रहेगी :

आवत ही गुर चरन की, कीनी है जिन पूज।
सीस निवाइआ चरन पर, भेट राख खरबूज।२२।
मान लई तब अमर गुर, भेट भई परवान।
गुरिआई दीनी तिसै, जानै सगल जहान।२३।

सवैया ॥

मानी है भेट जयों बिप्प के तंदुल भीलनि के फल सयाम कन्हाई।
साभ ही वांग ही या खरबूज सो खाइकै दीनी है चाइ गुराई।
सात ही वाग की सातों ही थापना वाहिगुरू मुख आखि सुनाई।
वाहू ते आगै गुराई जगत की सोढी ही के घर मांहि रहाई।२४।

३. अमृतसर की स्थापना : "दस गुर कथा" के कर्ता ने अमृतसर शहर की स्थापना के बारे में सांकेतिक वर्णन किया है। इस वर्णन के अनुसार इंद्रपुरी (स्वर्ग), शिवपुरी और रावण की लंकापुरी से भी अधिक महत्व वाली एक पुरी भाव नगरी सतिगुरु रामदास जी ने बनाई है। जैसे कृष्ण जी की द्वारिका के तुल्य अन्य कुछ देखने को नहीं है इसी प्रकार कोई अन्य नगरी नहीं दीखती जो अमृतसर जैसी हो। अमृतसर के महत्व के बारे में और उल्लेख करते हुए यह भी बताया कि यहां धनवान, सर्राफ, व्यापारी आदि कई जातियों के लोग बसे हुए हैं जो नित्य दान-पुन्य करते हैं और यहां उनको कोई दुख नहीं है, समस्त नगर सुखी बसता है। मृत्यु एक अटल सच्चाई है जिसने आना ही आना है, इसको टाला नहीं जा सकता, इसके अतिरिक्त यहां कोई दंड नहीं, किसी चोर आदि का भय नहीं है। यहां कोई निर्धन नहीं है। सभी घरों पर झंडे झूल रहे हैं, जो इस नगर की अमीरी की साक्षी भरते हैं। यहां सोने की तकड़ी है और चांदी के बट्टे हैं भाव कि यहां ईमानदारी बहुत है और लोगों के साथ ईमानदारी बरती जाती है :

सुर के पुरि ते, सिव के पुरि ते अर रावन के पुरि ते अधिकाई।
गोकले अरु औधूह ते मथुरा हूं के बास ते जान सवाई।
आप रचाई है दुआरका सयाम जी ताके समान न देखन पाई।
याके न तुल्ल पुरी कोऊ दूसिरि जोऊ गुरू रामदास बनाई।२६।
नाहि बजारन को कोऊ अंत, और कूपन का

कछु नाहि सुमारा।
तांहि अनेक बसैं धनवान सराफ कहावत औ बनजारा।
पुंन औ दान करैं बनीए नित, जाहूं के लेख लिखा करतारा।
कोऊ नहीं दुख पावत ताहूं में, नीत बसै सुख सों पुर सारा।२७।
दंड न काहूं को काल बिना तहिं, चोर नही बिन नैन तीआ के।
नैन समान न तसकर हैं तहिं, चोरत जो नित चित्र पीआ कै।
नाहि पसू बिन दारिद काहू के, डोल है धाम धुजा औ पताके।
हेम की होइगी तांहि तुला, अरु चांदी के होहिंगे तोल तहांके।२८।

४. श्री गुरु रामदास जी का व्यक्तित्व : श्री गुरु रामदास जी के व्यक्तित्व के बारे में वर्णन करते हुए "दस गुर कथा" में बताया गया है कि जैसे बिजली से केवल केला कांपता है इसी प्रकार वाहिगुरु स्वरूप श्री गुरु रामदास जी की शरण में भै-भावनी के अतिरिक्त दिन-रात अन्य किसी बड़े राजा आदि का कोई भय नहीं चूंकि जहां सतिगुरु रामदास जी स्वयं राज्य कर रहे हों तो फिर वहां लोग आनंद में क्यों नहीं रहेंगे? श्री गुरु रामदास जी तीन-लोकों के नायक हैं जिनका दिया हुआ ही सब लोग खाते हैं :

कंपत बिज्जुल ते कदली तहि और न कोऊ डरै मन माही।
वाहिगुरू रामदास बिना तहिं रैन दिना डर भूप का नांही।
राज करै जहिं आप गुरू तहिं किउं न अनंद सों लोक बसांही।
आप गुरू त्रै लोक का नायक, जांके दिये सभ भोजन खांही।२९।

उपर्युक्त विचार से हम कह सकते हैं कि "दस गुर कथा" में कवि कंकन ने श्री गुरु रामदास जी के जीवन का वर्णन करते हुए विशेषत: अमृतसर नगर की स्थापना के बारे में वर्णन किया है और इस नगर की उपमा की है। श्री गुरु रामदास जी को तीनों लोकों के नायक बयान किया है और अंत में कवि ने इस बात पर बल दिया है कि सतिगुर की शरण में आने से किसी भी प्रकार के डर-भय एवं दुख से मुक्त हुआ जा सकता है।

कविता

स्वार्थ के तीर

जितने ही लोगों में हम उठते-बैठते हैं,
उतने ही लोगों से बनते चले जाते हैं,
हमारे सम्बंध।
प्रेम और आत्मीयता हृदय की भूमि पर
अंकुरित होने लगते हैं, रिश्तों के बीज।
परंतु जैसे ही ये होने लगते हैं पल्लवित
त्यों ही अनंतभेदी स्वार्थ के तीर
शीत हवा के झोंके की तरह आकर
गड़ने लगते हैं
हमारे सीने में सालते हैं जख्म।
सोते-जागते, उठते-बैठते और
मिलन सरिता की धरती पर खड़े
सम्बंधों के ख्याली महल, हो जाते हैं ध्वस्त।
भ्रष्ट ठेकेदारों, अभियंताओं द्वारा निर्मित
किसी सरकारी इमारत की तरह अचानक।

-श्री हेमंत गुप्ता 'पंकज', KRW-२३, जलदाय विभाग कॉलोनी, प्रताप नगर, दादबाड़ी, कोटा (राजस्थान)-३२४००९

"महिमा प्रकाश" में श्री गुरु रामदास जी का जीवन

*-बीबा किरनदीप कौर**

श्री सरूप दास भल्ला रचित "महिमा प्रकाश" सिक्ख इतिहास के प्रारंभिक स्रोतों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसमें गुरु साहिबान के जीवन के बारे में जानकारी मिलती है। "महिमा प्रकाश" में चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी के जीवन के साथ संबंधित आठ साखियां मिलती हैं। नम्रता की प्रतिमा, विशाल हृदय के मालिक श्री गुरु रामदास जी सिक्ख धर्म में चौथे सतिगुरु के रूप में प्रकट हुए जिनके उद्यम का सदका सिक्ख धर्म ने एक नया मोड़ लिया।

श्री गुरु रामदास जी का पहला नाम भाई जेठा जी था। "महिमा प्रकाश" के अनुसार श्री गुरु रामदास जी का जन्म सोढी कुल में पिता श्री हरिदास जी तथा माता दया कौर जी के घर हुआ। आपकी सुपत्नी बीबी भानी जी थीं। आपके घर तीन पुत्र--प्रिथीचंद, महादेव और श्री (गुरु) अरजन देव जी हुए। "महिमा प्रकाश" के अनुसार:

सोढी कुल हरदास पित दइआ मात रामदास।
भानी पति सुत अरजनो, महादेव, प्रिथीआस।
(पृष्ठ ३०६)

आपकी अल्प आयु में ही आपके माता-पिता कालवश हो गए। फिर आप जी अपने ननिहाल गांव बासरके आकर रहने लग गए। इसी दौरान भाई जेठा जी को गोइंदवाल जाने का अवसर मिला। आपने वहां बहुत सेवा की जिससे श्री गुरु अमरदास जी बहुत प्रभावित हुए। भाई जेठा जी के अनेकों सद्गुण तथा विशेषत: उनकी सेवा-भावना देखकर गुरु जी ने अपनी छोटी सपुत्री बीबी भानी जी का विवाह भाई जेठा जी के साथ कर दिया। "महिमा प्रकाश" में इस उपलक्ष्य में उल्लेख आता है:

हरिदास तने सोढी कुल चार।
जेठा नाम भगत अवतार।
भानी सुता पूरबज बिधा जागती।
को बिआही अत बड-भागी। (पृष्ठ १०७)

भाई जेठा जी परिवार सहित श्री गोइंदवाल साहिब रहने लगे। जब श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गोइंदवाल साहिब में बाउली का निर्माण कराया तब भाई जेठा जी ने कार-सेवा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भाई जेठा जी ने अपने सिर पर मिट्टी की टोकरियां उठाईं। "महिमा प्रकाश" में अंकित है :

परम धरम सतिगुर की भगत।
मन बच करम तासो आसकत।
परम प्रीत सो कार कमावै।
माटी खोद निज सीस उठावै। (पृष्ठ १९८)

भाई जेठा जी ने गुरु जी की सेवा को ध्यान में रखते हुए, सब प्रकार की शंकाएं तथा लज्जा को दूर करते हुए सेवा में योगदान दिया। भाई जेठा जी गुरु-घर के दामाद थे इस कारणवश उनके रिश्तेदार उनको यह भी कहने लगे कि तू अच्छा जमाई है जो ससुराल-घर में रहता है तथा सिर पर मिट्टी उठाकर ले जाता है! तब भाई जेठा जी ने उनको प्यार भरी

**सहायक रीसर्च स्कालर, सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर। मो: ९५९२०-९५४८३*

शब्दावली के साथ कहा कि वास्तव में तुम्हारा कोई दोष नहीं तुम तो गुरु-सेवा का महत्व जानते ही नहीं। यह सब सुनकर श्री गुरु अमरदास जी बहुत प्रसन्न हुए तथा कहने लगे, "वास्तव में तू ही मेरा सच्चा भक्त है" :

तब हसे दिआल सुन भए प्रसन्न।
धंन धंन जेठा तुम धंन।
तुम बिन कोऊ न मो को बूझे। (पृष्ठ १९९)

श्री गुरु अमरदास जी ने शरीर का परित्याग करने से पहले ही अपने परम प्रिय सेवक भाई जेठा जी को गुरु-मर्यादानुसार गुरिआई प्रदान की तथा उनका नाम बदल कर 'गुरु रामदास जी' रख दिया:

तब बलू को प्रभ आगिआ करी।
तिलक नलएर लिआउ इह धरी।
जेठो को इसनान करावो।
सगल नवीन बसत्र पहरावो। (पृष्ठ २७३)

इस प्रकार श्री गुरु अमरदास जी की ज्योति श्री गुरु रामदास जी में परिवर्तित हो गई। "महिमा प्रकाश" के अनुसार बीबी भानी जी ने श्री गुरु अमरदास जी से वरदान मांग लिया कि गुरिआई उनके खानदान में ही रहे :

हे सतिगुर कीआ बखस गुरिआई।
कोई सेवक सेवा कर ले जाई।
जौ कीआ बखस सतिगुर गुरिआई।
रहे कुल कबहूं न जाई। (पृष्ठ २७४)

"महिमा प्रकाश" के अनुसार श्री गुरु रामदास जी की सिधों के साथ विचारें होती हैं तो गुरु साहिब उन सिधों की कई प्रकार की शंकाएं, उनके भ्रम-भ्रांतियां दूर करके सही रास्ता दिखाते हैं। सिध गुरु साहिब को योग के बारे में प्रश्न करते हैं कि योग के बिना मन शांत नहीं हो सकता, परंतु आपकी संगत में तो कोई योग-साधना की ओर ध्यान नहीं देता। तब गुरु साहिब ने सिधों के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा कि प्रेम के बिना भक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती और हरि की प्राप्ति के बिना मुक्ति नहीं मिलती। जो प्रेम के बिना ज्ञान की बातें करते हैं उनको कुछ भी प्राप्त नहीं होता। परमात्मा की भक्ति वास्तविक योग है, अन्य सब फजूल के पाखंड हैं। युक्ति, ज्ञान, ध्यान, वैराग्य ही वास्तविक भक्ति है। प्रेम ही आध्यात्मिक मार्ग पर चलने का रास्ता है :

जब लग इहु बस नही होइ।
सभ जुगत प्राइन मन बस करना।
मन बस होइ प्रेम आजरना। (पृष्ठ २८३)

गुरु साहिबान ने गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए न केवल सच्चा सन्यास ही धारण किया अपितु संसार-प्रसिद्ध नगर भी बसाये। गुरु नानक साहिब ने करतारपुर नगर बसाया। इसी शृंखला को जारी रखते हुए अन्य गुरु साहिबान की भांति श्री गुरु रामदास जी ने भी इस काम को आगे चलाया। आप जी ने 'चक्क रामदासपुर' (श्री अमृतसर साहिब) नगर बसाया:

किआ महमा सतिगुर कहो अम्रितसर जिह नाम।
सुर नर मुन जन तिस भजै मुकत दुआर गुरधाम। (पृष्ठ २९६)

भट्ट साहिबान ने 'अमृत सर' सरोवर की स्तुति इस प्रकार की है :

छुटत परवाह अमिअ अमरा पद अंम्रित सरोवर सद भरिआ।
ते पीवहि संत करहि मनि मजनु पुब जिनहु सेवा करीआ। (पन्ना १३९६)

श्री गुरु रामदास जी ने संगत की संस्था को आगे चलाया। संगत गुरु साहिब के पास एकत्रित होती, गुरु-यश-विचारें श्रवण करती और निहाल होती। गुरु साहिब सबको 'नित्य-करणी' के बारे में उपदेश देते। "महिमा प्रकाश"

में गुरु जी के वचन संभाले गए हैं :

सुन सिख सजन पिआरे दुरलंभ जनम धारे।
नर देह अत अनूपं पावो न बार बारा।
(पृष्ठ ३०२)

गुरु साहिब सिक्ख को मिले मानव-जीवन के मनोरथ के बारे में बताते हुए कथन करते हैं कि यह देह जो मिली है इसने बार-बार नहीं मिलना, इसलिए परमात्मा के नाम के साथ जुड़कर आराधना करनी चाहिए। यह मानव-जन्म ही वस्तुतः परमात्मा के साथ जुड़ सकता है।

"महिमा प्रकाश" के कर्ता के अनुसार श्री गुरु रामदास जी ६ वर्ष, ११ महीने, १८ दिन गुरुतागद्दी पर विराजमान रहे :

६ छिआ बरख ११ यारां महीने १८ अठारां दिन।
स्री गुरू रामदास जी साहिब गुरिआई विच सरीर रखिआ। *(पृष्ठ ३०६)*

श्री गुरु रामदास जी अपने तीनों पुत्रों-- प्रिथीचंद, महादेव और श्री (गुरु) अरजन देव जी में से केवल योग्य तथा प्रिय पुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरुतागद्दी देकर ज्योति-जोत समाये।

उपर्युक्त विश्लेषण से श्री गुरु रामदास जी के जीवन तथा व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं के बारे में ज्ञात होता है कि गुरु साहिब एक विलक्षण व्यक्तित्व के मालिक थे। आप जी विनम्र स्वभाव व सेवा-भावना से सदैव प्रेरित रहने वाले, सच्चे ज्ञान के भंडार और सर्व-सक्षम थे।

कविता

गुरबाणी

अकाल पुरख की महिमा, पेश है गुरबाणी में।
अकाल पुरख का पवित्र, संदेश है गुरबाणी में।
इसमें ओअंकार का वास है, जीवन-धरवास है,
गुरुओं, भक्तों, संतों का, उपदेश है गुरबाणी में।
इसमें सच्चाई का प्रकाश है, 'एक' पर विश्वास है,
जपो अकाल पुरख का नाम, आदेश है गुरबाणी में।
इधर-उधर, यहां-वहां, न कीजिए तलाश प्रभु की,
सच्चे प्रभु का, वाहिगुरु का, प्रवेश है गुरबाणी में।
सिमरन करो, सेवा करो, उस 'एक' का ध्यान धरो,
उसका कोई रूप न रंग, न ही वेश है गुरबाणी में।
अवगुण त्याग, विकार छोड़ो, मीठे बोल सब बोलो,
काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहं का, निषेध है गुरबाणी में।
ऊंच-नीच, जात-पात, वैर-विरोध का खंडन है,
बंधन छूटें, हदें टूटें, समाया हर देश है गुरबाणी में।
गुरु की मेहर, गुरु की नदरि, हासिल उसे हो जाए,
जिसकी सच्ची श्रद्धा और सच्ची टेक है गुरबाणी में।
सच्चा ज्ञान, सच्चा नाम और मन की सच्ची शांति,
गुण अनेक हैं और सुख भी अनेक हैं गुरबाणी में।
सच्ची कमाई करो, बांटकर खाओ, सबका करो भला,
मानवता के सच्चे प्रेम का, संदेश है गुरबाणी में।
अकाल पुरख की महिमा, पेश है गुरबाणी में।
अकाल पुरख का पवित्र, संदेश है गुरबाणी में।

-डॉ कशमीर सिंघ 'नूर', बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४; मो ९८७२२-५४९९०

डंकन ग्रीनलीज की दृष्टि से श्री गुरु रामदास जी

-डॉ. जगजीत कौर*

भाई गुरदास जी सिक्ख गुरु-परंपरा की चतुर्थ ज्योति धंन-धंन श्री गुरु रामदास जी पातशाह के सम्बंध में लिखते हैं:

दीन दुनी दा थंमु हुइ भारु अथरबण थंम्हि खलोता। *(वार २४:१५)*

प्रस्तुत उक्ति अपने आप में स्पष्ट है कि श्री गुरु रामदास जी का अनूठा व्यक्तित्व कितनी अदम्य शक्ति का पुंज रहा है, जिसमें गुरु-भक्ति, हरि-नाम-सिमरन, प्रेम, त्याग, विनम्रता, सेवा जैसे दिव्य गुणों का संगम है। ऐसे गुणों से भरपूर दैवी शक्ति ही उन्हें ऐसा शक्तिशाली स्तंभ बनाती है जो दीन और दुनी दोनों को आश्रय देने वाला है। विचार, भावना और विवेक की शृंखला पकड़े, गहन चिंतन में आत्मसात हो विचार करें कि एक सात वर्ष का बालक, जिसके सिर पर से पिता और माता दोनों का साया उठ गया हो, दो छोटे भाई-बहन के पालन-पोषण का दायित्व भी कंधों पर आ पड़ा हो, नाते-रिश्ते, सगे-सम्बंधी सभी ने मुंह फेर लिया हो, कैसे अपनी अदम्य इच्छा-शक्ति, आत्म-बल, कर्मशीलता और दृढ़ निश्चय से गुरु-शरण में आकर निरंतर सेवारत रहकर कठिन घाल-कमाई से उच्च गुरु-पदवी की गरिमा को प्राप्त करता है। यकीनन, गुरु साहिब का जीवन आज की सुख-सुविधाओं में पल रहे आरामदायक और राह से भटके युवा-युवतियों के लिए शिक्षाप्रद प्रकाश-स्तंभ है। प्रेरणादायक है उन सभी निराश और भटके प्राणियों के लिए जो गुरु-चरणों से टूट कर अनेक प्रकार की कुंठाओं, भय और दुखों से संत्रस्त हैं। गुरु साहिब का जीवन बताता है कि कैसे गुरु-चरणों पर पूर्ण निष्ठा और विश्वास एवं पूर्ण समर्पित-भाव से कठिन घाल-कमाई द्वारा सर्वोच्च पद के अधिकारी बन सकते हैं। कितने प्रेरणादायक हैं गुरु साहिब के ये अमृत वचन :

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥ *(पन्ना १६७)*

प्रेरणा के पुंज ऐसे महान सतिगुरु जी का जीवन-वृत्तांत अनेक लेखक प्रेमियों ने कलमबद्ध किया है। यहां तक कि कवि शिरोमणि भट्ट साहिबान ने भी गुरु-प्रशस्ति को कलमबद्ध करते हुए १२३ सवैयों में से ६० सवैये श्री गुरु रामदास जी की प्रशस्ति में ही रचे हैं। इसी प्रकार गुरु साहिब के जीवन और बाणी-रचना की स्तुति को समर्पित रचनाओं से प्रभावित होकर अंग्रेज लेखक डंकन ग्रीनलीज ने भी अपने ग्रंथ "The Gospel of the Guru Granth Sahib" (दि गौस्पेल ऑफ दि गुरु ग्रंथ साहिब) में अत्यंत प्रेम व श्रद्धा-भाव से अनुप्राणित होकर श्री गुरु रामदास जी के जीवन का विवरण प्रस्तुत किया है।

यह महत्वपूर्ण ग्रंथ भूमिका के बाद दो भागों में दस अध्याय समेटे हुए है, जिसमें युग आधारित परिस्थितियों और विभिन्न धार्मिक मतों के विकृत हो चुके माहौल के मध्य कैसे ज्ञान-ज्योति गुरु नानक साहिब का आगमन होता है और तब दस जामों में कैसे विश्व-कल्याण हेतु सिक्ख पंथ का क्रमिक विकास होता है, दर्शाया

*1801-C, Mission Compound, Near St. Mary's Academy, Saharanpur (U.P.)-247001, Mob. : 92197-87756

गया है। साथ ही साथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी के कुछ मुख्य अंशों का अंग्रेजी में अर्थ-अनुवाद भी किया गया है। निजी अनुभवों को व्यक्त करते हुए वह बताता है कि अद्यार मद्रास की थीयोसौफिकल सोसायटी की ओर से उसे सिक्ख धर्म के पावन साहित्य पर लिखने को कहा गया तब उसने गुरमुखी भाषा का और अन्य अनेक स्रोतों से इस पावन धर्म सम्बंधी अध्ययन किया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी के सम्बंध में लेखक कहता है कि ज्यों-ज्यों वह इस पुनीत बाणी का अध्ययन करता गया उसका हृदय प्रेम-रस से निमग्न होता गया। गुरु साहिबान का जीवन और बाणी है ही ऐसी अद्वितीय प्रभावशाली। वह कहता है "The more I dug into its pages, the more I fell in love with them." (Page xii) विश्व के काव्य धर्म साहित्य में यह अनोखी रचना है "Among the world scripture few if any attains so high a literary level or so constant a height of inspiration." धर्म के सैद्धांतिक पक्ष के सम्बंध में वह अनुभव करता है कि यह केवल सिद्धांत नहीं है, यह जीवन-पद्धति है "Sikh religion has never been a philosophy of books of theorists; it is a discipline of life." यहां प्रभु-प्रेम और रहस्यात्मक अनुभूतियों को प्रतिदिन के जीवन और सामाजिक रीतियों को शौर्यपूर्ण कार्यो से जोड़ा गया है। सन् १९४७ में उसने यह ग्रंथ लिखना शुरू किया और सन् १९५२ ई में अद्यार मद्रास की थियोसौफिकल सोसायटी ने इसका प्रकाशन किया। ग्रंथ की पृष्ठ संख्या २१६ पर लेखक यह भी कहता है कि सिक्ख न तो हिंदू है, न मुस्लिम, वह उस 'दिव्य गुरु' का अनुयायी है जो समस्त जगत का पथ-प्रदर्शक है। (One eternal Guru of the world.)

किसी प्रकार का भी विवादग्रस्त तथ्य प्रस्तुत न करने वाला, यह श्रद्धा और प्रेम से अभिभूत लेखक श्री गुरु रामदास जी के संबंध में बताता है कि लाहौर शहर में सोढी वंश के ठाकुरदास रहते थे। उनका एक अत्यंत साधु-वृत्ति का पुत्र हरिदास था। हरिदास और उनकी धर्म-पत्नी अनूप देवी (दया कौर) अति निष्ठा से एक ही अकाल पुरख की आराधना करते थे। वे एक ही प्रभु का नाम जपते और उस एक प्रभु द्वारा रचे जीवों की सेवा करते। बीच-बीच में वे अपने प्रभु से एक अत्यंत पवित्र आत्मा पुत्र-प्राप्ति के लिए प्रार्थना किया करते थे और अंत में बृहस्पतिवार २४ सितंबर, सन् १५३४ को उनके गृह में एक पुत्र ने जन्म लिया जो उनके जैसा ही साधु-स्वभाव, दयालु और उदारमन था। उन्होंने उस छोटे बालक को 'जेठा' नाम दिया। नाम तो दिया गया 'रामदास' परंतु ज्येष्ठ संतान होने के कारण सभी 'जेठा' कहने लगे।

जब भाई जेठा जी अभी बहुत छोटी अवस्था के थे तभी उन्हें श्री गुरु अमरदास जी के दर्शन प्राप्त करने का अवसर मिला। इस प्रथम दर्शन में ही भाई जेठा जी श्री गुरु अमरदास जी के प्रति खिंचे गए। वे प्रतिदिन गुरु-दर्शनों को जाते और धीरे-धीरे तन-मन, आत्मा और शरीर से वे गुरु-दरबार की सेवा को ही समर्पित हो गए। कुछ समय पश्चात श्री गुरु अमरदास जी ने इस होनहार बाल (गुरु) रामदास जी के उज्जवल भविष्य को अंतर्दृष्टि से जानते हुए अपनी भक्ति-भाव में लीन साधु-वृत्ति कन्या बीबी भानी जी का विवाह इस श्रद्धालु होनहार युवक से कर दिया। विवाह के पश्चात (गुरु) रामदास जी श्री गुरु अमरदास जी की अति विनम्र-भाव से सेवा करने में व्यस्त हो गए। वे दिन-रात अत्यंत उत्साह और प्रेम सहित दरबार, लंगर तथा संगत की सेवा करते। उन्हें सेवा-कार्य करते हुए किसी प्रकार का लोभ व लालच नहीं था। वे यह नहीं

समझते थे कि वे इतने महान गुरदेव जी के दामाद हैं बल्कि वे निर्मोह और निष्काम-भाव से सेवा करते थे। डंकन बताता है कि एक बार गुरु साहिब ने उन्हें अपने निकट बैठाकर एक अत्यंत कीमती व खूबसूरत हीरे-जवाहरात का हार, जो उन्हें किसी श्रद्धालु ने दिया था, अपने पुत्रों--मोहन जी और मोहरी जी को न देकर (गुरु) रामदास जी को दे दिया, क्योंकि वे यह कीमती पदार्थ अपने सबसे प्रिय-जन को देना चाहते थे, परंतु (गुरु) रामदास जी ने दूसरे ही दिन एक भिखारी के कुछ मांगने पर वही हीरों का हार उसे दे दिया। डंकन बताता है कि उन्हें सांसारिक पदार्थों से रत्ती भर भी मोह नहीं था। (So little could he cling to worldly things) श्री गुरु अमरदास जी यह जानकर अत्यंत प्रसन्न हुए।

श्री (गुरु) रामदास जी की कुशाग्र बुद्धि और दूरदर्शिता व गहन सूझबूझ को दृष्टि में रखते हुए श्री गुरु अमरदास जी ने उन्हें अकबर बादशाह के दरबार में भेजा क्योंकि कुछ कट्टरपंथी हिंदुओं द्वारा अकबर बादशाह के बराबर कान भरे जा रहे थे कि नानकपंथी (सिक्ख) धर्म विरोधी हैं, वे वर्ण-आश्रम, मूर्ति-पूजा, पितृ-पूजा, थोथे वेद, मंत्रोचारण, गायत्री, संध्या-मंत्र आदि का विरोध करते हैं और वे धर्म के द्वार चारों वर्णों के लिए खोल रहे हैं जिससे धार्मिक और सामाजिक मर्यादा भंग हो रही है और यह धार्मिक व सामाजिक विघटन राज-सत्ता के लिए भी संकट बन सकता है। बादशाह अकबर ने श्री गुरु अमरदास जी को अपने दरबार में बुलवा भेजा। गुरु साहिब ने श्री (गुरु) रामदास जी को योग्य समझकर बादशाह की तसल्ली कराने को भेजा। श्री (गुरु) रामदास जी ने वहां सभी एकत्रित ब्राह्मणों और पांडों के तर्कों का ऐसा विवेकपूर्ण खंडन किया कि सभी निरुत्तर हो गए। बादशाह श्री (गुरु) रामदास जी के विवेकपूर्ण तर्कों और बुद्धि-चमत्कार तथा एक विनम्र व सौम्य व्यक्तित्व से इनता प्रभावित हुआ कि उसने श्री गुरु अमरदास जी के दर्शनों की इच्छा जाहिर की। अपने वादे के अनुसार लाहौर की ओर जाते हुए सन् १५६७ में वह गोइंदवाल गुरु साहिब के दर्शन करने को पहुंचा। उसने पंगत में बैठ कर लंगर भी छका। मानवता के प्रति बिना भेदभाव के समर्पित सेवा-कार्यों से वह बहुत प्रभावित हुआ और उसने लंगर के लिए स्थाई रूप से आय का स्रोत जागीर लगाने की इच्छा भी जाहिर की जिसे गुरु साहिब ने अस्वीकार कर दिया।

श्री (गुरु) रामदास जी ने बादशाह अकबर से श्री गुरु अमरदास जी की यह इच्छा भी जाहिर की कि हिंदु तीर्थ-यात्रियों को हरिद्वार व अन्य तीर्थों पर जाने पर जो जजिया/कर लगाया जाता है, उसे माफ कर दिया जाए। बादशाह अकबर ने इसकी स्वीकृति दी जिसके तहत श्री गुरु अमरदास जी अनेक यात्रियों को बिना कर के हरिद्वार की यात्रा पर ले गए, जिसका जिक्र श्री गुरु रामदास जी ने तुखारी राग (पन्ना १११६) पर किया है। इस प्रकार हिंदुओं के लिए यह छूट भी श्री (गुरु) रामदास जी के विवेक से प्राप्त हुई।

इसके तुरंत पश्चात श्री (गुरु) रामदास जी को यह आदेश दिया गया कि गोइंदवाल से लगभग २५ मील की दूरी पर, जहां एक छोटा-सा तालाब था और जिसे गुरु नानक साहिब के चरणों का पवित्र स्पर्श प्राप्त हुआ था (अपनी यात्राओं के दौरान श्री गुरु नानक साहिब जहां ठहरे थे), वहीं एक नगर बसाया जाये और अमृत-सरोवर तैयार किया जाये। धीरे-धीरे इसे व्यापार का केंद्र भी बनाया गया, नगर को 'अमृतसर' नाम दिया गया। 'अमृत सरोवर' और 'अमृतसर' नगर के विकसित होने से यकीनन यह सिक्ख धर्म की दृढ़ केंद्रीय राजधानी

बन गई। गुरु-घर के लिए धन भी आने लगा और श्रद्धालुओं की संख्या भी बढ़ने लगी। वे अति उत्साह से अमृत-सरोवर की खुदाई और इसके निर्माण-कार्य के सेवा-कार्य में अपने ही हाथों से लग गए।

श्री (गुरु) रामदास जी की विवेक-बुद्धि, उनका समर्पण-भाव और सिक्ख संगत की निष्काम सेवा को दृष्टि में रखते हुए श्री गुरु अमरदास जी ने मन बना लिया था कि श्री गुरु नानक देव जी की गुरगद्दी श्री (गुरु) रामदास जी को ही बख्शी जाएगी। फिर भी परीक्षा की दृष्टि से श्री गुरु अमरदास जी ने श्री (गुरु) रामदास जी को एक 'थड़ा' बनाने को कहा। श्री (गुरु) रामदास जी ने सात बार 'थड़ा' बनाया और सातों बार श्री गुरु अमरदास जी ने यह कह कर तुड़वा दिया कि यह उनकी पसंद का नहीं बना है, जैसा वे चाहते हैं वैसा नहीं है और श्री (गुरु) रामदास जी पुन:-पुन: उनके कथन अनुसार बनाते रहे। यह एक प्रकार से श्री (गुरु) रामदास जी की सहन-शक्ति, धैर्य-भावना, आज्ञाकारिता, ईमानदारी और कार्य के प्रति उनकी लगन का प्रतीक था। श्री गुरु अमरदास जी ने अति प्रसन्न होकर अपने दोनों पुत्रों और बड़े दामाद को छोड़कर श्री (गुरु) रामदास जी को श्री गुरु नानक देव जी की पावन गुरगद्दी पर बैठाया और गुरु नानक साहिब द्वारा प्राप्त ज्योति को श्री गुरु रामदास जी में प्रतिष्ठित कर दिया।

श्री गुरु रामदास जी में विनम्रता और सेवा-समर्पण की भावना इतनी प्रबल थी कि डंकन बताता है कि उनकी गुरु-पद की प्राप्ति की बात सुनकर श्री गुरु नानक देव जी के बड़े सपुत्र बाबा श्रीचंद उनके दर्शन करने आए। दर्शन-मात्र से वे इतने प्रभावित हुए कि उनके व्यक्तित्व में उन्हें एक सच्चे गुरु के दर्शन हुए। उन्हें उनके मुख पर वही तप, तेज और नूर झलकता दिखा जो उनके अपने पिता श्री गुरु नानक देव जी में था। वे उनके अति विनम्र, मधुर वचन सुनकर गद्‌गद् हो उठे और अनेक आशीष वचन बोले। इस घटना का वर्णन अन्य इतिहासकारों ने भी किया है। कवि चूड़ामणि भाई संतोख सिंघ जी इससे सम्बंधित घटना का वर्णन करते हैं कि श्री गुरु रामदास जी के तेजस्वी सुंदर मुख-मंडल पर बहुत लंबा 'दाढ़ा' प्रकाशमान था। बाबा श्रीचंद ने हंसते हुए कहा कि "इतना लंबा 'दाढ़ा' (दाढ़ी) क्यों बढ़ा रखा है?" गुरु साहिब ने अति विनम्रता से कहा कि "आप जैसे महापुरुषों की चरण-रज झाड़ने-पोछने हेतु है।" इस विनम्रतापूर्ण उत्तर से बाबा श्रीचंद इतने प्रसन्न हुए कि बोल उठे, "विनम्रता और सेवा-बल पर ही आप गुरगद्दी के अधिकारी बने हैं।" कवि शिरोमणि के शब्दों में बाबा श्रीचंद के आगमन पर :

उच सथान स्रीचंद बिठाए।
आप निंम्र करि तरे तकाए ॥७६॥
सिरीचंद बोले ततकालू।
करति परखणा प्रेम दिआलू।
'इतना दाढ़ा कैस बधायो?'
सुनिकै सतिगुर भे निंम्रायो ॥७७॥
दोहरा ॥ चरन गहे करि प्रेम सों पौंछहिं बारंबार।
'इस ही हेतु वधाति भे, सुनीए गुर सुत दयार ॥'७८॥
देख निंम्रता गुरु की स्रीचंद भए प्रसंन।
'अंगद लीनी सेव करि तुमरो प्रेम अनंन ॥७९॥
तुमरी महिमा अधिक है कहीए काहि बनाइ।
तुमरे सर मैं जो मजहि पापी भी गति पाहि ॥'८०॥
(अध्याय १४/२)

थोड़े समय में ही गुरु साहिब का यश और ख्याति चारों ओर फैल गई। गुरु साहिब के प्रचार का ढंग ही इतना मधुर व प्रभावशाली था कि गुरु जी के निकट श्रद्धालुओं का जमाव बना ही रहता। श्री गुरु रामदास जी श्री गुरु नानक देव जी के सिद्धांतानुसार अत्यंत उत्साह

और प्रेम सहित श्रद्धालुओं को एक मात्र प्रभु-परमात्मा के नाम-सुमिरन से जोड़ते। वे बताते हैं कि परमात्मा ही सभी जीवों का सच्चा सृजनकर्ता है। वह प्रभु जो अगम्य है, अपार है, सबको उसी का नाम ध्यान करना है। जो उस अनंत प्रभु का नाम-ध्यान-सिमरन करते हैं वे सदैव स्थाई सुखों को प्राप्त होते हैं, वे काम आदि विकारों से मुक्त हो जाते हैं, यमों के पाश से वे मुक्त हो जाते हैं, यमों की फांसी टूट जाती है:

सो पुरखु निरंजनु हरि पुरखु निरंजनु हरि अगमा अगम अपारा ॥
सभि धिआवहि सभि धिआवहि तुधु जी हरि सचे सिरजणहारा ॥ . . .
हरि धिआवहि हरि धिआवहि तुधु जी से जन जुग महि सुखवासी ॥
से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि धिआइआ जी तिन तूटी जम की फासी ॥ (पन्ना १०-११)

वह एक मात्र प्रभु ही सर्वत्र व्यापक हो रहा है:

तूं घट घट अंतरि सरब निरंतरि जी हरि एको पुरखु समाणा ॥ (पन्ना ११)

गुरु साहिब के मधुर प्रेमसिक्त वचनों में से प्रभु के प्रति, गुरु के प्रति, मानवता के प्रति अथाह प्रेम की अभिव्यंजना हुई है। उनके अंतर्मन में गहन प्रेम के उद्‌गार प्रस्फुटित होते रहते हैं, इसी लिए डंकन ग्रीनलीज बताता है कि श्री गुरु रामदास जी असीम प्रेम के संदेशवाहक थे। "He was himself a very apostle of love." इसी तथ्य को और स्पष्ट करते हुए प्रो. पूरन सिंघ ने कहा है कि श्री गुरु रामदास जी की बाणी में प्रेम की मंदाकिनी प्रवाहित हो रही है। "The poetry of Ramdas flows like a stream of love. (Ten Masters)"

श्री गुरु रामदास जी की बाणी का पठन श्रवण करते ही जिज्ञासु में प्रेम की सरसराहट उत्पन्न होने लगती है :

हरि अंम्रित भिंने लोइणा मनु प्रेमि रतंना राम राजे ॥
मनु रामि कसवटी लाइआ कंचनु सोविंना ॥ (पन्ना ४४८)

प्रेम के तीखे-नुकीले तीरों से आहत जिज्ञासु ही उस पीड़ा को समझ सकता है जिसके हृदय को बाणी के प्रेमसिक्त तीरों ने भेदा हो:

हरि प्रेम बाणी मनु मारिआ अणीआले अणीआ राम राजे ॥ (पन्ना ४४९)

प्रेम-वेदना से आहत जिज्ञासु प्रभु से मिलने के लिए आतुर हो उठता है :

गुरमुखि पिआरे आइ मिलु मै चिरी विछुंने राम राजे ॥
मेरा मनु तनु बहुतु बैरागिआ हरि नैण रसि भिंने ॥ (पन्ना ४४९)

इसी प्रकार *"नैण रसि भिंने"* नेत्रों से संगत को सुख-आनंद प्रदान करते हुए परोपकार-कार्यों में लीन 'नानक पंथ' का प्रचार-प्रसार गुरु साहिब करते रहे तथा अन्य भी अनेक समर्पित सिक्खों को श्री गुरु नानक देव जी के मिशन के प्रचार-कार्य के लिए प्रेरित करते रहे। डंकन जिक्र करता है कि गुरु साहिब के समय अन्य कई समर्पित सिक्खों में भाई हिंदाल भी थे जो अत्यन्त प्रेम और विनम्र-भाव से लंगर की सेवा करते थे और हृदय से प्रति पल नाम-सिमरन से जुड़े रहते थे। इनका भक्ति-भाव देखकर गुरु साहिब बहुत प्रसन्न हुए। इन्हें सिरोपा की बख्शिश की और आदेश दिया कि अमृतसर केंद्र में गुरमति का प्रचार करें। आगे चलकर ये अत्यंत प्रेमी व समर्पित सिक्ख साबित हुए। इसी बीच भाई गुरदास जी प्रसिद्ध कवि और ख्याति प्राप्त वारों के रचयिता गुरु-दर्शनों को आए। इन्हें सम्मानित कर गुरु साहिब ने आगरा की ओर धर्म प्रचार के लिए भेजा। 'नानक-पंथ' की अध्यात्म साधना और पवित्र जीवन-यापन के

पवित्र उपदेशों की कुछ विरोधियों द्वारा जब यह कह कर आलोचना की जाने लगी कि गुरु साहिब और उनके सिक्ख खुद घर-परिवार के बीच रहते हैं तो श्री गुरु रामदास जी ने अत्यंत तर्कपूर्ण ढंग से उन्हें उपदेश दिया कि व्यक्ति का मन नाम-सिमरन के साथ जुड़ा होना आवश्यक है। कोई मनुष्य भले ही योगियों जैसी वेशभूषा धारण कर ले यदि उसके हृदय में परमात्मा के प्रति सच्चा प्रेम नहीं है वह कभी भी सत्य से नहीं जुड़ सकता, वह सच्चा योगी नहीं हो सकता। डंकन के शब्दों में गुरु साहिब के अनुसार "A man may wear a yogi's garb, but without devotion in his heart God never enters." योगियों जैसी वेशभूषा बना लेने मात्र से प्रभु की प्राप्ति नहीं होती। मन का योग परमात्मा से हो तो गृहस्थ में रहकर भी परमात्मा से मिलन हो सकता है।

श्री गुरु रामदास जी के समूह मानव-जाति के प्रति एक समान उदार और प्रेम-व्यवहार से बादशाह अकबर भी बहुत प्रसन्न हुआ था, यद्यपि श्री गुरु रामदास जी बादशाह से किसी प्रकार का पदार्थिक व आर्थिक लाभ नहीं लेते थे। वे किसी समर्थ, धनवान साधन-सम्पन्न व्यक्ति से भी किसी प्रकार की आर्थिक सहायता नहीं मांगते थे, तब भी उनके दरबार से प्रत्येक जरूरतमंद की सहायता की जाती थी। इससे श्री गुरु रामदास जी का यश-सम्मान दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा। उनकी शरण में स्वत: ही अनेकों साधन-सम्पन्न व्यक्ति आने लगे। उनके मधुर उपदेशों से प्रभावित होकर वे सहज ही सेवा-भावना और परोपकार-भावना से अभिभूत होकर अपने से कम साधनवान, दीन-गरीब सिक्ख की सहायता के लिए तत्पर रहते थे। इस परस्पर के सहयोग और भाईचारे से सिक्ख समाज निरंतर प्रगति की ओर बढ़ने लगा। श्री गुरु रामदास जी के निर्देशन में 'नानक-पंथ' विकसित होता गया।

श्री गुरु रामदास जी के तीन सपुत्रों में से बड़ा प्रिथीचंद, बीच के महादेव और सबसे छोटे श्री (गुरु) अरजन देव जी थे। सबसे छोटे पुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी में बाल्यकाल से ही गुरु-पदवी को संभालने योग्य गुणों का विकास होने लगा था। वे पिता की प्रत्येक आज्ञा को सेवा-भाव से स्वीकार करते थे। डंकन उस घटना का भी जिक्र करता है जब पिता-गुरु ने लाहौर एक विवाह में जाने का प्रिथीचंद को आदेश दिया, परंतु उसने इंकार कर दिया। महादेव वैसे भी इन सांसारिक कार्यों के योग्य नहीं था। श्री (गुरु) अरजन देव जी ने आदेशानुसार आज्ञा का पालन किया। कई दिन विवाह-समाप्ति के बाद भी जब पिता-गुरु द्वारा लौट आने का आदेश नहीं मिला तो उन्होंने प्रेमपूर्वक विनम्र-भाव से पत्र लिखकर पिता-गुरु को भेजे जिसे प्रिथीचंद छिपाता रहा। अंत में तीसरे पत्र पर भेद खुला। श्री (गुरु) अरजन देव जी को बुलाया गया। गुरु साहिब पत्रों द्वारा रची बाणी से अति प्रसन्न हुए। श्री गुरु अमरदास जी की भविष्य-बाणी से भी *"दोहिता बाणी का बोहिथा"* और भविष्य में श्री गुरु नानक देव जी की गुरगद्दी का वारिस समझ कर छोटे सपुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरु-पदवी बख्शी। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा प्राप्त 'अगंमी ज्योति' को श्री (गुरु) अरजन देव जी में लीन कर श्री गुरु रामदास जी १ सितंबर, सन् १५८१ ई को परम ज्योति में विलीन हो गए। "His light was blended with the light."

"The History of the Sikhs" कृत डॉ. हरीराम गुप्ता में प्रस्तुत श्री गुरु रामदास जी का जीवन और व्यक्तित्व

*-प्रो. सुरिंदर कौर**

श्री गुरु रामदास जी का सारा जीवन, उनकी विचारधारा और सिक्खी प्रचार एक चमत्कार ही कहा जा सकता है। एक अनाथ बालक से सतिगुरु के महान पद पर पहुंचना, जहां लाखों लोग उनके समक्ष नतमस्तक हों, वास्तव में किसी चमत्कार से कम न था। लेकिन उनकी यह यात्रा सरल न थी। यह यात्रा आरंभ हुई थी एक-मन, एक-चित्त होकर समर्पित सेवा से और परिणति थी युगों-युगों तक अटल रहने वाले उपदेशों और अनुभव-ज्ञान को सदा के लिए लोकार्पण कर उस परम ज्योति में समा जाने तक। अत: ऐसे महान सतिगुरु के जीवन के विषय में तो जितना कहा जाए, लिखा जाए या समझा जाए वह कम है। हम केवल एक कीट की भांति इस नि:सीम आकाश में एक छोटी-सी उड़ान भरने का प्रयास कर रहे हैं। इसी के अंतर्गत गुरु साहिबान के विशेषांकों की इस लड़ी में डॉ. हरीराम गुप्ता द्वारा लिखित सिक्ख इतिहास के आधार पर गुरु साहिब जी के जीवन और बाणी को समझने का प्रयास किया जा रहा है।

अपनी पुस्तक "The History of the Sikhs" में डॉ. हरीराम गुप्ता ने कुल चार पन्नों में श्री गुरु रामदास जी के जीवन और उनके योगदान का वर्णन किया है। उन्होंने गुरु जी के जीवन में एक सिक्ख से गुरु-पद तक की यात्रा, श्री अमृतसर नगर की स्थापना, बाबा श्रीचंद से भेंट और श्री गुरु अरजन देव जी को गुरता-गद्दी प्रदान करने की घटनाओं का उल्लेख करते हुए उनके द्वारा गुरु साहिब जी के विनम्र और दूरदर्शी स्वभाव को बाखूबी उभारा है, साथ ही उनकी बाणी के कुछ पक्षों को भी प्रस्तुत किया है। फिर भी कई ऐसी घटनाएं हैं जिन पर लेखक मौन रह गए, परंतु उन घटनाओं का उल्लेख किए बिना गुरु साहिब के जीवन को समझना अधूरा रह जाएगा। गुरु साहिब की बाणी के भी कुछ ही पक्षों पर लेखक ने ध्यान दिया है और उनकी बाणी के वैशिष्टय को अंकित करना कदाचित उन्होंने उपयोगी नहीं समझा। अत: इस लेख में डॉ. हरीराम गुप्ता द्वारा वर्णित इतिहास के साथ उन तथ्यों को जिन्हें डॉ. हरीराम गुप्ता ने किसी कारणवश होकर नजरंदाज कर दिया, को अपने शब्दों द्वारा मिलाकर यह आलेख एक संयुक्त प्रस्तुतीकरण है।

श्री गुरु रामदास जी का जन्म सितंबर सन् १५३४ में चूना मंडी लाहौर में हुआ था। आपके पिता जी का नाम श्री हरिदास सोढी व माता का नाम अनूपी जी था। आपके दो छोटे भाई-बहन भी थे। आपका बचपन का नाम 'जेठा' था। (घर के बड़े/ज्येष्ठ पुत्र को ही 'जेठा' कहा जाता था।) सात वर्ष की अल्पायु में ही माता-पिता का साया सिर से उठ जाने के कारण वृद्ध नानी उन्हें अपने गांव बासरके ले आईं। श्री गुरु अमरदास जी भी इसी गांव के थे। जिस वर्ष नानी इन अनाथ बच्चों को

**Room No. 2, Banta Singh Chawl, Opp. Manish Park, Jija Mata Marg, Pump House, Andheri (E), Mumbai-400093, Mob. : 80973-10773*

अपने साथ लाई थीं उसी वर्ष गुरु साहिब जी श्री गुरु अंगद देव जी की सेवा में चले गए थे। अतः बच्चों के हालात का उन्हें पता न चल सका। अगले पांच वर्ष भाई जेठा जी ने ग्राम बासरके में रहकर घुंघणियां (उबले हुए मसालेदार चने) बेचकर अपने परिवार की आजीविका चलाई।

जैसे ही श्री गुरु अमरदास जी अपने गांव पहुंचे और भाई जेठा जी के बारे में पता चला तो वे उन्हें अपने साथ गोइंदवाल साहिब ले आए। उनके गुरु-घर में सेवारत होने के कारण भाई जेठा जी के मन पर गुरमति का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। श्री गुरु अमरदास जी के प्रेम और स्नेह के बिना उन्हें गुरमति चेतना का इतना प्रगाढ़ ज्ञान कभी प्राप्त न होता। वे इस बात को हृदय की गहराई से स्वीकार करते हुए अपनी बाणी में कहते हैं :

हम जैसे अपराधी अवरु कोई राखै जैसे हम सतिगुरि राखि लीए छडाइ ॥
तूं गुरु पिता तूंहै गुरु माता तूं गुरु बंधपु मेरा सखा सखाइ ॥ (पन्ना १६७)

जब श्री गुरु अमरदास जी गुरु-पदवी पर आसीन हुए तब से (गुरु) रामदास जी एकाग्रचित्त उन्हीं की सेवा में रत रहे। गुरु साहिब की सपुत्री बीबी भानी जी से उनका विवाह हुआ और उनके घर तीन पुत्रों का जन्म हुआ। गोइंदवाल साहिब में रहकर भाई जेठा जी एक ओर गुरु-घर की सेवा करते, नाम-बाणी का अभ्यास करते तो दूसरी ओर अपनी आजीविका चलाने के लिए भी परिश्रम करते रहते। श्री गुरु अमरदास जी की कृपा-दृष्टि तो सदा ही उन पर बनी रहती थी। फिर भी सभी प्रकार से परीक्षा लेने के उपरांत गुरु साहिब ने यह निर्णय लिया कि अब गुरु-पदवी (गुरु) रामदास जी को ही दी जाएगी, क्योंकि वे ही इस महान उत्तरदायित्व के सर्वथा योग्य हैं। इस बात को प्रमाणित करते हुए भट्ट नल जी कहते हैं :

सब बिधि मान्यिउ मनु तब ही भयउ प्रसंनु राजु जोगु तखतु दीअनु गुर रामदास ॥ (पन्ना १३९९)

यह घटना सितंबर १५७४ की है। आयु के चालीसवें वर्ष में उन्हें गुरतागद्दी प्राप्त हुई। आप सात वर्ष तक गुरु-पदवी पर आसीन रहे और इस काल में धार्मिक भाईचारे को एक शुद्ध-धर्म के रूप में संगठित किया। आपने इस दिशा में बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया केंद्रीय धर्म-स्थान श्री अमृतसर नगर बसाकर। यह नगर देखते ही देखते सिक्ख पंथ में धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र बन गया। आर्थिक दृष्टि से सिक्ख पंथ को सुदृढ़ बनाने हेतु आपने नए-नए उद्योगों को श्री अमृतसर में आश्रय देकर प्रफुल्लित किया। यह नगर आज भी एक व्यापारिक केंद्र और लघु उद्योगों का केंद्रीय स्थान है। आपने सिक्ख धर्म की नींव को और मजबूत बनाने के लिए तथा सिक्खों द्वारा धार्मिक कार्यों हेतु स्वेच्छा से दी हुई रकम को गुरु-दरबार में निश्चित और नियमित रूप से पहुंचाने हेतु, अपने जीवन-काल में 'मसंद-प्रथा' को आरंभ किया। ये मसंद गुरु-घर के अत्यंत ही समर्पित और सूझवान सिक्ख हुआ करते थे। कुछ ही समय में ये मसंद सारे भारत में फैल गए। धर्म-प्रचार के मुख्य कार्य के साथ-साथ द्विपक्षीय कार्य-पद्धति को अपनाते हुए इन मसंदों ने एक ओर देश भर से सिक्खों द्वारा दिए गए 'दसवंध' को गुरु-दरबार (केंद्रीय भंडार) में पहुंचाया, तो साथ ही गुरु साहिब के आदेशों और उपदेशों को भी देश के कोने-कोने तक पहुंचाया। श्री गुरु रामदास जी का आदेश था कि सारे सिक्ख मिलकर गरीब की सहायता करें जिससे उसकी आजीविका के स्रोत भी निश्चित हो सकें।

डॉ. हरीराम गुप्ता ने बाबा श्रीचंद और श्री गुरु रामदास जी की भेंट को बहुत महत्व दिया है। इस घटना द्वारा वे गुरु साहिब की चरम विनम्रता का परिचय देते हैं। डॉ. गुप्ता के अनुसार यह गुरु साहिब की विनम्रता ही थी जिसने उन्हें सर्वप्रिय बना दिया। स्वयं बाबा श्रीचंद ने जब सवाल किया था, "आपने दाढ़ा (दाढ़ी) इतना लम्बा क्यों बढ़ाया हुआ है?" तो वे भी यह उत्तर सुनकर विस्मित हो गए थे। गुरु साहिब ने कहा था, "आप जैसे महापुरुष के चरण झाड़ने के लिए।" ऐसी विनम्रता विरले ही देखने को मिलती है। इसी स्वभाव ने श्री गुरु रामदास जी के धर्म-प्रचार को अधिक प्रभावी बनाया और गुरु नानक साहिब द्वारा चलाई सिक्खी लहर को और विस्तृत किया।

गुरु-पदवी पर आसीन रहने अर्थात् गुरु-काल की अन्य मुख्य उपलब्धियों में से एक थी बाणी की संभाल करना और अपनी बाणी को उसमें सम्मिलित करके उसे और समृद्ध बनाना। उन्होंने बाणी बड़े विशाल आकार में उचारी है, जिनमें शबद, असटपदियां, सोलहे, छंत, वार और श्लोक अनेक विधाएं हैं। इनके अतिरिक्त उन्होंने विशेष बाणियों का उच्चारण भी किया है, जो उनकी गुरबाणी संग्रह को मौलिक भेंट है, जिनमें लावां, करहले, घोड़ीआं, वणजारा आदि विशिष्ट बाणियां हैं। उन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सम्मिलित ३१ रागों में से कुल ३० रागों का प्रयोग किया है। जिस राग का पहले किसी भी गुरु साहिबान ने प्रयोग नहीं किया, उनमें से भी पांच राग तो स्वयं गुरु साहिब की पंथ को देन है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कुल २२ वारें हैं, जिनमें से आठ तो श्री गुरु रामदास जी की ही हैं, अत: उनकी बाणी का भंडार विशाल है। अपने सात वर्ष के अल्प गुरु-काल में इतनी विशाल बाणी का उच्चारण करना अपने आप में एक चमत्कार है।

अपने गुरु-काल में उन्होंने गुरु-घर की परंपराओं और धार्मिक मर्यादाओं को सुदृढ़ बनाने हेतु अपना सर्वस्व लगा दिया। तन, मन, धन सभी को लगाकर उन्होंने सिक्ख पंथ को आत्मनिर्भर, शक्तिशाली और अन्य धर्मों से निराला बनाया। उन्होंने अपनी बाणी द्वारा भी यह अद्वितिय कार्य किया है। श्री गुरु नानक देव जी के समय से चली आ रही अमृत वेले की मर्यादा को उन्होंने बाणी द्वारा निर्धारित किया, जहां उन्होंने केवल अमृत वेले को ही महत्व नहीं दिया वरन् सारा दिन काम करते हुए भी प्रभु-सिमरन करने का आदेश दिया। उनका शबद *"गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए"* इसका प्रमाण है। सिक्ख जीवन के चार प्रमुख संस्कार 'जन्म, अमृत, अनंद और अंतिम'। श्री गुरु रामदास जी ने विवाह की मर्यादा को निश्चित करने हेतु 'लावां' नामक छंदों की रचना की, जहां रूपक का प्रयोग करते हुए जिज्ञासु जीव-स्त्री का अटल प्रभु पति से मिलाप होता है। इसके चार मुख्य चरण उन्होंने बताए जो सारे का सारा जीवन अपने में समेट लेते हैं। इसी को आधार बनाकर सिक्ख विवाह रीति का निर्धारण किया गया और उनमें चार 'लावां' को अनिवार्य बनाया गया। इस प्रकार सिक्ख विवाह अपने आप में आध्यात्मिक गहराइयों को संजोए हुए केवल एक सामाजिक क्रिया अथवा आमोद-प्रमोद का साधन मात्र न रहकर एक उच्च धार्मिक कर्म बन गया। इसी प्रकार उन्होंने बाणी द्वारा अन्य सामाजिक बुराइयों का भी विरोध किया। दहेज जैसी घृणित प्रथा की उन्होंने बाणी द्वारा निषेधी की और केवल हरि-गुण-गायन को ही स्वयं भी अपने गुरु से मांगा।

गुरु जी की बाणी आकार और प्रकार दोनों ही पक्षों से महान है। उनकी सारी बाणी

एक जीवन-काव्य है। मानव-जीवन का कदाचित् ही कोई ऐसा अंग होगा जो उनकी दृष्टि से छूटा होगा। मानव मन का कदाचित् ही कोई ऐसा भाव होगा जिस पर उन्होंने ध्यान न दिया होगा। उनकी बाणी श्रेताओं को केवल साहित्यिक आनंद ही नहीं देती वरन् प्रभु-प्रेम से भी ओत-प्रोत कर देती है। सभी भावों का समावेश होते हुए भी उनकी बाणी में वैराग ही मुख्य भाव रहा है। अपने इष्ट के दर्शनों के लिए विह्वल होकर जब आतुर कंठ से गा उठते हैं :

--कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा हउ तिसु पहि आपु वेचाई ॥ *(पन्ना ७५७)*

--माई मोरो प्रीतमु रामु बतावहु री माई ॥
हउ हरि बिनु खिनु पलु रहि न सकउ जैसे करहलु बेलि रीझाई ॥ *(पन्ना ३६९)*

--मेरै मनि प्रेमु लगो हरि तीर ॥ (पन्ना ८६१)

तब सुनने वाला भी उसी भाव में बह कर प्रभु को पुकारने लगता है। कितना सहज और उच्च साधारणीकरण है जहां स्वयं परमात्मा गुरु साहिब और सिक्ख के चित्त का तादात्य हो जाए! भाव-पक्ष की दृष्टि से आपकी बाणी अद्भुत है, अतुल्य है, अनुपम है।

श्री गुरु रामदास जी के समूचे व्यक्तित्व और कृतित्व का गहनता से अध्ययन करने के पश्चात उनके स्वभाव में कई ऐसी विशेषताएं दिखाई देती हैं जिनका सम्मिश्रण ही उनका अस्तित्व है और उन्हें एक विलक्षण व्यक्तित्व बनाता है। उनके द्वारा स्वभाव में विनम्रता, दया, प्रेम और उदारता होने के कारण केवल सिक्ख समुदाय ही नहीं आम जनमानस भी उनके प्रति अथाह श्रद्धा रखता था। इसके बावजूद कोमल गुणों के साथ-साथ अत्याचारों और कुरीतियों का विरोध करते हुए, उन्होंने दृढ़ता को भी बनाए रखा। वे एक आदर्श सेवक और गरीबों के सहायक थे। उनकी एक विशेषता यह थी कि वे सदैव प्रसन्नचित्त रहते थे। चाहे उनके जीवन में कितने ही दुख क्यों न आए हों पर वे डगमगाए नहीं, वरन् उसे प्रभु की आज्ञा कहकर, नत्मस्तक होकर स्वीकारा और फिर चाहे जीवन में कितनी भी समृद्धि और वैभव क्यों न प्राप्त हुआ हो उन्होंने कभी अहंकार नहीं किया। यही कारण था जब उन्हें गुरतागद्दी प्राप्त हुई। तब भी उन्होंने भावभीने शब्दों से अपने गुरु को धन्यवाद दिया :

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥ (पन्ना १६७)

उन्होंने आजीवन अपने कर्त्तव्यों का पूर्णत: निर्वाह किया चाहे वह धार्मिक हो, पारिवारिक हो अथवा सामाजिक। अपने सभी कर्त्तव्यों को पूरा कर ४७ वर्ष की आयु में अपने सबसे छोटे सपुत्र को गुरु-पदवी प्रदान कर दी। श्री गुरु अरजन देव जी का गुरु-रूप में चयन भी गुणों के आधार पर ही किया गया। सन् १५८१ में वे सदा के लिए परम-ज्योति में लीन हो गए, परंतु बाणी के रूप में आज भी हमारे बीच विद्यमान हैं, क्योंकि स्वयं उन्होंने कहा था *"बाणी गुरू गुरू है बाणी . . . ॥"* उनका पूरा जीवन ही एक करामात था। सिक्ख और सेवक भी स्वयं उन्हें परमात्मा स्वरूप समझते थें। तभी भाई सत्ता और भाई बलवंड जी ने अपनी वार में यह कहा था :

धंनु धंनु रामदास गुरु जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ ॥
पूरी होई करामाति आपि सिरजणहारै धारिआ ॥
सिखी अतै संगती पारब्रहमु करि नमसकारिआ ॥
अटलु अथाहु अतोलु तू तेरा अंतु न पारावारिआ ॥
(पन्ना ९६८)

डॉ. हरीराम गुप्ता के अनुसार श्री गुरु रामदास जी

*-डॉ. नवरत्न कपूर**

प्रारंभिक जीवन : श्री गुरु रामदास जी का जन्म चूना मंडी, लाहौर में २४ सितंबर, १५३४ ई को हुआ था। माता-पिता की सबसे बड़ी संतान होने के कारण उन्हें 'जेठा' पुकारा जाता था। श्री गुरु रामदास जी की सात वर्ष की अवस्था होने तक उनके माता-पिता का स्वर्गवास हो चुका था। उनकी दादी उन्हें बासरके नामक अपने गांव में ले गई। श्री गुरु रामदास जी वहां पर पांच वर्ष रहे। उन दिनों तीसरे सिक्ख गुरु श्री गुरु अमरदास जी, दूसरे सिक्ख गुरु श्री गुरु अंगद देव जी की संगत में खडूर साहिब में निवास करते थे और इस बात की चर्चा सारे गांव में फैली हुई थी कि ६२ वर्ष की अवस्था के एक वृद्ध व्यक्ति ने अपना घर-बार छोड़ दिया है। श्री गुरु रामदास जी सन् १५४६ में खडूर पहुंचे और श्री गुरु अंगद देव जी की संगत में शामिल हुए। जब श्री गुरु अमरदास जी सन् १५५२ में गोइंदवाल में बस गए तो श्री गुरु रामदास जी भी इस नए नगर के स्थायी निवासी बन गए और अपना अधिकांश समय गुरु साहिब के दरबार में व्यतीत करने लगे। सन् १५५३ के आरंभ में श्री गुरु रामदास जी का विवाह श्री गुरु अमरदास जी की छोटी बेटी बीबी भानी जी से हुआ।

श्री गुरु रामदास जी सन् १५७४ में गुरगद्दी पर आसीन हुए। उस समय वे चालीस वर्ष की अवस्था के थे और कुल सात वर्ष ही गुरु-घर का कार्य चलाया। उनके द्वारा संपन्न हुए महान कार्यों का विवरण प्रस्तुत है :

श्री अमृतसर : श्री गुरु अमरदास जी ने अपने शिष्य भाई जेठा जी को अपने निवास हेतु इच्छित स्थान चुनने के लिए कहा। इसके फलस्वरूप श्री गुरु रामदास जी ने गोइंदवाल से ४० किलोमीटर की दूरी पर स्थित एक जंगली इलाका चुना, जो कि गिलवाली, गुमटाला, सुलतानविंड तथा तुंग नामक चारों गांवों के मध्य में था और उस क्षेत्र में पवित्र जलाशय था। यह 'शामलात भूमि' थी। ऐसा प्रतीत होता है कि इन गांवों के चौधरियों के साथ विचार-विनिमय करके यह मुगल बादशाह अकबर ने श्री गुरु रामदास जी को भेंट की। ये चौधरी पुराने रीति-रिवाजों के अनुसार समकालीन बादशाह की सर्वथा आज्ञापालन करते थे। सरोवर की खुदाई सन् १५७७ में आरंभ हुई और इसे ही 'अमृतसर' नगर का स्थापना वर्ष माना जाता है। इसकी पुष्टि Gazettee of Amritsar से होती है, जिसके अनुसार उन्हें श्री गुरु रामदास जी को अकबर बादशाह ने ५०० बीघा जमीन जागीर के रूप में भेंट की थी। इसके लिए जमीन के मालिक, तुंग के जमींदार को ७०० रुपए अकबरी (मुगलखाने से) चुकाए गए थे।

वहां पर उन्होंने एक सरोवर खुदवाया। यह सरोवर 'अमृत सरोवर' कहलाया। 'अमृत' का यह 'सरोवर' गोइंदवाल के उत्तर-पश्चिम भाग में ४० किलोमीटर की दूरी पर है। बाबा बुड्ढा जी की देख-रेख में इस सरोवर का निर्माण करवाया गया था। सरोवर के चारों

**९०१, टावर डी-३, सागर दर्शन सोसाइटी, पाम बीच रोड, सेक्टर-१८, नेरूल (नवीं मुंबई)-४००७०६*

ओर कई बस्तियां उभर आईं। इस सारे क्षेत्र को 'गुरु का चक्क' या 'चक्क गुरु' या 'चक्क रामदास' अथवा 'रामदास पुरा' पुकारा जाता था। छोटे व्यापारियों और दुकानदारों ने सरोवर खोदने वालों (मजदूरों) की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए कुछ दुकानें भी खोल ली थीं। यह व्यापार-केंद्र कालांतर में 'गुरु का बाजार' कहलाने लगा। श्री गुरु रामदास जी ने एक और सरोवर खुदवाना शुरू किया जिसका नाम 'संतोखसर' है।

बाबा श्रीचंद का आगमन : श्री गुरु नानक देव जी के बड़े सपुत्र बाबा श्रीचंद ने त्यागी बनकर 'उदासी' नामक नए संप्रदाय की स्थापना कर ली थी। वह न तो श्री गुरु अंगद देव जी से और न ही श्री गुरु अमरदास जी से भेंट करने कभी आया। लगभग ४० साल बीत जाने पर बाबा जी के गुस्से-गिले काफी लुप्त हो गए। वह श्री गुरु रामदास जी के दर्शनार्थ आया। श्री गुरु रामदास जी ने उनका स्वागत गोइंदवाल की सीमा पर किया और उन्हें पांच सौ रुपए की नकद राशि के साथ मिठाइयां भेंट कीं। फिर भी हंसी में बाबा श्रीचंद ने कहा, "आपने बड़ी लंबी दाढ़ी बढ़ा रखी है!" इस पर श्री गुरु रामदास जी ने बड़े विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया "हां जी, मैंने दाढ़ी इसलिए बढ़ा रखी है ताकि इससे आपके चरण पोंछ सकूं।" (Yes! I have grown a long beard so that I may wipe they feet therewith) और वास्तव में वे ऐसा करने के लिए आगे बढ़े। (and he actually proceeded to do so.) इस पर बाबा श्रीचंद ने उन्हें रोकते हुए कहा, "हे महान पातशाह! आप मेरे पिता की गुरगद्दी पर आसीन हैं, अत: आप मुझसे वरिष्ठ हैं। आपकी इसी (विनम्रतापूर्वक) जादुई करनी के फलस्वरूप ही आपको गुरु-पदवी प्राप्त हुई है। मुझमें ऐसी शक्ति नहीं थी। इसी कारण मैं गुरगद्दी से वंचित रहा। जो भी सिक्ख आपके दर्शनार्थ आते हैं, उनका संरक्षण आप करते हैं।" इस प्रशंसा के बावजूद श्री गुरु रामदास जी सिक्ख धर्म के अस्तित्व को अविकल बनाए रखने के प्रति सावधान रहे।

आपसी भाईचारा : श्री गुरु रामदास जी ने अपने सिक्खों को यही उपदेश दिया कि जहां तक हो सके वे दूसरों की सेवा में संलग्न रहें। इसकी पुष्टि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज उनकी बाणी से होती है, जिसका अनुवाद विद्वानों ने इस प्रकार किया है :

"(हे वाहिगुरु!) मैं पंखा झुलाऊं और (कुएं से) पानी खींच कर (लोगों को पिलाऊं) और जो भी आप खाने को दें वही भोजन करूं।"

"सारंग की वार" में उन्होंने लिखा है : "यदि किसी धार्मिक व्यक्ति को धन-दौलत मिल जाए तो कोई बुरी या गैर-धार्मिक बात नहीं, किन्तु उसे इस प्राप्ति का उपयोग दान जैसे भगवद कार्यों में करना चाहिए और आराम से जीना चाहिए।"

उन्होंने सिक्खों को कहा, "यदि कोई सिक्ख महत्वपूर्ण व्यापार (कार्य) करता है तो उसे सहयोग दीजिए और (वाहिगुरु से) उसके लिए प्रार्थना कीजिए। यदि आप समझते हैं कि उसका कामकाज बिना पैसे के नहीं हो सकता तो उसके लिए हर प्रकार से धन जुटाएं और उसमें अपनी ओर से भी कुछ डालें।"

गुरु साहिब की यह विनम्रता और भक्ति-भाव उनके पैरोकारों के लिए एक प्रेरणास्रोत बन गया। वे प्रतिदिन 'लंगर' में पधारते और अपने शिष्यों के साथ एक-समान सेवा करते। इस संबंध में उनके मनोहर वचन होते : "जैसे एक माता अपने बालक को भोजन करते देख कर अथवा एक मछली पानी में रहकर खुश होती

(शेष पृष्ठ ७५ पर)

"सिक्ख रिलीजन" कृत मैकालिफ में श्री गुरु रामदास जी का जीवन-वृत्तांत

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

गुरमति और सिक्ख-इतिहास के अध्ययन के प्रति संपूर्ण जीवन अर्पित कर देने वाले महान विद्वान मैक्स आर्थर मैकालिफ ने अपने शोध ग्रंथ "सिक्ख रिलीजन" के दूसरे भाग में चतुर्थ पातशाह श्री गुरु रामदास जी का जीवन-वृत्तांत और चयनित बाणी प्रस्तुत की है।

जन्म एवं पूर्व जीवन : मैकालिफ ने चौथे पातशाह के जन्म एवं पूर्व जीवन का वृत्तांत श्री गुरु अमरदास जी की जीवन-कथा के अंतर्गत दिया है। मैकालिफ लिखता है कि लाहौर शहर के चूना मंडी इलाके में ठाकर दास और जसवंती नाम के दंपत्ति रहते थे। इनका एक छोटा बेटा था 'हरिदास'। बड़े होने पर भाई हरिदास का विवाह बीबी अनूप देवी से हुआ जिसे विवाह के बाद दया कौर कहा जाने लगा। पति-पत्नी दोनों की रुचियां आध्यात्मिक थीं। दोनों एक परमात्मा को मानते, संतों की सेवा करते और अमृत-वेला में उठकर भक्ति व सिमरन करते। बारह वर्षों की तपस्या के बाद उनके घर में कार्तिक की अमावस्या के दूसरे दिन संवत् १५९१ वि. (सन् १५३४ ई.) को एक पुत्र का जन्म हुआ। इस बच्चे का नाम 'रामदास' रखा गया, परंतु पहली संतान होने के कारण इसे आम तौर पर 'जेठा' कह कर पुकारा जाता। मैकालिफ के अनुसार भाई जेठा गोरे रंग का, सुंदर डीलडौल वाला, मनमोहक और हंसते हुए चेहरे वाला बच्चा था।

भाई जेठा जी कुछ बड़े हुए तो साधु-संतों की संगत में जाने लगे। माता-पिता चाहते थे कि बेटा अपने गुजारे के लिए कोई काम, कोई रोजगार शुरू कर दे, सो उसने 'उबले चने' बेचने शुरू कर दिये। माता रोज उसे कुछ चने उबाल देती जिसे टोकरी में डाल कर भाई जेठा जी रावी के किनारे जा बैठते। अक्सर वे अपना सारा सामान संतों को खिला देते।

इसी तरह एक दिन भाई जेठा जी ने कुछ लोगों का एक समूह देखा जो कीर्तन करते चले जा रहे थे। पूछने पर पता चला कि वे सिक्ख हैं और गोइंदवाल साहिब तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी के दर्शनों को जा रहे हैं। भाई जेठा जी उनके साथ ही हो लिये और तीसरे पातशाह ने उपदेश दिया--"किरत कर और सेवा कर।"

भाई जेठा जी भक्ति-भाव से सेवा में जुट गये। वे गुरु जी की सेवा-टहल करते, लंगर में परसादे पकाते, पानी लेकर आते, जंगल में से लकड़ियां लाते और जब कोई काम न होता तो बाउली साहिब की खुदाई करते। शेष समय में घुंघणियां बेच कर अपने लिए जीविका कमाते। गुरु जी भाई जेठा जी की विनम्रता और सेवा-भावना से अत्यंत प्रसन्न रहते।

भाई जेठा जी-बीबी भानी जी का अनंद-कारज : एक दिन तीसरे पातशाह साहिब श्री गुरु अमरदास जी के सपुत्नी माता मनसा देवी जी खेल में लगी सपुत्री बीबी भानी जी को देखकर गुरु जी से बोले कि बेटी अब जवान हो गई है, अब इसका विवाह कर देना चाहिए।

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब। मो: ०९४१७२-७६२७१*

गुरु जी ने पूछा, "वर कैसा होना चाहिए?" तो माता जी ने घुंघणियां बेच रहे भाई जेठा जी को देखकर कहा कि वर तो 'जेठा' जैसा होना चाहिए। गुरु जी ने उत्तर दिया कि 'जेठे' जैसा तो खुद 'जेठा' ही है। इस प्रकार भाई जेठा जी और बीबी भानी जी का अनंद-कारज सम्पन्न हुआ। मैकालिफ लिखता है कि लाहौर चूना मंडी से भाई जेठा जी के माता-पिता को सादर बुलवाया गया और २२ फाल्गुन, संवत् १६१० (सन् १५५३ ई) को अनंद-कारज की रस्में पूरी की गईं। भाई जेठा जी के माता-पिता चाहते थे कि उनका बेटा-बहू उनके साथ लाहौर में ही रहें, परंतु भाई जेठा जी कुछ समय ही लाहौर में रह पाये और गुरु की विरह में व्याकुल होकर गोइंदवाल साहिब वापस आ गये। कुछ समय बाद भाई जेठा जी-बीबी भानी जी के घर तीन पुत्रों- प्रिथीचंद, महांदेव और (गुरु) अरजन देव जी का जन्म हुआ।

भाई जेठा जी की अकबर के दरबार की फेरी : इन्हीं दिनों तीसरे पातशाह के मानवीय समानता के लिए किये जा रहे प्रयासों से नाराज होकर अनेक जाति-अभिमानियों ने बादशाह अकबर के पास जा शिकायत की। मैकालिफ ने इस प्रसंग का बड़े विस्तार से वर्णन किया है। गुरु जी ने भाई जेठा जी को अकबर के दरबार में भेजा। भाई जेठा जी ने वहां गुरमति-चिंतन की सुंदर व्याख्या की जिससे प्रभावित होकर अकबर ने जाति-अभिमानियों के विरुद्ध फैसला सुनाया।

अमृत-सरोवर का निर्माण : बादशाह अकबर जब गोइंदवाल साहिब में गुरु जी के दर्शनों को आया था तब जाते समय वह कई जागीरें बीबी भानी जी के नाम लगा गया था। बाबा बुड्ढा जी इन जागीरों का प्रबंध देखते थे। तीसरे पातशाह की इच्छा थी कि इस स्थान पर नये सरोवर और नगर की स्थापना हो। गुरु जी की आज्ञा शिरोधार्य करके भाई जेठा जी ने वहां 'अमृत सरोवर' की खुदाई आरंभ करवाई और सरोवर के आस-पास नगर बसाने का कार्य शुरू कर दिया।

गुरिआई-प्राप्ति : मैकालिफ के अनुसार भादों सुदी त्रयोदश संवत् १६३१ वि. (सन् १५७४ ई) को भाई जेठा जी श्री गुरु रामदास जी के रूप में गुरगद्दी पर विराजमान हुए। तीसरे पातशाह ने भाई जेठा जी को सभी प्रकार से योग्य जानकर गुरगद्दी की जिम्मेदारी सौंपी। बाबा बुड्ढा जी ने परंपरा के अनुसार गुरिआई की रस्में अदा कीं।

श्री रामदास जी को 'गुरु-पद' प्रदान करके तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी २२ वर्ष आध्यात्मिक राज्य करके गोइंदवाल साहिब में ज्योति-जोत समा गये।

'नाम' की महिमा का वर्णन : एक दिन सिक्खों ने गुरु जी से पूछा कि शास्त्रों में तीर्थ-स्नान के पुण्य का बड़ा वर्णन है परंतु आप कहते हो 'नाम' जपना ही सबसे बड़ी पूजा है, कृपा करके मन की शंका दूर करें। गुरु जी ने उत्तर दिया कि जो तीर्थों पर जाते हैं वे कई तरह का शोषण करते हैं और जिन्हें वे दान देते हैं वे दूसरों के सामने उनकी खुशामद भरी प्रशंसा करते हैं। ऐसे लोगों का उद्धार कैसे होगा? फिर गुरु जी ने श्री गुरु नानक देव जी के शबद *"तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है"* का उच्चारण करके सिक्खों को समझाया कि नाम जपने वाले को तीर्थों पर भटकने की जरूरत नहीं, वे सहज ही भ्रमों तथा भटकाव से मुक्त हो जाते हैं।

श्रीचंद से भेंट : एक बार पहले पातशाह श्री गुरु नानक देव जी के सपुत्र श्रीचंद गोइंदवाल

साहिब आये। गुरु जी ने उनका हार्दिक स्वागत किया। बातचीत के दौरान श्रीचंद ने पूछा कि "आपने इतनी लम्बी दाढ़ी क्यों रखी हुई है?" गुरु जी बोले, "ताकि इससे आपके चरण पोंछ सकूं।" गुरु जी जैसे ही उठकर चरण पोंछने को झुके तो उनकी विनम्रता से कायल होकर श्रीचंद ने अपने चरण परे करके कहा कि "आप मेरे पिता की गद्‌दी पर हो इसलिए मेरे लिए पिता के समान ही बड़े हो।"

योगियों से वार्ता : एक बार कुछ योगी गोइंदवाल साहिब आये। उन्होंने गुरु जी की परीक्षा लेनी चाही। बड़े योगी ने कहा कि आपके सिक्ख अष्टांग योग नहीं करते, इसके बिना मन को शांति नहीं मिलती। इनकी आत्मा चौरासी लाख योनियों में भटकती रहेगी। गुरु जी ने विनम्रता से *"हथि करि तंतु वजावै जोगी थोथर वाजै बेन"* शबद का गायन किया और योगियों को समझाया कि भक्ति के बिना योग व्यर्थ है। योगी गुरु जी को प्रणाम करके चले गये।

भाई गुरदास जी को आगरा भेजना : इन्हीं दिनों भाई गुरदास जी गुरु जी की सेवा में हाजिर हुए। गुरु जी ने उन्हें सिक्खी के प्रचार के लिए आगरा जाने की आज्ञा दी।

अमृत-सरोवर का निर्माण-बीबी रजनी का प्रसंग : उधर 'अमृत सरोवर' के निर्माण का कार्य जारी था। इसी संदर्भ में मैकालिफ ने पट्‌टी के राजा की पुत्री बीबी रजनी के प्रसंग का भी विस्तार से वर्णन किया है। 'अमृत सरोवर' के स्थान पर स्थित 'छपड़ी' में बीबी रजनी के कोढ़ी पति के ठीक हो जाने वाली लोक-प्रसिद्ध घटना को मैकालिफ ने बड़े सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है।

गुरु जी के उपदेश : मैकालिफ ने विभिन्न साखियों के माध्यम से गुरु जी के विभिन्न उपदेशों का वर्णन भी किया है। बिशनदास, माणिक चंद, पुरू, हंडाल, तुलसा, घनैय्या, धरमदास, डूगर दास, बुल्ला, तीरथ आदि की साखियों का त्याग, वंड छको जैसे उपदेशों को बख्शते हुए वर्णन किया है।

पुत्रों की परीक्षा-प्रिथीए की मक्कारी : एक बार चौथे पातशाह के ताये का पुत्र सहारी मल अपने पुत्र के विवाह का न्योता देने गुरु जी के पास आया। अमृत-सरोवर के निर्माण में व्यस्त होने के कारण गुरु जी ने विवाह-समारोह में जाने में असमर्थता व्यक्त की परंतु वादा किया कि वे अपनी जगह अपने एक पुत्र को विवाह पर अवश्य भेजेंगे।

पहले गुरु जी ने प्रिथीचंद को विवाह पर लाहौर जाने की आज्ञा दी, परंतु प्रिथीचंद ने बहाने बना कर इंकार कर दिया, क्योंकि उसे डर था कि उसके जाने से उसे चढ़ावे में हेराफेरी करने का मौका लंबे समय तक नहीं मिल पायेगा। दूसरे पुत्र महादेव ने भी पिता की आज्ञा नहीं मानी। अंततः (गुरु) अरजन देव जी से कहा गया तो वे तुरंत गुरु-आज्ञा मान लाहौर चले गये।

लम्बे समय तक गुरु-पिता से अलग रहकर (गुरु) अरजन देव जी वियोग में तड़पने लगे परंतु गुरु-आज्ञा के बिना वे वापस नहीं आ सकते थे, अतः उन्होंने गुरु-पिता को पत्र लिखा।

इधर प्रिथीचंद नहीं चाहता था कि (गुरु) अरजन देव जी वापस आयें। उसने चिट्‌ठी गुरु जी तक पहुंचने ही नहीं दीं।

जब कई दिन तक उत्तर न आया तो (गुरु) अरजन देव जी ने फिर पत्र लिखा, परंतु प्रिथिए ने उसे भी गायब करा दिया। अंततः (गुरु) अरजन देव जी ने तीसरी चिट्‌ठी लिखी

(शेष पृष्ठ ७९ पर)

"पूरी होई करामाति" कृत प्रिं सतिबीर सिंघ की नजर में श्री गुरु रामदास जी

-प्रिं अमरजीत कौर*

प्रिं सतिबीर सिंघ ने बड़े खूबसूरत ढंग से अमृत-सरोवर के निर्माता श्री गुरु रामदास जी की जीवनी को "पूरी होई करामाति" नामक पुस्तक में वर्णित किया है। प्रिंसीपल सतिबीर सिंघ की यह पुस्तक सिक्ख इतिहास श्रृंखला की चौथी पुस्तक है। लेखक ने इस पुस्तक में श्री गुरु रामदास जी के जीवन को दस अध्यायों में बयान किया है।

पहले अध्याय में श्री गुरु रामदास जी के वंश, प्रकाश और बाल्यकाल का जिक्र किया गया है। श्री गुरु रामदास जी के बुजुर्ग सोढी वंश में हुए और उन्होंने अपना ठिकाना लाहौर, चूना मंडी में किया। श्री गुरु रामदास जी के पिता श्री हरिदास जी का जन्म भी इसी स्थान पर हुआ। श्री हरिदास जी बहुत ही संतोषी स्वभाव के मालिक थे। वे अमृत वेले जागते और प्रभु की भक्ति में जुड़ जाते। उनकी अरदास थी कि उनके घर एक ऐसा पुत्र पैदा हो जो उनकी कुल का नाम रौशन करे और वो प्रभु का प्यारा हो।

श्री हरिदास जी की शादी के पूरे बारह वर्ष बाद माता दया कौर के घर २५ सितंबर (अधिकतर स्रोतों में २४ सितंबर), १५३५ को श्री गुरु रामदास जी का प्रकाश हुआ और उन्होंने उनका नाम 'जेठा' प्रचलित हुआ। भाई जेठा जी से छोटे एक भाई और एक बहन थी। भाई जेठा जी बचपन से ही अडोलचित्त और धैर्यवान व धर्म-स्वरूप थे। जब वे अपने साथियों के साथ खेलते तो भक्ति-भाव की बातें करते।

जब भाई जेठा जी सात साल के थे तो पहले उनके माता जी और फिर पिता जी का देहांत हो गया। इस तरह बड़ा भाई होने के कारण छोटे भाई और बहन को पालने की जिम्मेदारी भाई जेठा जी के कंधों पर आ पड़ी। भाई जेठा जी फेरी लगाकर अपने परिवार का पालन करने लगे। फिर आपके नानी जी आपको और आपके छोटे बहन-भाई को अपने साथ गांव बासरके (जिला अमृतसर) ले आए।

दूसरे अध्याय में प्रिंसीपल साहिब ने श्री गुरु रामदास जी के अगले दस वर्ष का जिक्र किया है जो उन्होंने बासरके गांव में गुजारे थे। बासरके तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी की जन्म-भूमि भी है। श्री गुरु अमरदास जी भाई जेठा जी की नानी के घर आए। उन्होंने भाई जेठा जी की नानी के साथ दुख का इजहार किया। श्री गुरु अमरदास जी ने भाई जेठा जी की तरफ देखा तो उनका दमकता चेहरा देख श्री गुरु अमरदास जी ने उनके हौंसले की दाद दी। श्री गुरु अंगद देव जी ने श्री गुरु अमरदास जी को गोइंदवाल बसाने को कहा तो श्री गुरु अमरदास जी अपने परिवार को लेने बासरके पहुंचे। फिर जब श्री गुरु अमरदास जी गोइंदवाल जाने लगे तो सारा गांव उन्हें विदा करने आया। भाई जेठा जी की उम्र उस समय सोलह वर्ष हो गई थी। उन्होंने भी श्री गुरु अमरदास

*न्यू अमृतसर मॉडल स्कूल, गोबिंद नगर, भुल्लर रोड, बटाला (गुरदासपुर)-१४३५०५, मो : ९७८१६-०६९२२

जी के साथ जाने का मन बना लिया। भाई जेठा जी भी गोइंदवाल में अपनी किरत करते और सेवा में जुटे रहते। भाई जेठा जी रोजाना दीवान की हाजरी भरते और सेवा में लगे दिखाई पड़ते। एक बार जब भाई जेठा जी सेवा में लगे हुए थे तो श्री गुरु अमरदास जी भाई जेठा जी से पूछ बैठे, "बासरके छोड़ यहां क्यों आए हो?" बड़ी अधीनगी से भाई जेठा जी ने कहा, "सांसारिक जरूरतें और शारीरिक ख्वाहिशें छोड़ यहां आया हूं।" उस समय श्री गुरु अमरदास जी ने आशीष देते हुए कहा, "अगर सांसारिक इच्छाओं, लालसाओं और मोह को छोड़ आए हो तो सच्ची पातशाही भी तुम्हें ही मिलेगी। सच्चा तख्त और सच्ची पातशाही उन्हीं को मिलती है जो किरत और सेवा में मन लगाते हैं।"

दिसंबर १५५२ में भाई जेठा जी का विवाह श्री गुरु अमरदास जी की छोटी सपुत्री बीबी भानी जी के साथ हुआ।

तीसरे अध्याय में प्रिंसीपल साहिब ने भाई जेठा जी की कठिन कमाई और जिम्मेदारियों का जिक्र किया है। भाई जेठा जी ने २२ वर्ष गोइंदवाल में सेवा की। भाई जेठा जी कई-कई दिन तक सेवा में इतने व्यस्त हो जाते कि श्री गुरु अमरदास जी की हाजरी भरनी भी मुश्किल हो जाती। भाई जेठा जी सुबह से देर रात तक सेवा में ही जुटे रहते। पहले लंगर तैयार करते, संगत को पंगत में बिठा कर छकाते, ठंडा जल भर कर लाते, प्रत्येक की आवश्यकता पूरी करते, शबद सुनाते, प्रत्येक आए-गए श्रद्धालु और सिक्ख-संगत का ख्याल रखते। इस सेवा से श्री गुरु अमरदास जी बहुत खुश होते और कहते "जो संगत की सेवा मेरा रूप जान करते हैं उन्हें नौ निद्धियां-अठारह सिद्धियां प्राप्त होती हैं।"

गोइंदवाल साहिब सेवा करते समय की प्रत्येक घटना का जिक्र श्री गुरु रामदास जी ने अपनी बाणी में किया है। श्री गुरु अमरदास जी भी भाई जेठा जी की सेवा-भावना, उनकी सियानप, सहन-शक्ति, कुछ सुनने और सहने की ताकत को जान गए थे। एक समय जब कुछ सनातनी लोगों ने उस समय के बादशाह अकबर से शिकायत की कि गोइंदवाल में श्री गुरु अमरदास जी ने एक नया 'पंथ' चला दिया है, वर्ण-आश्रम वाला धर्म छोड़ दिया है, 'वाहिगुरु' सिमरते हैं, 'राम-राम' नहीं जपते। फिर बादशाह अकबर ने संदेशा भेजा कि इसका जवाब दें या किसी को भेजें। श्री गुरु अमरदास जी ने उस समय यह निर्णय लिया कि भाई जेठा जी को भेजा जाए जो उनकी सभी आशंकाओं का निवारण करे। भाई जेठा जी लाहौर गए और दरबार में पहुंचे तो सनातनी लोगों के प्रत्येक प्रश्न का उत्तर बाखूबी दिया। बादशाह अकबर भाई जेठा जी के उत्तरों से ऐसा प्रभावित हुआ कि उसने इच्छा जाहिर की कि वे लाहौर से लौटते समय गोइंदवाल गुरु-दर्शनों के लिए अवश्य रुकेगा। लेखक ने यहां पर भाई जेठा जी के और सनातनी लोगों के बीच में हुए वार्तालाप को बड़ी खूबसूरती से बयान किया है और अलग-अलग ग्रंथों से हवाले देकर श्री गुरु रामदास जी की महिमा का वर्णन किया है। लगता है लेखक ने बड़ी गहराई से श्री गुरु रामदास जी की बाणी को पढ़ और समझ कर सारा वृत्तांत प्रस्तुत किया है।

भाग ४ में लेखक ने *"जन दीपक ते दीप जगायो"*, *"घालि थाइ पई"* का जिक्र किया है। इसमें लेखक ने बड़ी खूबसूरती से हवाले देते हुए समझाने की कोशिश की है कि गुरगद्दी किसी

की कोई निजी विरासत नहीं है। यह 'ज्योति' है जो पहले गुरु नानक साहिब में आई, फिर यही 'ज्योति' श्री गुरु अंगद देव जी में गई और इस तरह यह दस गुरु साहिबान में समाहित होती गई। फिर लेखक ने बड़ी गहराई से इस पुस्तक में बयान किया है कि अगर गुरगद्दी खसमै की वडिआई अर्थात् देन है तो ये परख-परीक्षाएं क्यों? लेखक ने इस बात का उत्तर देते हुए जिक्र किया है कि यह 'खसमै की दात' जरूर थी लेकिन मिलती सच्चे सेवक को ही थी। फिर लेखक ने इस बात का भी खंडन किया है कि कुछ लेखकों ने गलती खाकर इतिहास में लिखा लगता है कि बीबी भानी जी द्वारा गुरु अमरदास जी से वर मांगने पर ही भाई जेठा जी को गुरिआई की दात प्राप्त हुई। ऐसा नहीं था। गुरगद्दी के दावेदार और भी थे, परंतु यह दात 'धुर दरगाह' से प्राप्त होने वाली दात है। यहां पर लेखक ने बड़ी सूझबूझ से विभिन्न स्रोतों से हवाले देकर समझाया है जिससे उसकी गुरु साहिब और ऐतिहासिक ग्रंथों के बारे में गहरी जानकारी का पता चलता है।

सितंबर १५७४ को श्री गुरु अमरदास जी भाई जेठा जी को गुरगद्दी पर बिठा परलोक गमन कर गए।

लेखन ने पांचवें भाग में श्री गुरु रामदास जी के गुरिआई के पहले वर्षों का जिक्र किया है। गुरु साहिब ने गुरु नानक साहिब के प्रचार-मिशन को आगे बढ़ाया और कलयुगी जीवों को सिखलाया कि दुनिया में कैसे रहना है। लोगों को अवगुण बेचने और गुण खरीदने की युक्ति सिखलाई गई। लेखक ने भट्ट बाणी में से श्री गुरु रामदास जी के जीवन-चरित्र के बारे में व्याख्या करते हुए श्री गुरु रामदास जी की महिमा का जिक्र किया है कि "सारे जगत में उनके नाम की चर्चा हो रही है। कोई कह रहा है कि श्री गुरु रामदास जी के हृदय में काम-क्रोध नहीं है, वे प्रेम-स्वरूप हैं, माया से निर्लेप रहते हैं, सुंदर गुणों के स्वरूप हैं। वे जब वचन करते हैं तो अच्छे-बुरे का भेद समझा देते हैं। वे सरल स्वभाव, सुशील मन और उदार हृदय वाले हैं।"

फिर लेखक ने गुरु साहिब द्वारा रची गई बाणी का भी जिक्र किया है। गुरु साहिब की सबसे प्रसिद्ध बाणी 'लावां' है, जिसका प्रत्येक मनुष्य के साथ संबंध जुड़ा हुआ है। गुरु साहिब ने ३० रागों और कई उप-रागों में भी बाणी की रचना की। गुरु साहिब ने "घोड़ीआं, करहले, वणजारा, पहरे" भी लिखे।

गुरु साहिब ने संगत को उपदेश दिया कि परमात्मा के नाम से बड़ा कोई तीर्थ नहीं है। गुरु साहिब की महिमा दूर-दूर तक फैल गई है। गुरु साहिब के दर्शनों के लिए सिद्ध, योगी, तपे आदि आए और सभी ने अपनी आशंकाएं निवृत्त कीं। इस तरह लेखक ने श्री गुरु रामदास जी की महिमा और उनके यश का गायन करते हुए गुरु साहिब के गोइंदवाल साहिब में गुजारे वर्षों को बयान किया।

छठा अध्याय, जो इस पुस्तक के नजरिए से बहुत महत्वपूर्ण है, वो है श्री अमृतसर शहर की स्थापना। इसमें लेखक ने श्री अमृतसर के निर्माण-इतिहास, महिमा और महत्ता का वर्णन किया है। यहां लेखक ने श्री अमृतसर शहर के लिए जमीन लेने और नगर बसाने से पहले आसपास के गांवों का जिक्र बड़े विस्तारपूर्वक किया है। इससे यह भी पता चलता है कि लेखक द्वारा इस बारे में बहुत खोज की गई है।

श्री अमृतसर नगर बसाने का सपना श्री गुरु अमरदास जी का था। उन्होंने श्री गुरु

रामदास जी को पूरा नक्शा समझाकर गांव तुंग और सुलतानविंड के बीच रमणीक स्थान पर नगर की नींव रखने को भेजा। यह बात १५७३ ई के आरंभ की है। लेखक ने दूसरे इतिहासकारों के द्वारा दिए हवालों के आधार पर लिखा है कि जहां अमृत-सरोवर है वहां पर पहले गुरु श्री गुरु नानक देव जी भी आए थे। इसी स्थान पर वृक्षों का भारी झुंड था और साथ ही एक तालाब भी था। श्री गुरु रामदास जी ने इसी तालाब पर सरोवर की खुदाई शुरू की और नगर का शिलान्यास रखा। इस स्थान के पास सबसे पहले श्री गुरु रामदास जी ने अपने रहने के लिए घर बनाया, जो 'गुरु का महल' कहलाया। लेखक ने इस शहर के नाम के बारे में लिखा है कि श्री गुरु रामदास जी ने सबसे पहले इसका नाम 'अमरसर' रखा, जो अन्य किसी इतिहासकार ने नहीं लिखा। श्री गुरु रामदास जी द्वारा इस नगर का नाम 'अमरसर' रखने के बाद (१५७७ ई के पश्चात) 'चक्क गुरु रामदास' के नाम से जाना जाने लगा और बाद में यह नगर 'अमृतसर' नाम से प्रसिद्ध हो गया। कुछ ही समय में चारों ओर खबर फैल गई कि गुरु जी एक अनुपम नगरी बसाकर रह रहे हैं। संगत प्रेम और सेवा के अद्वितीय नजारे देखने आई। श्री गुरु रामदास जी गोइंदवाल से पूरी तरह 'गुरु का चक्क' आकर रहने लगे और शहर को बाजारों एवं मुहल्लों में बांटा। हर मुहल्ले के बाहर कुएं खुदवाए। दूर-दूर तक संदेश भेजकर व्यापारियों को यहां बसने को कहा। विशेष तौर पर कारीगरों को बुलाकर आदर सहित बसाया। ५२ तरह के अलग-अलग काम करने वाले कारीगरों को यहां बसाया गया। 'गुरु का चक्क' ऐसा था जहां कोई जजीआ, कोई जकात या किसी राजा-बादशाह का कोई कर नहीं लगता था। शहर अपने आप में सम्पूर्ण था। बाद में यह स्थान सिक्खों का केंद्रीय स्थान बन गया।

लेखक ने सातवें कांड में श्री गुरु रामदास जी के अपनी जन्म-भूमि लाहौर, चूना मंडी जाने का जिक्र किया है। श्री अमृतसर शहर पूरी तरह बस जाने के बाद श्री गुरु रामदास जी संगत को नित्य की कार समझाने लगे। गुरु साहिब अमृत वेले उठकर नित्तनेम करते, फिर गुरु के महल से चलकर सरोवर की कार-सेवा देखते, दीवान सजाते, कीर्तन होता, संगत को परमात्मा के नाम की महिमा बताते, उपदेश देते। फिर गुरु जी लाहौर की संगत के कहने पर लाहौर भी गए। आप ने ठिकाना अपने पुशतैनी घर चूना मंडी में ही किया। जिस बरादरी के लोगों ने श्री गुरु रामदास जी को ताना मारा था वे भी गुरु जी के चरणों में आ गिरे। लाहौर की संगत को उपदेश देने हेतु कुछ दिन वहां रहने के बाद फिर वापिस अमृतसर आ गए।

लेखक ने इसी अध्याय में बादशाह अकबर की श्री अमृतसर-फेरी का भी जिक्र किया है और सन् १५७८ ई में श्री गुरु रामदास जी के दरबार में आना लिखा है। यह हवाला लेखक ने ज्ञानी गिआन सिंघ और बूटेशाह की लिखित के आधार पर दिया है।

श्री गुरु रामदास जी की नम्रता श्री गुरु नानक देव जी के बड़े सपुत्र बाबा श्रीचंद को भी खींच लाई। लेखक ने जिक्र किया है कि बाबा श्रीचंद न तो श्री गुरु अंगद देव जी के दर्शन को आए और न ही श्री गुरु अमरदास जी के दर्शन को, लेकिन श्री गुरु रामदास जी की उपमा ऐसी फैली कि वे अमृतसर-दर्शन को आए। गुरु साहिब ने उनका पूरा सत्कार

किया। बाबा श्रीचंद उनकी सेवा और आदर-भाव से बहुत खुश हुए और गुरु साहिब का गुणगान करते हुए विदा हुए।

आठवें अध्याय में लेखक ने कनिंघम और अंग्रेजी भाषा के लेखकों के हवालों को नकारते हुए कि श्री गुरु रामदास जी के समय सिक्खी ज्याद फली-फूली नहीं, के सम्बंध में भाई गुरदास जी और मैकालिफ के हवालों से सही ठहराते हुए लिखा है कि गुरु जी के समय सिक्खी का प्रचार हिंदोस्तान के बाहर काबुल, कंधार और गजनी तक भी जा पहुंचा था। गुरु साहिब ने मसंदों को दूर-दूर प्रचार के लिए भेजा।

गुरु साहिब के समय सिक्खों की गिनती काफी बढ़ गई और गुरु साहिब का यश दूर-दूर तक फैल गया। गुरु साहिब आई हुई संगत की आशंकाएं निवृत्त करते और उनको अपना सिक्ख बना कर दूर-दूर तक परमात्मा के नाम जपने तथा सिक्खी के प्रचार के लिए भेजते। लेखक ने गुरु साहिब के सिक्खों में भाई तीरथा, भाई माणक चंद, भाई पूरो, भाई बिशन दास, भाई पदारथ, भाई तारू, भाई भारू, भाई महांनंद, भाई बिधी चंद, भाई धरम दास, भाई दीपा, भाई जेठा, भाई संसारू, भाई बूला, भाई मईआ, भाई जापा, भाई तुलसा, भाई भिखारी आदि बहुत सारे सिक्खों का जिक्र किया है जो सिक्खी ग्रहण कर प्रचार के लिए दूर देशों तक गए।

नौवें अध्याय में लेखक ने लिखा है कि गुरु नानक साहिब ने जो पारब्रह्म का पंथ चलाया था उसको श्री गुरु रामदास जी को संपूर्ण करने का हुक्म हुआ और गुरु साहिब ने इस आज्ञा को अच्छी तरह से निभाया। गुरु साहिब ने संगत में नाम-सिमरन का प्रचार किया। गुरु साहिब ने लोगों को एक परमात्मा का सिमरन करने, एक की सेवा, एक की लगन और एक बाणी (गुरबाणी) का प्रचार किया। गुरु साहिब के समय केवल ताल (सरोवर) ही सम्पूर्ण नहीं हुआ, पंथ भी सम्पूर्ण हुआ और जग में प्रकट हुआ।

गुरु साहिब ने मसंद-प्रथा बनाई। उच्च किरदार और आचरण वाले विद्वान पुरुषों को मसंद नियुक्त किया जो गुरु जी के विचार सिक्खों और मंजीदारों तक पहुंचाते तथा जो भेंटा मंजीदार संगत से लेते उसे इकट्ठी कर गुरु-घर तक पहुंचाते।

गुरु साहिब ने जन्म, विवाह, मृत्यु और नित्तनेम की मर्यादा को और पक्का किया। 'अनंद विवाह' के प्रचलित होने से पंथ की सम्पूर्णता का ऐलान हो गया।

गुरु साहिब ने किरत में से दसवंध देने की रीति चलाई। इससे एक सिक्ख में यह एहसास हो कि वो एक बड़े परिवार का हिस्सा है और उसने जैसे अपनी बेटी, पुत्र, रिश्तेदार आदि का ध्यान रखना है वैसे ही पंथ की सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक जरूरतों का भार भी उस पर ही है। लेखक द्वारा कहा गया यह विचार बहुत ही सराहनीय है।

लेखक ने दसवें भाग में *"छत्रु सिंघासनु पिरथमी गुर अरजुन कउ"* में गुरु साहिब के सबसे छोटे सपुत्र श्री गुरु अरजन देव जी को गुरिआई देने और प्रिथीचंद की कमीनी हरकतों का जिक्र किया है। लेखक ने विभिन्न हवाले देते हुए बड़े बेटे प्रिथीचंद के छल, कपट, गुरगद्दी पर अपना अधिकार जमाने और मसंदों को बहला-फुसला कर अपनी ओर करने का जिक्र किया है। लेखक ने एक बहुत बढ़िया बात कही है कि प्रिथीचंद के पास विद्या थी पर विचार

नहीं थे, बुद्धि थी लेकिन विवेक नहीं था, सेवा थी लेकिन अहंकार से भरी हुई और दिखावे वाली थी। प्रिथीचंद को 'मीणा' कहने के प्रमाण भी काफी दिए गए हैं। दूसरे बेटे बाबा महादेव के मस्त स्वभाव का भी जिक्र किया है। फिर श्री (गुरु) अरजन देव जी के जन्म लेने का जिक्र है। श्री (गुरु) अरजन देव जी गुरु-आज्ञा के पालनहार, आत्म-अनंद में मस्त रहने वाले, किसी वस्तु में मोह न रखने वाले, गुरमुखी एवं गुरबाणी के ज्ञाता थे तथा घुड़सवारी और नेजाबाजी के माहिर थे।

श्री गुरु रामदास जी ने अपने सभी सपुत्रों में से सही सोच-विचार करने के बाद श्री (गुरु) अरजन देव जी को अपना जानशीन नियुक्त किया जो पिता-गुरु की प्रत्येक परीक्षा में सफल हुए। फिर श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरिआई बख्श कर १५८१ ई में गुरगद्दी पर बिठाया।

लेखक ने लिखा है कि श्री गुरु रामदास जी ने अपने अंतिम दो-तीन दिन गोइंदवाल साहिब में बिताए और वहीं पर १ सितंबर, १५८१ को ज्योति-जोत समा गए।

लेखक ने पुस्तक के आखिर में श्री गुरु रामदास जी के पूरे जीवन पर नजर डालते हुए लिखा है कि गुरु साहिब के बारे में लिखना *"वडे कीआ वडिआईआ किछु कहणा कहणु न जाइ"* वाली बात है। पुस्तक के अंत में लेखक ने श्री गुरु रामदास जी के जीवन पर संक्षेप में लिखा है कि : "जिस बालक के सिर से मां-बाप का साया उठ जाए, लाहौर जैसे शहर में उसे कोई सहारा न दे, छोटे भाई-बहन की पालना की जिम्मेदारी हो, फिर भी हौंसला न हारना बल्कि पहले दिन ही छाबड़ी का माल भूखों को खिला देना, किसी करामाती शख्सियत का ही काम हो सकता है। गांव बासरके आकर किसी के आगे हाथ न फैलाना, बिरादरी वालों की बेरुखी से न घबराना, किरत करते रहना और कीर्तन में जुड़े रहना। जब श्री गुरु अमरदास जी की कृपा-दृष्टि हुई तो जीवन सफल हो गया। सहनशीलता के ऐसे चिन्ह छोड़े कि श्री गुरु अमरदास जी प्रसन्न हो गए। यह भी एक प्रभु-कृपा ही थी कि बीबी भानी जी का साथ मिला। जब गुरु जी लोगों की सेवा, बाउली का निर्माण, लंगर के कार्य और संगत में पंखा करने की सेवा तथा पानी ढोने में जुटे रहते थे तो बीबी भानी जी अमृत वेले से रात के समय तक गुरु-सेवा कर अपना धर्म निभा रही होती थीं।

बाईस वर्ष (ससुराल-घर) सिर पर टोकरी बड़े चाव से रखनी अर्थात् सेवा करना और किसी ताने की परवाह न करनी एक बड़ी 'करामात' थी। जब किसी अनजान बिरादरी के जीव ने ताना मारा तो इस शख्सियत ने कहा, "ये नहीं जानते कि सेवा का क्या महातम है। ये तो शरीरों के रिश्तों से ऊपर उठ ही नहीं सके।" फिर श्री गुरु अमरदास जी ने अपने हाथों से गुरगद्दी पर बिठा, परिक्रमा कर, माथा टेका तो ऐसी 'करामात' हो गई जो कभी भी न हुई और न ही होगी।

इस तरह प्रिंसीपल सतिबीर सिंघ ने बड़ी सूबसूरती से श्री गुरु रामदास जी की जीवनी को, उनकी शख्सियत को बताते हुए सिक्ख पंथ की झोली में *"पूरी होई करामाति"* नाम की पुस्तक डालते हुए श्रेष्ठ काम किया है, जिससे पाठक हमेशा लाभ उठाते रहेंगे।

"सिक्ख इतिहास" कृत प्रिं तेजा सिंघ-डॉ गंडा सिंघ में श्री गुरु रामदास जी

*-बीबी रजवंत कौर**

श्री गुरु रामदास जी का जन्म लाहौर शहर के बाजार चूना मंडी मुहल्ले में २४ सितंबर सन् १५३४ को पिता हरीदास तथा माता दया कौर की कोख से हुआ। आपके पिता जी सोढी कुल के खत्री थे। गुरु जी का नाम 'रामदास' रखा गया, परंतु ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण सभी उन्हें 'जेठा' कहकर बुलाते थे। इसी तरह से 'जेठा' नाम प्रचलित हो गया।

भाई जेठा जी अभी बालक अवस्था में ही थे कि इनकी पूज्य माता जी का अकाल के देश को गमन हो गया। सात साल की आयु में पिता जी भी परलोक सिधार गए। भाई जेठा जी के अनाथ हो जाने के बाद इनकी नानी जी लाहौर से इनको अपने साथ अपने गांव बासरके ले आए। यह गांव श्री गुरु अमरदास जी का जन्म-स्थान भी है। जब भाई जेठा जी यहां आकर रहने लगे तो श्री गुरु अमरदास जी से इनकी मुलाकात हुई। यह मुलाकात धीरे-धीरे घनिष्ठ प्रेम-संबंधों में तबदील हो गई। जब श्री गुरु अमरदास जी बासरके गांव से खडूर साहिब श्री गुरु अंगद देव जी के पास आए तो गुरु साहिब ने श्री गुरु अमरदास जी को गोइंदवाल नगर बसाने की आज्ञा की। श्री गुरु अमरदास जी अपने कई संबंधियों के साथ गोइंदवाल आकर बस गए। भाई जेठा जी भी अपनी नानी के साथ यहां आकर रहने लगे।

सिक्ख इतिहास के अनुसार भाई जेठा जी अपने नानी-परिवार और अपने जीवन-निर्वाह के लिए उबले हुए चने बेचकर गुजारा किया करते थे। बासरके प्रवास के दौरान भी आपने यही काम किया था। जब श्री गुरु अमरदास जी ने गोइंदवाल साहिब में बाउली का निर्माण-कार्य आरंभ किया तो भाई जेठा जी ने यहां ईंट, गारा और टोकरी उठाने की सेवा बड़ी नम्रता से की। श्री गुरु अमरदास जी ने आपके सेवा-भाव और उच्च आचरण से प्रभावित होकर अपनी सपुत्री बीबी भानी जी का शुभ विवाह आपके साथ कर दिया। शादी होने के बाद भी आप वहीं रहकर पूर्ण समर्पण-भाव से सेवा करते रहे। आपने कभी भी श्री गुरु अमरदास जी की किसी आज्ञा की अवहेलना नहीं की बल्कि खुशी से उसका पालन किया। भाई जेठा जी की ईमानदारी, समर्पण-भाव, गुरु-निष्ठा, सेवा, प्रभु-सिमरन आदि के सर्वोच्च गुणों को ध्यान में रखते हुए श्री गुरु अमरदास जी ने आपको गुरु नानक साहिब की गद्दी का वारिस बनाने का फैसला कर लिया। १५७४ ई को परिवार के सदस्यों और साधसंगत की मौजूदगी में श्री गुरु अमरदास जी ने भाई जेठा जी को गुरगद्दी पर विराजमान किया। इसके पश्चात श्री गुरु अमरदास जी ने भरे दीवान में भाई जेठा जी को सिक्खों के चौथे गुरु स्थापित कर उनके चरणों में नमस्कार करके गुरु-पदवी के सर्वोच्च होने की परंपरा को जारी किया। गुरु-पदवी के सर्वोच्च आसन पर बैठे श्री गुरु रामदास जी ने अपने गुरु के प्रति विनम्र-भाव

452, Block-B, Sandhu Colony, Chheharta, Sri Amritsar. Mob. : 98559-44546

से अपने मन की भावनाओं को व्यक्त करते हुए कहा कि पातशाह, आप भली-भांति जानते हैं, जब मैं लाहौर की गलियों में अनाथ और बेसहारा घूम रहा था तो किसी रिश्तेदार, मित्र आदि ने मुझे कोई सहारा नहीं दिया। आपने ही मुझ अनाथ व नीच कीट को अपनी कृपा-दृष्टि से इस सिंघासन पर बैठाने की योग्यता प्रदान की है। गुरबाणी में इस रहस्यमयी सच्चाई को इस रूप में प्रतिपादित किया गया है :

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥ (पन्ना १६७)

सिक्खों की बढ़ती हुई तादाद और सामाजिक हालात के मद्देनजर श्री गुरु अमरदास जी ने माझे को सिक्खी के प्रचार का केंद्र बनाने का फैसला किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए १५७० ई में गुरु साहिब ने गुमटाला, तुंग, सुलतानविंड, गिलवाली आदि गांवों के बीच जमीन खरीद कर श्री गुरु रामदास जी को एक नया नगर बसाने का कार्य सौंपा। १५७४ ई में गुरगद्दी पर विराजमान होने के बाद श्री गुरु रामदास जी गोइंदवाल से श्री अमृतसर स्थाई रूप में आकर बस गए। इसके विकास के लिए खास ध्यान दिया जाने लगा। यह नगर किसी नदी के किनारे न होने के कारण यहां के लोगों को पानी की समस्या से दो-चार न होना पड़े। इसलिए इस समस्या के समाधान के लिए गुरु साहिब ने यहां सरोवर की खुदाई का कार्य प्रारंभ किया। साथ ही गुरु जी ने इस नगर में धर्म-स्थान बनाने की तजवीज की। गुरु जी की दूरदृष्टि और उच्च विचारों का ही परिणाम था कि आपने ताल के बीचो-बीच धर्म-स्थान निर्मित करने का निश्चय किया ताकि कानों में कीर्तन की मधुर ध्वनि सुनाई पड़े और आंखों को श्री हरिमंदर साहिब का विस्मित करने वाला दृश्य दिखाई दे। 'गुरु का चक्क' नामक इस नगर की जमीन काफी न होने के कारण १५७७ ई को गांव तुंग के जमींदारों को ७०० अकबरी रुपए देकर ५०० बीघा और जमीन खरीदी गई। यहां निर्माणाधीन कार्य को पूरा करने के लिए काफी धन की आवश्यकता थी। इस बात को ध्यान में रखते हुए गुरु साहिब ने ईमानदार और निष्ठावान सिक्खों को धन एकत्र करने के लिए दूर-दराज बसे सिक्खों और गुरु-घर में विश्वास रखने वाले श्रद्धालुओं के पास भेजा ताकि आरंभ किए गए कार्य को सम्पूर्ण किया जा सके। इस कार्य के लिए चुने गए सिक्खों की खास पहचान के लिए उन्हें 'मसंद' का नाम दिया।

'गुरु का चक्क' नगर को हर तरह से विकसित करने के लिए ५२ भिन्न-भिन्न व्यवसायों में माहिर कारीगरों को यहां कारोबार शुरू करने के लिए स्थाई निवास दिया गया, जहां उन्होंने अपने कारोबार शुरू किये। उस बाजार का नाम 'गुरु के बाजार' प्रसिद्ध हो गया। इस तरह यह नगर उत्तरी भारत में व्यपार का बड़ा केंद्र बन गया। इससे गुरु साहिब के महान व्यक्तित्व और दूरंदेश समाज-निर्माता होने का पता चलता है। व्यापार और उत्पादन बढ़ाने के अवसर पैदा करने में उनका महत्वपूर्ण योगदान था। मूलभूत सुविधाओं और साधनों के अभाव में भी नगर को अबाद करने, तालाब व कुएं खुदवाने आदि के जो कार्य गुरु साहिब ने किए वे किसी अद्भुत कारनामे से कम नहीं आंके जा सकते। जब किसी सिक्ख के हाथ में कोई विशेष व्यवसाय हो तो उसे पूरा करने के लिए उसके साथ शामिल हों और उसके लिए अरदास करें।

अगर धन की वजह से वह व्यवसाय नहीं चल पा रहा तो चंदा एकत्र करके अपनी तरफ से भी सहयोग दें। इस तरह की सामाजिक सहयोग की उच्च विचारधारा से गुरु जी ने सिक्खों का मार्गदर्शन किया। धन को मनुष्य की सहायता के लिए वस्तु समझने का उपदेश दिया :

गुरमुखि सभ पवितु है धनु संपै माइआ ॥
हरि अरथि जो खरचदे देंदे सुखु पाइआ ॥

(पन्ना १२४६)

आपकी विनम्रता सम्बंधी इतिहास में जिक्र आता है कि श्री गुरु नानक देव जी के बड़े सपुत्र बाबा श्रीचंद जब यहां पधारे तो आप ने बड़ी उत्सुकता और आदर-भाव से उनका स्वागत किया। आपकी लंबी दाढ़ी की तरफ इशारा करते हुए बाबा श्रीचंद कहने लगे कि "यह इतनी क्यों बढ़ा रखी है?" तो गुरु साहिब ने उत्तर दिया "आप जैसे महापुरुषों के चरण झाड़ने के लिए।" गुरु जी का उत्तर सिक्खों को नम्रता और प्रेम धारण करने का उपदेश दृढ़ करवाता है।

श्री गुरु रामदास जी ने काफी मात्रा में बाणी की रचना की है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज ३१ रागों में से ३० रागों में आपकी बाणी दर्ज है। आपके तीन सपुत्र थे। सबसे बड़े प्रिथीचंद, जो बड़े चतुर स्वभाव के थे। गुरु-घर के प्रबंध का कार्य-भार काफी समय तक इनके पास ही रहा। दूसरे सपुत्र महांदेव थे। वे विरक्त साधुओं की भांति रहा करते थे। सबसे छोटे श्री (गुरु) अरजन देव जी बचपन से ही गुरबाणी से अथाह प्रेम करने वाले और गुरु-पिता में असीम श्रद्धा रखते थे। पिता-गुरु जी की आज्ञा का पालन करना वे अपना धर्म समझते थे। तीनों सपुत्रों में से यही गुरु-पिता की गद्दी के वारिस बने। जीवन के आखिरी समय में श्री गुरु रामदास जी गोइंदवाल चले गए थे। वहीं १५८१ ई. में ४७ वर्ष की आयु में आप ज्योति-जोत समा गए।

डॉ. हरीराम गुप्ता के अनुसार श्री गुरु रामदास जी

(पृष्ठ ६३ का शेष)

है, इसी प्रकार सिक्खों को अपने लंगर में परसादा छकते हुए (देखकर) गुरु प्रसन्नचित्त हो जाता है। (पृष्ठ १२८)

धोखाधड़ी करने के साथ-साथ भगवान का नाम जपने वालों को उन्होंने चेतावनी दी :

हरि हरि करहि नित कपटु कमावहि हिरदा सुधु न होई ॥
अनदिनु करम करहि बहुतेरे सुपनै सुखु न होई ॥

(पन्ना ७३२)

सतिगुरु के भावानुसार (निर्देशानुसार) सेवा करने से उनको प्रसन्नता प्राप्त होती है:

सतिगुर की सेवा चाकरी जे चलहि सतिगुर भाइ ॥

(पन्ना १२४६)

श्री गुरु रामदास जी ने अपने छोटे सपुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी प्रदान की और १ सितंबर, सन् १५८१ को ज्योति-जोत समा गए। उनकी स्मृति में गोइंदवाल में ब्यास नदी के तट पर उनकी याद में गुरुद्वारा साहिब विद्यमान है।

"सिक्ख इतिहास" कृत प्रो. करतार सिंघ में श्री गुरु रामदास जी

*-स. ऊधम सिंघ**

प्रो. करतार सिंघ एम. ए ने अपनी पुस्तक "सिक्ख इतिहास" में श्री गुरु रामदास जी के जीवन को तीन हिस्सों में बांटा है। पहले भाग में गुरु साहिब के गुरिआई के समय से पहले जीवन को बयान किया है और अगले दोनों भागों में गुरिआई के बाद के जीवन को विस्तार सहित बयान किया है। पहले कांड में जन्म, किरत-कमाई, गुरु-मिलाप, विवाह, सेवा, परीक्षा और गुरिआई को लेखक ने तिथियों सहित बयान किया है।

श्री गुरु रामदास जी का जन्म चूना मंडी, लाहौर (पाकिस्तान) के निवासी श्री हरिदास सोढी के घर माता दया कौर जी की कोख से २५ आश्विन, संवत् १५९१ को हुआ। आपका नाम 'जेठा' रखा गया।

भाई जेठा जी अभी छोटी आयु के ही थे कि उनके सिर से उनके मां-बाप का साया उठ गया। फिर आपकी नानी आपको गांव बासरके ले आई और आपका पालन-पोषण करने लगी। घर में गरीबी के कारण आपको छोटी उम्र में ही किरत-कमाई की कार में जुटना पड़ा। आप भुने हुए चने बेच कर अपने घर का गुजारा करने लगे। आप अपने दानी स्वभाव के कारण साधु-संतों और गरीबों को मुफ्त ही चने छका देते थे।

बासरके श्री गुरु अमरदास जी की जन्म-नगरी थी और वहां से लोग उनके दर्शनों के लिए गोइंदवाल जाया करते थे। जब भाई जेठा जी किसी आंतरिक रूहानी आकर्षण के कारण श्री गुरु अमरदास जी की शरण में गोइंदवाल चले गए तो वहां गुरु-दरबार से उनकी आत्मा और धार्मिक रुचियों को भरपूर खुराक मिलने लगी। आप बड़े प्रेम से संगत की सेवा करने लगे और अपना गुजारा चने बेच कर करने लगे।

भाई जेठा जी जवान हो गए और गोइंदवाल में प्रत्येक तरह की सेवा सबसे आगे होकर करते। यहां लेखक ने श्री गुरु अमरदास जी तथा उनकी पत्नी माता रामो जी के बीच उनकी छोटी सपुत्री बीबी भानी जी के विवाह के बारे में हुई विचार-चर्चा को बड़े अच्छे ढंग से विस्तार सहित बयान किया है। भाई जेठा जी का बीबी भानी जी के साथ विवाह २२ फाल्गुन, संवत् १६१० को हुआ।

प्रो. करतार सिंघ ने श्री गुरु रामदास जी के घर में पैदा हुए तीन पुत्रों--प्रिथीचंद (संवत् १६१५), महादेव (संवत् १६१७), (गुरु) अरजन देव जी (संवत् १६२०) लिखा है।

श्री गुरु अमरदास जी ने भाई जेठा जी को विवाह के बाद अपने पास ही रख लिया और भाई जेठा जी तन-मन से गुरु जी और साधसंगत की सेवा करने लगे। भाई जेठा जी गुरु जी को अपना मुक्ति-दाता समझते थे। वे लोकाचारी की परवाह किए बिना गुरु-घर की सेवा तन-मन से करते। गुरु साहिब भाई जेठा जी को 'रामदास' कहकर बुलाते। इस तरह गुरगद्दी पर बैठने के बाद भाई जेठा जी का नाम श्री गुरु रामदास जी हो गया। (गुरु) रामदास जी ने जल्दी ही अपने आप को

**VPO : चविंडा देवी, श्री अमृतसर। मो. : ९८५५५-९६९२२*

गुरसिक्खी जीवन में ढाल लिया और जब श्री गुरु अमरदास जी ने बाउली का निर्माण आरंभ किया तो (गुरु) रामदास जी ने सारा सेवा-कार्य अपने आप संभाल लिया।

लेखक ने यहां एक और घटना का वर्णन किया है जो भाई जेठा जी के जन्म-स्थान लाहौर से उनकी बिरादरी के कुछ सज्जनों के बारे में है। जब भाई जेठा जी बाउली के निर्माण के लिए टोकरी ढोने में मगन थे तभी लाहौर से भाई जेठा जी के बिरादरी के कुछ सज्जन गोइंदवाल आए और देखकर कहने लगे कि "अगर मेहनत-मजदूरी ही करनी थी तो और जगह कम थी? इसने तो हमारी नाक ही कटवा दी।" इस तरह बोलते हुए वे श्री गुरु अमरदास जी के पास पहुंचे और गुरु जी को उलाहना दिया। आगे से गुरु जी मुस्करा कर बोले, "पुरखा! 'रामदास' के सिर पट मिट्टी-गारे की टोकरी नहीं, दीन-दुनी का छत्र है।" फिर उन्होंने (गुरु) रामदास जी को ताना मारा। (गुरु) रामदास जी बोले "भोलिओ! आप असलीयत नहीं समझते, यह मेरा ससुराल-घर नहीं मेरा मुक्ति-दर है। मैं अपने मुक्ति-दाते की सेवा कर उनकी खुशियां प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा हूं और आप लोकाचारी तथा रिश्तेदारी की बातें करते हो।"

श्री गुरु अमरदास जी (गुरु) रामदास जी की सेवा-भावना से बहुत खुश थे। उन्होंने जान लिया था कि अब इन्होंने गुरगद्दी का वारिस बनना है। समूह सिक्ख संगत को इनकी पात्रता दर्शाने हेतु गुरु साहिब ने अपने बड़े जमाई भाई रामा और (गुरु) रामदास जी को एक ठिकाना बताकर एक-एक चबूतरा बनाने को कहा। दोनों ने चबूतरा बनाया तो गुरु जी ने कहा कि जैसे मैंने कहा था वैसा नहीं बना, दोबारा बनाओ। इस तरह तीन-चार बार दोनों ने चबूतरा बनाकर दिखाया तो गुरु साहिब ने हर बार ढहा दिया। इस तरह भाई रामा खीझ कर कहने लगे, "गुरु जी की अवस्था बुजुर्ग हो गई है, याद नहीं रहता। जैसा कहकर जाते हैं मैं वैसा ही चबूतरा बनाता हूं और वे ढहा देते हैं, वृद्ध जो हुए, उनके वश में नहीं है।" जब किसी ने (गुरु) रामदास जी को कहा तो वे कहने लगे, "मैं अनजान हूं, बात समझने में कोई कसर रह जाती होगी। गुरु जी कृपा करते हैं, खफा नहीं होते, बल्कि नए सिरे से युक्ति बताकर समझाते हैं, मैं फिर बनाता हूं। मुझे अपनी बेसमझी पर अफसोस होता है। चबूतरा ढहता देख कर गुरु जी खुश होते हैं, उनकी खुशी ही तो मैं चाहता हूं। जब वे चबूतरा बनता देख कर खुश होते हैं तो मैं नया बनाकर निहाल होता हूं और जब वे चबूतरा ढहा कर खुश होते हैं तो मैं तोड़ कर खुशी मनाता हूं।"

इसी तरह (गुरु) रामदास जी ने श्रद्धा, गुरु-प्रेम, धैर्य और आज्ञाकारिता का सबूत दिया। वे प्रत्येक परीक्षा में पास हुए। इस तरह श्री गुरु अमरदास जी ने अपनी सचखंड वापसी निकट जान १ सितंबर, १५७४ ई को (गुरु) रामदास जी को गुरगद्दी पर बिठाया।

लेखक ने पुस्तक के अगले दो अध्यायों में श्री गुरु रामदास जी के गुरिआई मिलने के बाद के जीवन का जिक्र किया है। दूसरे भाग में श्री गुरु रामदास जी द्वारा श्री अमृतसर नगर की स्थापना का भी वर्णन किया गया है।

ज्योति-जोत समाने से लगभग चार वर्ष पहले श्री गुरु अमरदास जी ने संवत् १६२७ को, जिस स्थान पर आज श्री अमृतसर शहर स्थित है, इसका पूरा-पूरा पता बताकर श्री गुरु रामदास जी को बाबा बुड्ढा जी सहित वहां भेजा और आज्ञा की कि सरोवर बनाएं और नगर बसाएं। आज्ञा पाकर श्री गुरु रामदास जी

ने पहले उस सरोवर की खुदवाई आरंभ करवाई, जिसको 'संतोखसर' कहते हैं। सेवा के समय आप जिस शीशम (टाहली) के वृक्ष के नीचे बैठकर सेवा करवाते वहां पर आजकल गुरुद्वारा टाहली साहिब सुशोभित है।

तीसरी पातशाही के ज्योति-जोत समाने से कुछ एक महीने पहले श्री गुरु रामदास जी ने एक नगर की नींव रखी जिसका नाम आपने 'गुरु का चक्क' रखा और गुरगद्दी पर विराजमान होने के बाद आप परिवार सहित संवत् १६३१ को 'गुरु का चक्क' आ विराजे। संवत् १६३४ को आप ने तुंग गांव के जमींदारों को ७०० अकबरी रुपए देकर ५०० बीघा जमीन सहित 'गुरू का चक्क' वाली जगह का भी 'पटा' प्राप्त कर लिया। फिर आपने यहां लोगों को बसाना शुरू कर दिया। आप चाहते थे कि यह नगरी धर्म की किरत करने वाले गृहस्थियों की है, इसलिए व्यापार, हुनर और दसतकारी के जरिए उद्यम कर रोजी-रोटी कमाने वाले को प्रेरित कर यहां बसाया गया। इनको एक बाजार में बसाया गया, जिसका नाम 'गुरु बाजार' प्रसिद्ध हुआ। यह बाजार आज तक व्यापार का बहुत बड़ा केंद्र है। इस तरह आप ने धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक और कौम की खुशहाली के लिए एक आदर्श नगर बसाकर देश की उन्नति में बहुत बड़ा काम किया। लेखक के अनुसार आप ने इस नगर में अपने निवास के लिए भी स्थान बनाया, जिसे आजकल गुरुद्वारा गुरु के महल सुशोभित है।

उसी वर्ष संवत् १६३४ को श्री गुरु रामदास जी ने 'दुख भंजनी बेरी' वाली जगह पर एक सरोवर की खुदाई प्रारंभ की। बाद में इसको श्री गुरु अरजन देव जी ने संपूर्ण किया और इस नगरी का नाम 'अमृतसर' पड़ गया।

गुरु साहिब के बसाये इस नगर में भी उसी तरह लंगर चलने लगा जैसे करतारपुर, खडूर साहिब और गोइंदवाल में चलता था। संगत की गिनती बढ़ रही थी। गुरु साहिब चाहते थे कि सरोवर को भी पक्का करवाया जाए और उसके बीच में "श्री हरिमंदर साहिब' सजाया जाए। इस शुभ कार्य के लिए धन की आवश्यकता थी। इस आवश्यकता को मुख्य रखते हुए गुरु जी ने 'मसंद-प्रथा' की स्थापना की। पहले गुरु साहिबान द्वारा स्थापित किए गए प्रचार-केंद्र 'मंजिआं' कहलाते थे जो दूर-दूर तक सिक्खी का प्रचार करते थे। मसंदों के सुपुर्द यह काम किया गया कि वे संगत तक जाएं और संगत से धन, पदार्थ एवं दूसरी जरूरी वस्तुएं एकत्र कर गुरु-घर तक पहुंचाएं ताकि जो कार्य गुरु साहिब ने प्रारंभ किये थे वे संपूर्ण हो सकें।

एक बार श्री गुरु नानक देव जी के बड़े साहिबजादे और उदासी संप्रदाय के संस्थापक बाबा श्रीचंद जी श्री गुरु रामदास जी को मिलने श्री अमृतसर आए। गुरु जी ने उनका बहुत आदर-मान किया और उनको सुंदर निवास स्थान पर बिठाया। बाबा जी ने गुरबाणी-कीर्तन श्रवण किया और अति प्रसन्न हुए। फिर उनके मन में विचार आया कि देखा तो जाए कि गुरु नानक साहिब की गुरगद्दी पर विराजमान चौथे गुरु के मन में नम्रता, गरीबी है भी कि नहीं। आप ने पूछा, "सुनाओ जीओ, दाढ़ा (दाढ़ी) क्यों इतना बढ़ाया हुआ है?" आगे से नम्रता के पुंज श्री गुरु रामदास जी ने कहा, "आप जैसे महापुरुषों के चरण साफ करने के लिए।" बाबा श्रीचंद ने कहा, "धन्य हो आप! आप तो पिता-गुरु की गुरगद्दी के उचित अधिकारी हो। आप धन्य हो! आपकी सिक्खी धन्य है।"

प्रो करतार सिंघ ने अगले अध्याय में श्री गुरु रामदास जी द्वारा उच्चारण की गई बाणी

और अपने बाद अगले जिम्मेदार सेवक (गुरु) को गुरगद्दी देने का जिक्र किया है। श्री गुरु रामदास जी की बाणी में सबसे प्रमुख बाणी 'लावां' है जो राग 'सूही' में है। गुरु साहिब ने इसमें गुरसिक्ख को उपदेश दिया है कि गृहस्थ में रहो, वाहिगुरु को याद रखो, उसके भय में रहो और उसको प्यार करो। जो प्राणी ऐसा करेगा उसका कल्याण होगा। इस तरह गुरु साहिब ने 'घोड़ीआं' की धारणा पर दो शबद उच्चारण किए जो विवाह के समय पढ़े एवं गाये जाते हैं। गुरु साहिब ने अपनी बाणी के एक शबद में सिक्ख के नित्तनेम के बारे में भी फरमान किया है :

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ . . . *(पन्ना ३०५)*

तात्पर्य यह कि सिक्ख को अपनी रोजाना की कार (कार्य) अमृत वेले उठकर परमात्मा का नाम जपने से शुरू करनी चाहिए, यही उसका नित्तनेम होना चाहिए।

पूरी सोच-विचार और परख करने के बाद संगत की सलाह से आपने गुरगद्दी की जिम्मेदारी निभाने की सेवा श्री (गुरु) अरजन देव जी को दी।

अपनी सचखंड वापसी का समय निकट जान श्री गुरु रामदास जी परिवार सहित गोइंदवाल चले गए। वहां २ आश्विन, संवत् १६३८ को श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरिआई देने की रसम अदा की और उसी दिन श्री गुरु रामदास जी परम ज्योति में विलीन हो गए।

"सिक्ख रिलीजन" कृत मैकालिफ में . . . *(पृष्ठ ६६ का शेष)*

जिसे एक सिक्ख ने प्रिथिए से बचा कर गुरु जी तक पहुंचाया।

इस तरह प्रिथिए की मक्कारी उजागर हुई और गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी को बग्घी देकर (गुरु) अरजन देव जी को लाने लाहौर भेजा।

श्री गुरु अरजन देव जी को गुरगद्दी : श्री गुरु रामदास जी ने ऐलान किया कि गुरगद्दी योग्यता का ही फल है, केवल विनम्र व्यक्ति ही इसका हकदार है। गुरु जी ने (गुरु) अरजन देव जी को अपनी गद्दी पर बैठाया और माथा टेका। बाबा बुड्ढा जी ने गुरिआई सम्बंधी सारी रस्में अदा कीं।

श्री गुरु अरजन देव जी को गुरगद्दी मिल जाने से प्रिथिए के गुस्से का ठिकाना न रहा। उसने अपने पिता श्री गुरु रामदास जी और बाबा बुड्ढा जी को बड़े अनादर भरे अपशब्द कहे। श्री गुरु रामदास जी ने प्रिथिए की दुष्टता से आहत होकर कहा कि "तू मीणा है, मेरे सिक्ख तुझसे कोई मेल-मिलाप नहीं रखेंगे।"

ज्योति-जोत समाना : श्री गुरु अरजन देव जी को गुरगद्दी प्रदान करके श्री गुरु रामदास जी ने ज्योति-जोत समाने की इच्छा प्रकट की। गोइंदवाल साहिब बाउली में स्नान किया। भादों शुक्ल पक्ष के तीसरे दिन संवत् १६३८ वि. (सन् १५८१ ई.) को आप ज्योति-जोत समा गये।

इस प्रकार मैक्स आर्थर मैकालिफ ने बड़े भक्ति-भाव से श्री गुरु रामदास जी के जीवन-वृत्तांत का वर्णन किया है।

कुछ अन्य सिक्ख ऐतिहासिक स्रोतों में श्री गुरु रामदास जी का स्वरूप

*-बीबी मनजीत कौर**

"सवईए महला पंजवें के" में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी गुरु-पिता श्री गुरु रामदास जी की स्तुति करते हुए कथन करते हैं :

काटे सु पाप तिन्ह नरहु के गुरु रामदासु जिन्ह पाइयउ ॥
छत्रु सिंघासनु पिरथमी गुर अरजुन कउ दे आइअउ ॥ *(पन्ना १४०९)*

श्री गुरु रामदास जी अभी मात्र सात वर्ष के ही थे कि आप जी के सिर से माता-पिता का साया उठ गया। बाद में आप जी अपने ननिहाल बासरके आ गए। श्री गुरु अमरदास जी आप जी को गोइंदवाल ले गए तथा यहां ही आप जी गुरु-चरणों के भंवरे बन कर रहे। आप जी 'सोढी पातशाह' कहलवाए। प्रो. साहिब सिंघ लिखते हैं कि जिस समय श्री गुरु अमरदास जी ने (गुरु) रामदास जी को चौकी पर बिठाकर भरे दीवान में स्वयं माथा टेका तो ये वैराग्य में आकर बोल उठे, "पातशाह! आप जी जानते हो, जब मैं यतीम लाहौर की गलियों में से बेसहारा होकर निकला था, तब मेरा क्या हाल था। मैं गलियों के तिनकों की भांति रुल रहा था। पातशाह जी! छोटे से कीट की क्या क्षमता है? बस, मैं तो मात्र एक कीट था। मेरे सतिगुरा, यह आप जी की कृपा थी कि आपने मुझको प्यार के साथ देखा। आप जी ने मुझ यतीम की बांह पकड़ी, मुझे मिट्टी में रुलते को आज आप जी ने आसमानों पर पहुंचा दिया है।" यह वैराग्य की तस्वीर श्री गुरु रामदास जी महाराज ने अपनी बाणी में इस प्रकार खींची है:

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥ *(पन्ना १६७)*

श्री गुरु रामदास जी ने श्री अमृतसर नगर की स्थापना की तथा श्री अमृत सर सरोवर, श्री संतोखसर सरोवर का निर्माण किया। श्री अमृतसर श्री गुरु रामदास जी की अद्वितीय दात है। यह सिक्ख धर्म का ही नहीं अपितु विश्व-मानवता का आध्यात्मिक केंद्र है। श्री गुरु अमरदास जी ने अपनी बाणी में श्री अमृत सर के बारे में लिखा है:

काइआ अंदरि अंम्रित सरु साचा मनु पीवै भाइ सुभाई हे ॥ *(पन्ना १०४६)*

इस स्थान को 'गुरू का चक्क', 'चक्क गुरू', 'रामदासपुर', 'अमर सर' तथा 'अमृतसर' कहा जाता है। इस स्थान की स्तुति श्री गुरु रामदास जी महाराज ने स्वयं इस प्रकार की है:

अंम्रित सरु सतिगुरु सतिवादी जितु नातै कऊआ हंसु होहै ॥ *(पन्ना ४९३)*

यहां तक कि गुरु नानक साहिब की बाणी में भी 'अमृत सर' का नाम आया है :

बिखिआ मलु जाइ अंम्रित सरि नावहु गुर सर संतोखु पाइआ ॥ *(पन्ना १०४३)*

'अंम्रितसर सिफती दा घर' की नींव रखने वाले तथा इसको आबाद करने वाले श्री गुरु

**प्रोफेसर, शहीद सिक्ख मिशनरी कालेज, रणजीतपुरा, पोस्ट: खालसा कालेज, श्री अमृतसर। मो: ९४६४९-८६४४७*

रामदास जी थे। श्री गुरु अरजन देव जी ने अमृत-सरोवर के बीच में 'श्री हरिमंदर साहिब' का निर्माण कराया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने दर्शनी ड्योढ़ी के सामने श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना की। इस प्रकार श्री अमृतसर की बुनियाद, निर्माण तथा प्रगति के कार्य की पूर्ति को चार गुरु साहिबान के कर-कमलों का स्पर्श प्राप्त हुआ। यह युगो-युग अटल विश्व धर्म का पवित्र केंद्र बन गया।

श्री गुरु रामदास जी ने गुरु-घर के आर्थिक व्ययों को पूरा करने के लिए मसंद-प्रथा कायम की। पंजाब से बाहर भी सिक्खी प्रचार का काम योजनाबद्ध ढंग से आरंभ किया। सिक्खों के रस्म-ओ-रिवाजों को विलक्षण रूप देने हेतु बहुत कुछ किया। सिक्खों को अपने पांवों पर खड़े होने के लिए आपने अलग-अलग प्रकार के ५२ व्यवसायियों को अमृतसर नगर में बसाकर रोजगार के साधन पैदा किये।

ऐसे व्यापक जीवन वाले श्री गुरु रामदास जी के बारे में समय-समय पर विभिन्न विद्वानों, कवि-जनों एवं इतिहासकारों ने कृतियां की हैं। इस आलेख में भाई वीर सिंघ जी की ऐतिहासिक कृति 'अशट गुर चमतकार' के अलावा 'गुर बिलास पातशाही छेवीं', 'परचीआं दसां पातशाहीआं कीआं', संतरेण प्रेम सिंघ की कृति 'गुर पुर प्रकाश' तथा 'गुर प्रणालीआं' ग्रंथों में अंकित श्री गुरु रामदास जी के जीवन के साथ संबंधित कुछ ऐतिहासिक घटनाओं, साखियों को कलमबद्ध किया है।

'अशट गुर चमतकार' कृत भाई वीर सिंघ: भाई वीर सिंघ ने श्री गुरु रामदास जी का जीवन 'अशट गुर चमतकार' में बयान किया है। इस कृति में अधिकतर प्रश्न-उत्तरों के रूप में ऐतिहासिक प्रसंग अंकित हैं। भाई साहिब ने गुरु-शबदों के साथ भी साखियां जोड़ी हैं। कुछ सिक्ख श्री गोइंदवाल साहिब आते हैं और श्री गुरु रामदास जी को पूछते हैं कि हे बड़े दाता जीओ! शास्त्र, पुराण आदि तीर्थ-यात्रा के लिए उपदेश करते हैं और बताते हैं कि पर्वों के समय किये स्नान के साथ किये हुए पाप कट जाते हैं। पाप कटे बिना मुक्ति नहीं होती। यहां आप जी गुरसिक्खी रहु-रीति में तीर्थ-यात्रा की कोई जगह नहीं देखते। आप जी कहते हैं- *"गुरु दरीआउ सदा जलु निरमलु . . . ॥"* फिर कहते हैं कि 'नाम' तीर्थ है। आप बताओ, हमने गुरु पर सिदक धारण किया है, नाम प्राप्त किया है, अब हमने तीर्थों पर जाकर पर्वों के स्नान करने हैं कि नहीं? यहां गुरु जी उत्तर देते हैं कि श्री गुरु नानक देव जी इस शंस्य को निवृत्त कर गए हैं :

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है ॥
तीरथु सबद बीचारु अंतरि गिआनु है ॥

(पन्ना ६८७)

यहां फिर प्रश्न पूछते हैं कि क्या मैं तीर्थ नहाने जाऊं? गुरु साहिब कहते हैं कि भाई, तीर्थ नाम है, नाम आपने जपना है। नाम जपना ही तीर्थ का स्नान है। तीर्थों पर स्नान करने से मन की मैल नहीं उतरती, मन की मैल नाम के साथ उतरती है। नाम सच्चा तीर्थ है जो पापों की मैल धोता है और मन को निर्मल करता है।

गुरु साहिब के दर्शन करने योगियों की मंडली आती है। परस्पर गोष्टि होती है। योगी आपको पूछते हैं कि ये गृहस्थी लोग कैसे इस प्रेम-मार्ग पर चल पड़ते हैं? ये काम-काज करेंगे या ईश्वर-चिंतन करेंगे? इसका उत्तर श्री गुरु रामदास जी इस प्रकार देते हैं :

"हे योगेंद्र जीओ! गुरु-बाबे ने फरमाया है

कि जगत में दुख है। यही दुख दारू (दवा, औषधि) है। ये जो गृहस्थ में रहते हैं इनको प्राप्त सुखों के साथ दुख भी घटित होते हैं। ये गृहस्थी दुखों के तले बहुत घबराते हैं, फिर सुख की खोज करते हैं। खोज करते हुए सतिसंग ढूंढा जाता है। सतिसंग में से इनको उपदेश मिलता है कि दुखों से न घबराओ, ये कर्मों के फल हैं तथा इनका प्रयोजन 'दंड' नहीं बल्कि 'सुधार' है। आप जी दृष्टमान के साथ प्यार करते हो, वही प्यार अनादृष्ट के साथ करो। दातों (बख्शिश) के प्यारो हो, दाते (प्रभु) के प्यारे भी हो जाओ।" तब इनको हरि-नाम तथा हरि-कीर्तन का मार्ग बतलाते हैं। यह गुरु नानक साहिब की शिक्षा है।

योगी पुन: प्रश्न करते हैं कि मन कैसे निर्मल किया करते हैं? गुरु जी इनको सेवा करना एवं सरबत्त का भला बताते हैं। इस प्रकार इनमें से स्वार्थ कम हो जाता या समाप्त हो जाता है। बुरा चितवने से हटता-हटता मन निर्मल हो जाता है। दूसरी ओर इनको हरि-कीर्तन प्रतिदिन उपदेश देता है। सेवा, मोटी मैल को दूर करती है। हरि का गुण-गायन मन की उससे भी अधिक सूक्ष्म मैल को दूर करता है। ये लोग हरि-सिमरन करते हैं जिससे भीतर की जन्मों-जन्मांतरों की पापमयी वृत्तियां एवं संस्कार नाश हो जाते हैं। इस प्रकार मन निर्मल होता-होता शुद्ध हो जाता है। इस प्रकार काफी लंबी वार्तालाप गुरु साहिब और योगियों के बीच चली, जो इस प्रकार अंकित है।

श्री गुरु रामदास जी और गोइंदवाल में रहने वाले तपे के बीच हुई बातचीत का विवरण भी इस कृति में लिखा हुआ है। भाई हिंदाल जो जंडियाला गुरू जिला अमृतसर का रहने वाला था, गुरु-घर का प्रेमी था। एक दिन श्री गुरु रामदास जी लंगर में गये तो भाई हिंदाल आटा गूंथ रहा था। गुरु जी को देखकर शीघ्रता से उठा। दोनों हाथ पीठ के पीछे कर लिये, इसलिए कि आटे के साथ लथपथ हाथों पर माथा टेकते समय जमीन की मिट्टी न लग जाए और इसी प्रकार सिर चरणों पर रख दिया। गुरु साहिब ने सिर को हाथों से पकड़ कर उठाया और अपने कंधे का साफा (अंगोछा) उसके सिर पर रख दिया। इस कृपा के होते ही कपाट खुल गए तथा आत्म-दृष्टि प्राप्त हो गई। बाद में हिंदालियों की गद्दी चल पड़ी और इसके गद्दीनशीन गुरु-घर की विरोधता करते रहे। भाई हिंदाल की संप्रदाय वालों को 'हिंदालीए' या 'निरंजनीए' कहते हैं।

संवत् १६२७ वि. आषाढ़ वदी ५ को श्री गुरु रामदास जी ने एक नगर बसाया जिसका नाम 'गुरू का चक्क' रखा। गुरु का बसाया हुआ नगर होने के कारण दूर-नजदीक से सिक्ख आ बसे। सुलतानविंड, तुंग, गुमटाला, गिलवाली, चाटीविंड, भ्राड़ी आदि गांवों के बीच होने के कारण यहां आकर दुकानें शुरू करने वालों का व्यापार चल निकला था और 'गुरू का बाजार' बस गया था। माझे के ऐतिहासिक नगर पट्टी का विवरण भी लिखा गया है। वस्तुत: कभी पट्टी का नाम 'चीना पत्ती' था। यहां किसी समय चीन का शहजादा आया था। तब नाम पड़ा 'चीना पत्ती'। समय बदल जाने से 'पत्ती' से 'पट्टी' प्रचलित हो गया तथा 'चीना' उड़ गया। बीबी रजनी को इसी पट्टी की रहने वाली बताते हैं जो कि एक अहंकारी और नास्तिक मत वाले ओहदेदार की पुत्री थी। यह बीबी (महिला) गुरु नानक साहिब की बाणी सुनकर सतिसंग में जाती थी। यह पूरा प्रसंग इस कृति में अंकित किया हुआ है।

बाबा श्रीचंद 'गुरू के चक्क' में आते हैं तथा गुरु जी के व्यक्तित्व से प्रभावित होते हुए कहते हैं- "आप धन्य हो, आपकी सिक्खी धन्य है!"

श्री गुरु रामदास जी ने सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए मसंद-प्रथा आरंभ की। मसंदों का काम सिक्खी का प्रचार करने के साथ-साथ दसवंध एकत्र करके गुरु के खजाने में डालना होता था। बाद में मसंदों में अति गिरावटें आने के कारण दसम पातशाह ने यह प्रथा समाप्त कर दी। श्री गुरु रामदास जी के समय से दशम पातशाह तक मसंद-प्रथा प्रचलित रही थी।

भाई सोमाशाह, भाई आदम और भाई भगतू की साखियां भी इस रचना में अंकित हैं। श्री गुरु रामदास जी ने गुरसिक्खों के जीवन के लिए रहु-रीति भी तैयार की। एक सिक्ख ने विनती की कि पातशाह, हम अपने दुनिया के काम किस प्रकार संवारें? तब गुरु साहिब ने सिरीरागु में पउड़ी उच्चारण की :

कीता लोड़ीऐ कंमु सु हरि पहि आखीऐ ॥
कारजु देइ सवारि सतिगुर सचु साखीऐ ॥
(पन्ना ९१)

यह पउड़ी सिक्खों के लिए सभी कारजों का हिदायतनामा बनी। इस प्रकार श्री गुरु रामदास जी ने सूही राग में 'लावां' बाणी उच्चारण करके सिक्खों के विवाह की मर्यादा भी बांध दी। विवाह के समय गायी जाने वाली घोड़ियों की जगह दो शबद घोड़ियों की धारणा के रचे। इसी प्रकार कुछ प्रमुख सिक्खों की साखियां अंकित की गई हैं जिनमें भाई सोमाशाह, भाई तीरथा, भाई पूरो, भाई माणक चंद, भाई बिशनदास, भाई पदारथ, भाई तारू, भाई भारू, भाई महांनंद, भाई बिधीचंद, भाई धरम दास खटड़ा, भाई डूगर दास, भाई दीपा, भाई जेठा, भाई सैसार, भाई बूला आदि सिक्खों के नाम आये हैं। गुरु जी के ताऊ के पुत्र भाई संहारी मल के पुत्र के विवाह के संबंध में भी विवरण दर्ज है। गुरगद्दी देने के लिए पुत्रों की परख के संबंध में भी साखी मिलती है। बाबा प्रिथीचंद का गुरु-घर के साथ विरोध विस्तृत रूप में दर्ज किया गया है। इस झगड़े का ऐतिहासिक प्रसंग श्री गुरु रामदास जी की राग सारंग और राग सूही में रची बाणी में भी दिया गया है :

सारग महल ४ घरु ३ दुपदा
ੴ सतिगुर प्रसादि ॥
काहे पूत झगरत हउ संगि बाप ॥
जिन के जणे बडीरे तुम हउ तिन सिउ झगरत पाप ॥१॥ (पन्ना १२००)
--चहु पीड़ी आदि जुगादि बखीली किनै न पाइओ हरि सेवक भाइ निसतारा ॥ (पन्ना ७३३)

'परचीआं दसां पातशाहीआं' कृत भाई सेवा दास में श्री गुरु रामदास जी के संबंध में केवल एक छोटी साखी मिलती है :

"एक बेर गुरु रामदास जी अरु सिरी चंद जी का आपस में मेल पिआ, जब आपस महि मिले, तब सहिज सुभाइ सिरी चंद जी के मुख सिउं इहो निकसिआ। 'जो गुरू जी, तुमहु ने दाड़ी तो बडी बधाई।' तां गुरू रामदास जी कहिआ, 'जो मेहरवान, दाहड़ी जो बधाई है, सो तुमारे चरन झाड़न कउ बधाई है।' इह वचन सुणि सिरी चंद बिगसे अर कहिआ, 'ऐसीआं ही बातां करके गुराई का तखत लै लीआ है। किउं? . . .४॥"

'गुरबिलास पातशाही छेवीं' में श्री गुरु रामदास जी के उपलक्ष्य में अति संक्षिप्त रूप में जानकारी मिलती है। आरंभ के मंगलाचरण में लेखक लिखता है :

दास सु राम गुरू अभिराम सु पूरन काम कहां जसु पाउं।
तांते हौ चरन गुरु के अविलंभत है गुर का जस

धिआऊं।

लेखक गुरु जी की स्तुति में उनको 'पूरन पुरख' कहता हुआ कथन करता है कि उनकी कथा बेअंत है। आगे वह गुरु जी के पुत्रों के बारे में भी लिखता है :

गुरू नानक अंगद गुरू अमरदास गुणवंत।
स्री रामदास पूरन पुरख जां की कथा बिअंत।
तीन पुत्र तिन ते भए प्रिथीआ बडो बखान।
महांदेव अरजन गुरू कथा जांहि सुखमान।

जब बादशाह अकबर श्री गुरु अमरदास जी के दरबार में आता है तो भेटा के रूप में कुछ जागीर श्री गुरु अमरदास जी को देना चाहता है, परंतु गुरु जी के इंकार करने पर उसने वह जागीर बीबी भानी जी के नाम लगा दी। लेखक यहां कहता है कि श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी को 'आने वाला मालिक' कहा और ८४ गांव उनको सौंप दिये। श्री गुरु रामदास जी ने वहां बाबा बुड्ढा जी को भेज दिया :

स्री मुख सों गुर कीन उचारा।
रामदास मालक निरधारा।
तिन कौ शाहु असु चीनो।
चौरासी गांव गुरू को दीनो।
रामदास गुर गांव सौ पाए।
इच्छ शाह की पूर कराए।
मद्ध गांव गुर बीड़ रखायो।
गांव बीड़ बुड्ढे सौं पायो।

बाबा मोहन जी एवं बाबा मोहरी जी के मुख से श्री गुरु अमरदास जी का जीवन कहलवाया है। गुरु-पुत्रों की तरफ से श्री गुरु रामदास जी की विरोधता के बाद श्री गुरु रामदास जी की उपमा लिखी हुई है :

सतिगुरू परतख होंदै बहिराज आप टिकाइआ।
सभ सिख बंधप पुत भाई रामदास पैरीं पाइआ।

उपमा करते हुए एक जगह लिखा है:

भयो तास पाछं गुरू रामदासं।
चढ़े पूज भारी पूजे संत आसं।

श्री गुरु रामदास जी ने अपना अंतिम समय करीब देखकर गुरगद्दी श्री गुरु अरजन देव जी को सौंप दी :

रामदास पूरन पुरख समां अंत निज जान।
निज गुरिआई तब दई अरजन गुरू पछान।

गुरु-इतिहास से संबंधित एक अन्य स्रोत 'गुर प्रणालीआं' हैं। इसको भाई रणधीर सिंघ, भूतपूर्व रीसर्च स्कालर, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी ने संपादित किया है। इसमें कुल दस प्रणालियां हैं। इसका मूल पाठ मात्र एक-एक पउड़ी दस गुरु साहिबान के जीवन को रूपमान करती है। श्री गुरु रामदास जी के जीवन के संबंध में लिखा है कि सोढी कुल में पिता श्री हरिदास तथा माता दया कौर के घर आपका जन्म हुआ। आपके महिल (सुपत्नी) बीबी भानी जी के तीन पुत्र हुए हैं। ६ वर्ष, ११ मास तथा १८ दिवस आपने गुरिआई का कार्यभार निभाया तथा संवत् १६३८ को आप ज्योति-जोत समा गए। लिखा है:

सोढी कुलि हरिदास पित दइआ मात।
रामदास भानी पति सुत अरजनो महांदेउ, प्रिथीआस।
यारां मास अर बरख छिइ, अठारां दिन सुभ जोइ।
कीयो राज रामदास गुरू, भगति गियान चुत होइ।
सोलां सै अठती बरख, संमत बिक्रम राइ।
त्रितीआ थित भादों सुदी, गुर रामदास समाइ।

इस प्रकार की कुछ अन्य 'गुर प्रणालीआं' भी लिखी मिलती हैं। कवि संतरेण प्रेम सिंघ रचित ऐतिहासिक ग्रंथ 'स्री गुर पुर प्रकाश' (भाग ४) में श्री गुरु रामदास जी का जीवन लिखा

मिलता है। आप जी के समय सिक्खों के नित्तनेम की मर्यादा आरंभ में अंकित की गई। इस संबंध में गउड़ी राग में गुरु साहिब का शबद उच्चारण किया हुआ है :

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ . . . (पन्ना ३०५)

इस शबद के अनुसार सिक्ख की नित्य-करणी निर्धारित कर दी। दीवान में मसंद भी गुरु जी के पास बैठते थे। अमृत वेले 'आसा की वार' का कीर्तन भाई रजादा जी करते थे:

आइ रजादा थिर दरबार।
गाइन करै सु आसा वार।

'आसा की वार' के भोग के पश्चात कड़ाह प्रसादि वितरित किया जाता था तथा बाद में गुरु जी समस्त संगत को साथ लेकर लंगर, पंगत में बैठकर छकते थे। गुरु के लंगर में अनेक प्रकार के स्वादिष्ट पदार्थ बनते थे :

बहुरो लंगर भयो तिआरी।
उठे गुरू ले संगत सारी।
बैठे पंगत भलो लगाइ।
बिंजन अनक प्रकार अचाइ।

सायंकाल के दीवान में कीर्तन होता था तथा फिर 'सो दरु रहरासि' बाणी का पाठ पढ़ा जाता। इसके पश्चात 'सोहिला' बाणी पढ़ी जाती थी। इस तरह यह सिक्खों का नित्तनेम था :

संधया भी सोदर रहिरास।
कथा सोहिला पठ सुख रास।

कवि ने गुरु साहिब को रत्नों का सागर सीतल जल, पारस गुरू, स्वाति बूंद, चंद्रमा आदि काव्य-विशेषणों से बढ़प्पन दिया है। श्री गुरु रामदास जी चंद्रमा की भांति शोभा देते थे तथा संगत चकोर बनकर उनके दर्शनों की अभिलाषा में रहती थी :

पिख गुर चंद्र समाम।
सिख चकोर उपदेस चहि राजत सतिगुर राम।

इस कृति में 'अमृत सर' सरोवर को भवसागर से पार उतारने वाला पुल कहा है। जो इसमें स्नान करेगा उसका कल्याण होगा:

जो नर आइ करै इसनान।
सो पावहि सभ बिधि कलयान।

अमृत-सरोवर की खुदाई के समय गुरु साहिब ने खुरपे से स्वयं टक्क लगाया। समस्त संगत उत्साह के साथ सेवा में लगी। बड़े भाग्यवान सिक्ख कुपाली, बेलचों के साथ खुदाई कर रहे थे और अपने सिर पर टोकरियां उठाकर ला रहे थे :

पिख गुर को सिख चौप सु जागे।
बड भागे सेवा महिं लागे।
कोऊ खनहै खननी हाथ।
कोऊ पूरहि बोलहि साथ।
कोऊ टोकरी सीस उठावै।
सर चिंनन्ह ते वहिर गिरावै।

भाई गुरदास जी श्री गुरु रामदास जी की शरण में आते हैं तथा गुरसिक्खी-दान की याचना करते हैं। गुरु साहिब 'सतिनाम वाहिगुरु' के सिमरन का उपदेश देकर उनको आगरा में जाकर सिक्खी का प्रचार करने के लिए जाने हेतु कहते हैं :

अब तुम आगे ओर सिधावहु।
सतिगुर सिक्खी जग प्रगटावहु।

भाई गुरदास जी मसंद की पदवी लेकर आगरा को चले गए। बाबा श्रीचंद के श्री गुरु रामदास जी के साथ मिलाप का प्रसंग भी दर्ज है। भाई तीरथा की साखी भी मिलती है। इसमें गुरु साहिब के समय हुए सिक्खों की साखियां भी

(शेष पृष्ठ ८८ पर)

श्री गुरु रामदास जी द्वारा उच्चरित बाणी का विवरण

*-डॉ. रणजीत जीवन कौर**

चतुर्थ पातशाह श्री गुरु रामदास जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रयोग किये गये ३१ रागों में से ३० रागों में बाणी की रचना की है। गुरु जी की बाणी का कुल जोड़ ६४० है। राम-क्रम के अनुसार चौथे पातशाह की बाणी का विवरण निम्न प्रकार है :

१. सिरी राग : सिरी राग के अन्तर्गत सबसे पहले गुरु जी के ६ चउपदे हैं जो पन्ना ३९ से पन्ना ४१ तक दर्ज हैं। इसके बाद एक 'पहरा' पन्ना ७७ पर और पांच कलियों वाला एक 'छंत' पन्ना ७८ पर सुशोभित है। इसके उपरांत ६ पदे वाली एक स्वतंत्र रचना 'वणजारा' है जो पन्ना ८१ पर विराजमान है। इसके बाद 'सिरीराग की वार' है जो पन्ना ८३ से लेकर पन्ना ९१ तक दर्ज है। इस वार में २१ पउड़ियां हैं।

२. माझु राग : माझु राग में पहले चौथे पातशाह के रचे ७ चउपदे हैं जो पन्ना ९४ से पन्ना ९६ तक शोभायमान हैं। इसके बाद एक 'असटपदीआं' है जो पन्ना १२९ पर दर्ज हैं। साथ ही 'वार माझ महला १' में चौथे पातशाह द्वारा रचित २ सलोक भी हैं।

३. गउड़ी राग : गउड़ी राग में चौथे पातशाह के ३२ चउपदे पन्ना १६३ से पन्ना १७५ तक दर्ज हैं। इसके बाद 'करहले' शीर्षक से एक स्वतंत्र बाणी पन्ना २३४ एवं पन्ना २३५ पर विराजमान हैं जिसमें २ असटपदीआं हैं। इसके पश्चात पन्ना ३०० से पन्ना ३१८ तक गुरु जी द्वारा रचित 'गउड़ी की वार' सुशोभित है जिसमें २८ पउड़ियां एवं ५३ सलोक हैं।

४. आसा राग : आसा राग के अंतर्गत सर्वप्रथम गुरु जी की अत्यंत प्रसिद्ध बाणी 'सो पुरखु' है जो पन्ना ३४८ पर दर्ज है। इसके बाद पन्ना ३६५ से पन्ना ३६९ तक १५ चउपदे सुशोभित हैं। इसके उपरांत गुरु जी के १४ छंत पन्ना ४४२ से पन्ना ४५२ तक विराजमान हैं।

५. गूजरी राग : राग गूजरी के अंतर्गत चौथे पातशाह के ७ चउपदे पन्ना ४९३-४९४ एवं एक असटपदीआं पन्ना ५०६ पर दर्ज हैं।

६. देवगंधारी राग : राग देवगंधारी में गुरु जी के ६ चउपदे पन्ना ५२७-५२८ पर दर्ज हैं।

७. बिहागड़ा राग : राग बिहागड़ा में गुरु जी के ६ छंत पन्ना ५३७ से पन्ना ५४१ तक विराजमान हैं। इसके उपरांत 'बिहागड़ा राग की वार' पन्ना ५४८ से पन्ना ५५६ तक दर्ज है जिसमें २१ पउड़ियां एवं गुरु जी के २ सलोक शामिल हैं।

८. वडहंसु राग : राग वडहंसु में चौथे पातशाह के ३ चउपदे (पन्ना ५६०-५६२), ४ छंत (पन्ना ५७२-५७५) एवं २ घोड़ीआं (पन्ना ५७५-५७६) दर्ज हैं। इसके पश्चात पन्ना ५८५ से पन्ना ५९४ तक गुरु जी द्वारा रचित 'वडहंसु की वार' दर्ज है जिसमें २१ पउड़ियां हैं।

९. सोरठि राग : राग सोरठि में गुरु जी के ९ चपउदे पन्ना ६०४ से पन्ना ६०७ तक शोभायमान हैं। इसके उपरांत चौथे पातशाह रचित 'सोरठि की वार' है जो पन्ना ६४२ से

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब। मो: ०९४१७२-७६२७१*

पन्ना ६५३ तक दर्ज है। इसमें २९ पउड़ियां और गुरु जी रचित ७ श्लोक हैं।

१०. धनासरी राग : राग धनासरी में चतुर्थ पातशाह के १३ चउपदे (पन्ना ६६६ से ६७०) एवं एक असटपदी (पन्ना ६९०) दर्ज है।

११. जैतसरी राग : राग जैतसरी में गुरु जी के ११ चउपदे (पन्ना ६९६ से ६९९) दर्ज हैं।

१२. टोडी राग : राग टोडी में गुरु जी का एक चउपदा पन्ना ७११ पर दर्ज है।

१३. बैराड़ी राग : राग बैराड़ी में गुरु जी के ६ चउपदे पन्ना ७१९ एवं पन्ना ७२० पर दर्ज हैं।

१४. तिलंग राग : राग तिलंग में चौथे पातशाह के २ चउपदे (पन्ना ७२३) दर्ज हैं।

१५. सूही राग : राग सूही में चौथे पातशाह के १५ चउपदे (पन्ना ७३१ से ७३६), २ असटपदीआं (पन्ना ७५७ से ७५९) एवं ६ छंत (पन्ना ७७२ से ७७६) दर्ज हैं।

१६. बिलावलु राग : राग बिलावलु में चतुर्थ पातशाह के ७ चउपदे (पन्ना ७९८ से पन्ना ८००), ६ असटपदीआं (पन्ना ८३३ से पन्ना ८३७), २ छंत (पन्ना ८४४-८४५) और 'बिलावलु की वार दर्ज' है जिसमें गुरु जी की १३ पउड़ियां एवं एक सलोक शामिल है। यह वार पन्ना ८४९ से पन्ना ८५४ तक विराजमान है।

१७. गौंड राग : राग गौंड में गुरु जी के ६ चपउदे (पन्ना ८५९ से पन्ना ८६१) दर्ज हैं।

१८. रामकली राग : राग रामकली में गुरु जी के ६ चउपदे पन्ना ८८० से ८८२ पर दर्ज हैं।

१९. नट नाराइन राग : राग नट नाराइन में गुरु जी के ९ चउपदे (पन्ना ९७५ से पन्ना ९७७) एवं ६ असटपदीआं (पन्ना ९८० से पन्ना ९८३) दर्ज हैं।

२०. माली गउड़ा राग : राग माली गउड़ा में गुरु जी के ६ चउपदे पन्ना ९८४ से पन्ना ९८६ तक शोभायमान हैं।

२१. मारू राग : राग मारू में चौथे पातशाह के ८ चउपदे (पन्ना ९९५ से पन्ना ९९८), २ सोहले (पन्ना १०६९ से पन्ना १०७१) दर्ज हैं। साथ ही वार महला ३ में गुरु जी के ३ सलोक भी शामिल हैं।

२२. तुखारी राग : राग तुखारी में चौथे पातशाह के ४ छंत पन्ना १११३ से पन्ना १११७ तक दर्ज हैं।

२३. केदारा राग : राग केदारा में गुरु जी के २ चउपदे पन्ना १११८ पर दर्ज हैं।

२४. भैरउ राग : राग भैरउ में गुरु जी के ७ चउपदे पन्ना ११३४ से पन्ना ११३६ पर दर्ज हैं।

२५. बसंत राग : राग बसंत में चौथे पातशाह के ७ चउपदे पन्ना ११७७ से पन्ना ११७९ तक दर्ज हैं। इसके बाद पन्ना ११९१ पर एक असटपदी विराजमान है।

२६. सारंग राग : राग सारंग में गुरु जी के १३ चउपदे पन्ना ११९८ से पन्ना १२०२ तक दर्ज हैं। इसके बाद २ असटपदीआं (पन्ना १२३६) एवं फिर 'सारंग की वार' पन्ना १२३७ से पन्ना १२५१ तक दर्ज हैं जिसमें ३५ पउड़ियां एवं गुरु जी के ६ सलोक शामिल हैं।

२७. मलार राग : राग मलार में गुरु जी के ९ चउपदे पन्ना १२६२ से पन्ना १२६५ तक सुशोभित हैं।

२८. कानड़ा राग : राग कानड़ा में चौथे पातशाह के पहले १२ चउपदे पन्ना १२९४ से पन्ना १२९८ तक दर्ज हैं। इसके उपरांत ६ असटपदीआं पन्ना १३०८ से पन्ना १३११ तक सुशोभित हैं। फिर पन्ना १३१२ से पन्ना १३१८

तक 'कानड़े की वार' दर्ज है जिसमें गुरु जी की १५ पउड़ियां एवं ३० सलोक हैं।

२९. कलिआण राग : राग कलिआण में गुरु जी के ७ चउपदे (पन्ना १३१९ से पन्ना १३२१) एवं ६ असटपदीआं (पन्ना १३२३ से पन्ना १३२६) दर्ज हैं।

३०. प्रभाती राग : राग प्रभाती में चौथे पातशाह के ७ चउपदे पन्ना १३३५ से पन्ना १३३७ तक दर्ज हैं।

सलोक वारां ते वधीक : इसके अतिरिक्त 'सलोक वारां ते वधीक' में चतुर्थ पातशाह के ३० सलोक भी दर्ज हैं।

कुल बाणी जोड़ : इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में चौथे पातशाह के २४० चउपदे, ३४ असटपदीआं, १ पहरा, २ सोहले, ४० छंत, ६ पदे, १८३ पउड़ियां एवं १३४ सलोक (कुल ६४०) दर्ज हैं।

'पहरा', 'करहले', 'वणजारा', 'घोड़ीआं', 'लावां' आदि गुरु जी की स्वतंत्र बाणियां हैं जबकि राग सिरी, गउड़ी, बिहागड़ा, वडहंसु, सोरठि, बिलावलु, सारंग और कानड़ा में आठ वारें शामिल हैं।

कुछ अन्य सिक्ख ऐतिहासिक स्रोतों में . . . *(पृष्ठ ८५ का शेष)*

लिखी हुई हैं। भाई आदम की ओर से की गई सेवा और उसके घर भाई भगतू के जन्म की साखी विस्तृत रूप में लिखी हुई है। यह जिक्र भी है कि भाई संहारी मल के बेटे के विवाह के समय श्री (गुरु) अरजन देव जी लाहौर जाते हैं:

स्री अरजन जी चलत भे पित आइस कौ पाइ।
कुम्म कुम्म पंथ उलंघिओ लव पुर महिं पवसाइ।

संहारी मल के बेटे के विवाह का प्रसंग, श्री (गुरु) अरजन देव जी की गुरु-पिता के साथ असहनीय जुदाई, श्री (गुरु) अरजन देव जी की वापसी तथा प्रिथीचंद की विरोधता का प्रसंग लिखा हुआ है। जब श्री गुरु रामदास जी गुरगद्दी श्री (गुरु) अरजन देव जी को देने का वचन करते हैं तो उनका बड़ा भाई प्रिथीचंद गुस्से में आकर कहता है:

इस ते मै बड पुत्र तुमारा।
मेरो हक्क सु लेहु बिचारा।
खुशी सहित जे देहु न मोइ।
झगरो कर लेवहुं चित जोइ।

यह सुनकर गुरु साहिब उसको 'मीणा' कहते हैं:

सुन स्री मुख ते गुरू उचारा।
हे मीने क्या कर है रारा।

उस समय के मुख्य सिक्ख भाई माणक चंद, डल्ला निवासी सिक्ख भाई सावण मल, भाई माईदास, मत्थो मुरारी, भाई खेड़ा, भाई सोहिरी, बेनी पंडत और पारिवारिक सदस्य एकत्र हुए। श्री गुरु रामदास जी ने समूह संगत को श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी देने के समय कहा:

सभ सों सतिगुर वाक उचारे।
सुनहु सिक्ख्य सतिगुर के प्यारे।
स्री अरजन मम रूप निहारहु।
जिम मुझ लखहु तथा उर धारहु।
गुरू सिंघासन पर इहु थिरयो।
हलत पलत सभ भार चु धरयो।

अंत में श्री गुरु रामदास जी के ज्योति-जोत समाने, अंतिम संस्कार, दसवें तथा भोग का प्रसंग विस्तृत रूप में वर्णन किया गया है।

श्री गुरु रामदास जी की प्रमुख बाणियों का संक्षिप्त अवलोकन

*-डॉ. परमवीर सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ३१ राग मौजूद हैं। श्री गुरु रामदास जी ने ३० रागों में बाणी की रचना की। गुरु जी की बाणी सम्बंधी संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है :

सोलहे : सोलह पदों के छंद को 'सोलहे' कहा जाता है। गुरबाणी में 'सोलहे' का इस्तेमाल मारू राग में किया गया है। श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी तथा श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित 'सोलहे' श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं। श्री गुरु रामदास जी ने सोलह-सोलह पदों वाले दो छंदों में बाणी की रचना की है। इस बाणी में गुरु जी बताते हैं कि प्रभु सृष्टि का सृजनहार है। वो इसे पैदा करके इसमें हर जगह व्यापक है। वही सारे जीवों का दाता है और वही जल तथा थल पर रहने वाले सब जीवों को दातें देता है, उसे सबकी चिंता है। प्रभु के साथ जुड़े हुए मनुष्य पर सांसारिक पदार्थ अपना प्रभाव नहीं डाल सकते और वह कमल फूल की भांति गृहस्थ में उदास हो जाता है तथा प्रभु के आगे पूर्ण आत्मसमर्पण करने की शिक्षा दी गई है :

किस ही जोरु अहंकार बोलण का ॥
किस ही जोरु दीबान माइआ का ॥ (पन्ना १०७१)

करहले : 'करहले' करहल का बहुवचन है। 'करहल' का अर्थ है 'ऊंट'। ऊंट का ज्यादा सम्बंध रेगिस्तान से है क्योंकि रेतीला इलाका होने के कारण ऊंट को चलना आसान रहता है। इस काव्य रूप को यात्रा से सम्बंधित किया गया है। कहा जाता है कि जब व्यापारी ऊंटों पर सामान लादकर दूर-दराज देशों में व्यापार करने जाते थे तो लंबी आवाज के साथ जो गायन करते थे उन्हें 'करहले' कहा जाने लगा।

गउड़ी राग में श्री गुरु रामदास जी की दो असटपदीआं 'करहले' शीर्षक के अंतर्गत दर्ज हैं। गुरु जी मनुष्य के माया में फंसे हुए मन को 'करहले' कहते हैं जो हमेशा ऊंट की भांति भटकता रहता है। अहंकार मन को गुरमति मार्ग पर चलने में रुकावट डालता है :

--मन करहला मेरे पिआरिआ इक गुर की सिख सुणाइ ॥
इहु मोहु माइआ पसरिआ अंति साथि न कोई जाइ ॥ (पन्ना २३४)

--रंगि रतड़े मन करहले हरि रंगु सदा समालि ॥
हरि रंगु कदे न उतरै गुर सेवा सबदु समालि ॥ (पन्ना २३५)

घोड़ीआं : दूल्हे के घोड़ी पर चढ़ते समय जो गीत गाए जाते हैं उन्हें 'घोड़ीआं' कहा जाता है। श्री गुरु रामदास जी ने इस बाणी का उच्चारण वडहंस राग में किया है। दो छंतों (छंद) वाली इस बाणी में गुरु जी ने शरीर को 'घोड़ी' कहा है जो साधसंगत की बारात रूप सवारी लेकर कठिन मार्ग को तय करती हुई प्रभु के साथ मिलाप करती है। गुरु जी मनुष्य-जन्म में शरीर रूपी घोड़ी पर चढ़ कर प्रभु-मिलाप के मार्ग पर चलने का उपदेश देते हुए कहते हैं :

चड़ि देहड़ि घोड़ी बिखमु लघाए मिलु गुरमुखि

**सिक्ख विश्वकोश विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो: ९८७२०-७४३२२*

परमानंदा ॥
हरि हरि काजु रचाइआ पूरै मिलि संत जना जंञ आई ॥ *(पन्ना ५७५)*

पहरे : श्री गुरु रामदास जी की इस बाणी में जीवन को रात्रि के चार प्रहर की भांति चार हिस्सों में बांटा हुआ है--जन्म से पूर्व मात-गर्भ में, जन्म से बचपन तक, जवानी तथा वृद्ध अवस्था या बुढ़ापा। गुरु साहिब इस बाणी में मनुष्य को परमात्मा के नाम-सिमरन का लाभ लेने की प्रेरणा करते हैं। जीवन को अंधेरे की भांति चित्रित किया गया है और प्रभु-मिलन को प्रकाश का नाम दिया गया है :*"ओथै दिहु ऐथै सभ राति ॥"*

पहले प्रहर में जन्म से पहले की अवस्था है जब परमात्मा ने जीव की उत्पत्ति के लिए ज्योति रखी। दूसरे प्रहर में जन्म के बाद सांसारिक सम्बंधों की शुरुआत, तीसरे प्रहर में सांसारिक पदार्थों में खचित होने का जिक्र करते हुए चौथे प्रहर में बुढ़ापे की तरफ संकेत किया गया है। जीवन के किसी भी अथवा हरेक प्रहर में प्रभु-सिमरन द्वारा मुक्त होने की बात कही गई है।

लावां : श्री गुरु रामदास जी की सूही राग में अंकित इस बाणी के चार बंद हैं जिन्हें दो रूपों में देखा जाता है--सामाजिक तथा आध्यात्मिक। सामाजिक पक्ष में पति-पत्नी के संयोग को प्रकृति का नियम मानकर इसे चलता रखने के लिए 'अनंद कारज' की रस्म की जाती है। 'अनंद कारज' की रस्म के समय ली जाती 'लावों' में धर्म-ग्रंथ की शिक्षा दृढ़ कराई जाती है और इसी के अनुसार जीवन-यापन करने की प्रेरणा की जाती है। आध्यात्मिक पक्ष में दर्शाया गया है कि मनुष्य-जीवन का उद्देश्य प्रभु-मिलन है। पहली 'लाव' प्रविरती कर्म में प्रवेश करने की तरफ संकेत करती है। यह सांसारिक तानेबाने को एक सूत्र में पिरोने का पड़ाव है। दूसरी 'लाव' में सच्चे गुरु का मिलाप है जो कि प्रभु-स्तुति द्वारा अहंकार को वश में करने का मार्ग बताती है। तीसरी 'लाव' में वैराग्य भावना का उत्पन्न होना बताया है। वैराग्य से तात्पर्य निराशा एवं निर्लेपता किया जाता है लेकिन यहां सांसारिक पदार्थों से ऊपर उठ जाने की बात कही गई है। सामाजिक कार-विहार करता हुआ मनुष्य इन पदार्थों में लिप्त नहीं होता। चौथी 'लाव' में सहज अवस्था में रहते हुए जीव-स्त्री प्रभु-मिलाप कर लेती है। यही असल रूप में 'अनंद कारज' है।

वणजारा : 'वणज' (व्यापार) करने वाले को 'वणजारा' कहा जाता है। इसे एक कबीले विशेष के साथ जोड़ कर भी देखा जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'वणजारा' शीर्षक के अंतर्गत श्री गुरु रामदास जी की छः पदों वाली बाणी है; पांच पंक्तियों (तुक) वाले हर पदे के बाद दो पंक्तियों का 'रहाउ' है। इस बाणी में जिज्ञासु मनुष्य को 'वणजारा' नाम से संबोधित किया गया है। इस बाणी में ताकीद की गई है कि सच्चा 'वणज' परमात्मा का नाम है और जिस मनुष्य के मन में उस सच्चे प्रभु के नाम का प्रकाश हो गया है सही रूप में वही 'वणजारा' है:

धनु धनु वणजु वापारीआ जिन वखरु लदिअड़ा हरि रासि ॥
गुरमुखा दरि मुख उजले से आइ मिले हरि पासि ॥ *(पन्ना ८२)*

वारों का विषय-वस्तु : 'वार' किसी शूरवीर या योद्धा के गुणों का व्याख्यान करती है। आम लोग उसके गुणों से प्रभावित होते हैं और उनके मन में उसी जैसा बहादुर या हिम्मती बनने का

उत्साह पैदा होता है। गुरबाणी में परमात्मा को नायक माना गया है और उसके गुणों का गायन करने की प्रेरणा की गई है। *"निरभउ जपै सगल भउ मिटै"* की भावना सिक्ख को उस प्रभु के गुणों के अनुसारी बनाने की प्रेरणा पैदा करती है। बाहरी रूप से 'वारें' सांसारिक युद्धों के समय जोश व उत्साह पैदा करने का कार्य करती हैं तथा आंतरिक रूप से ये साधक को विकारों पर विजय प्राप्त करा कर प्रभु-प्रीति पैदा करती हैं। 'वार' पउड़ियों में होती है और पउड़ियों के साथ श्लोक दर्ज किए हुए हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में २२ 'वारें' दर्ज हैं जिनमें से ८ वारें श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित हैं, जिनके बारे में यहां संक्षिप्त रूप में जानने का यत्न किया जा रहा है :

सिरीरागु की वार : श्री गुरु रामदास जी की यह वार सिरीरागु में दर्ज है। यह राग श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज ३१ रागों में से सबसे पहले दर्ज है और इस राग का नाम ही शीर्षक में शामिल किया हुआ है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना ८३ से ९१ तक दर्ज इस वार की २१ पउड़ियां हैं। इस वार में ४३ श्लोक दर्ज हैं, जिनमें से श्री गुरु नानक देव जी के सात, श्री गुरु अंगद देव जी के दो, श्री गुरु अमरदास जी के तेंतीस तथा श्री गुरु अरजन देव जी का एक श्लोक शामिल है। श्री गुरु रामदास जी का कोई भी श्लोक इस बाणी में दर्ज नहीं है। इस वार में श्री गुरु रामदास जी बताते हैं कि प्रभु एक है, उसी ने सारी सृष्टि पैदा की है और उसी का ही हुक्म इस सृष्टि में चल रहा है। सृष्टि-कर्त्ता को सर्व-ज्ञाता माना गया है जो प्रत्येक मनुष्य के भले-बुरे कर्मों के बारे में जानता है। डरता वो है जो पाप करता है। धर्मी पुरुष खुश रहता है। धर्मी के मन में दुविधा नहीं होती और वो हमेशा प्रभु का ओट-आसरा लेकर उसी के साथ जुड़ा रहता है। प्रभु-कृपा से धर्मी की प्रशंसा होती है और पापी को दंड मिलता है- *"जैकारु कीओ धरमीआ का पापी कउ डंडु दीओइ ॥"* धर्मी सारे जहां से निर्लेप होता है तथा उसे प्रभु-बख्शिश रूपी सिरोपे से स्वीकार करता है--*"तिन ऐथै ओथै मुख उजले हरि दरगह पैधे जाही ॥"* इस वार की अंतिम पउड़ी में गुरु जी खुद को 'प्रभु का ढाढी' कहते हैं और साथ ही बताते हैं कि उन्होंने प्रभु से सच्चे 'नाम' की दात प्राप्त की है।

गउड़ी की वार : इसमें ३३ पउड़ियां तथा ६८ श्लोक शामिल हैं। इनमें २८ पउड़ियां श्री गुरु रामदास जी की तथा ५ पउड़ियां श्री गुरु अरजन देव जी की हैं। श्री गुरु रामदास जी के ५३ श्लोकों के अलावा श्री गुरु अमरदास जी के सात व श्री गुरु अरजन देव जी के ८२ श्लोक इस वार में शामिल हैं। परमात्मा को सृष्टि में सर्वोत्तम मानकर उसकी तरफ मुड़ने तथा उसके साथ जुड़ने को जीवन-उद्देश्य बताया गया है। शरीर एक किले की तरह माना गया है। आध्यात्मिकता का सारा खजाना इसके अंदर छुपा हुआ है। जो यह खजाना बाहर ढूंढते हैं वे मूर्ख हैं। उनकी हालत उस मृग की भांति है, कसतूरी जिसके अंदर छुपी हुई है मगर वह इसकी खोज झाड़ियों में करता हुआ भटकता फिरता है। गुरु के दर्शाये मार्ग पर चलकर ही मनुष्य अंदर छुपा हुआ खजाना ढूंढ सकता है। मनमुख जितने मर्जी छल-कपट करे जीत हमेशा गुरमुख की होती है।

बिहागड़े की वार : २१ पउड़ियों वाली इस वार में ४३ श्लोक दर्ज हैं। इस वार में प्रभु की स्तुति करते हुए उसे समूह-प्राप्तियों का स्रोत बताया गया है। सृष्टि में जो वस्तुएं या हस्तियां

समय व स्थान का हिस्सा बनीं वे परिवर्तनशील तथा नाश होने वाली हैं। प्रभु को भी इस संसार का हिस्सा माना गया है। वो स्थान में तो विद्यमान है मगर समय से मुक्त है, इसलिए प्रभु को सृष्टि के अंदर तथा बाहर एक रस विद्यमान माना गया है। परमात्मा के सदाकालीन अस्तित्व का प्रकटावा करते हुए श्री गुरु रामदास जी कहते हैं :

आपे सभ घट अंदरे आपे ही बाहरि ॥
आपे गुपतु वरतदा आपे ही जाहरि ॥ (पन्ना ५५५)

जब वो प्रकट होना चाहता है तो वो सृष्टि की रचना करता है, उसमें जीवों को पैदा करता है, उन्हें अन्न-पानी का सहारा देता है। वो सबका माता-पिता है तथा शुभ कर्म करने वालों पर वो हमेशा बख्शिश करता है।

वडहंस की वार : इस वार में २१ पउड़ियां तथा ४३२ श्लोक दर्ज हैं। श्री गुरु रामदास जी ने इस वार को *"ललां बहलीमा की धुनि"* पर गाने का आदेश किया है। 'ललां' तथा 'बहलीमा' के बारे में बताया जाता है कि वे कांगड़ा देश के राजपूत जमींदार थे। एक बार सूखा पड़ जाने के कारण ललां ने अपनी पैदावार का छठा हिस्सा देना मान कर उससे अपनी फसल के लिए पानी लिया था। फसल हो जाने पर वो अपने इकरार से मुकर गया और दोनों में लड़ाई हो गई। बहलीमा जीत गया। उनके जीवन की इस घटना को ढाढी वारों द्वारा सुनाते हैं, मगर गुरु जी ने 'वडहंस की वार' को इस धुनि पर गाने का आदेश किया।

सतिगुरु साधक को प्रभु से मिलाने का कार्य करता है। इस वार में सतिगुरु की स्तुति पर अधिक जोर दिया गया है क्योंकि सतिगुरु ही प्रभु-नाम के साथ जोड़कर प्रभु-प्रीति पैदा करने का कार्य करता है। प्रभु-नाम की प्रीति पैदा करने का आसान साधन सतिसंगत को माना गया है:

तितु जाइ बहहु सतसंगती जिथै हरि का हरि नामु बिलोईऐ ॥
सहजे ही हरि नामु लेहु हरि ततु न खोईऐ ॥
(पन्ना ५८७)

सोरठि की वार : 'रागु सोरठि वार महले ४ की' शीर्षक अधीन इस वार की २९ पउड़ियां हैं जिनमें श्री गुरु नानक देव जी के तीन, श्री गुरु अंगद देव जी का एक, श्री गुरु अमरदास जी के ४७ तथा श्री गुरु रामदास जी के सात श्लोक दर्ज हैं। यह वार भी मनुष्य को परमात्मा के साथ जोड़ने का काम करती है। सृष्टि-सृजना को परमात्मा का खेल माना गया है। परमात्मा ने प्रकृति में सातव, राजस तथा तामस तीन गुण पैदा करके जगत में माया-मोह पैदा किया है जो कि मनुष्य के मन में अहंकार पैदा करके उसे जन्म-मरण के चक्कर में डाल देते हैं। परमात्मा ने सृष्टि में आग, हवा, पानी, धरती तथा आकाश पैदा किए हैं। परमात्मा ने इन पांचों तत्वों के संयोग से जीवन पैदा किया है। इन पांच तत्वों के अलावा मनुष्य में परमात्मा की ज्योति भी मौजूद है जो तत्वों को क्रियाशील करने का कार्य करती है। इसके साथ ही प्रकृति में जो हीरे, जवाहरात, माणक, मोती मौजूद हैं वे तत्वों से बने मनुष्य में भी मौजूद हैं। गुरु जी कहते हैं कि जीव को इन हीरों-जवाहरों की खोज में बाहर भटकने की कोई आवश्यकता नहीं बल्कि इन्हें शरीर के अंदर से ही ढूंढा जा सकता है। श्री गुरु रामदास जी फरमान करते हैं कि गुरमुख को यह बात समझ में आ जाती है कि सही या गलत ढंग-तरीकों से एकत्र किया गया धन साथ नहीं जाता और न ही किसी आनंद की प्राप्ति के लिए सहायी

होता है, बल्कि यह माया (धन) परिवार में कलेश का कारण बनती है जिससे जीवन सुखी होने के बजाय और अधिक दुखदायक होता है :

धनु संपै माइआ संचीऐ अंते दुखदाई ॥
घर मंदर महल सवारीअहि किछु साथि न जाई ॥
हर रंगी तुरे नित पालीअहि कितै कामि न आई ॥ *(पन्ना ६४८)*

बिलावल की वार : श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित इस वार में १३ पउड़ियां तथा २७ श्लोक शामिल हैं। श्री गुरु रामदास जी के एक श्लोक के अलावा श्री गुरु नानक देव जी के दो तथा श्री गुरु अमरदास जी के २४ श्लोक शामिल हैं। इस वार में बताया गया है कि परमात्मा हर जगह बसता है और प्रत्येक का पोषण करता है। परमात्मा अपने भक्तों पर हमेशा खुश रहता है और भक्त-जन उसकी रजा में राजी रहने को प्राथमिकता देते हैं। गुरु जी कहते हैं कि जो गुरु की शिक्षा द्वारा परमात्मा का मार्ग ढूंढता है और जो इस मार्ग पर चलते हैं वे 'गुरमुख' हैं। जो गुरु की शिक्षा को धारण नहीं करते वे मनमत करते हैं, उन्हें 'मनमुख' कहा गया है। गुरु-घर के दरवाजे सभी के लिए एक समान खुले रहते हैं, 'मनमुख' भी 'गुरमुख' बनने के योग्य हैं। जैसे नालियों, नालों का पानी एक जगह खड़ा होकर बदबू मारने लगता है, मगर जब वर्षा होती है तो वो पानी बहती नदियों में मिलकर शुद्ध हो जाता है, इसी प्रकार गुरु के दर्शन करने से 'मनमुख' भी 'गुरमुख' बन सकता है और सब तरह से तृष्णा दूर होकर उसका मन शांत हो जाता है।

सारंग की वार : श्री गुरु रामदास जी ने *"राइ महमे हसने की धुनि"* पर इस वार के गायन का आदेश किया है। महमा व हसना कांगड़ा तथा धौल के सरदार थे। कहा जाता है कि हसने ने धोखे से महमे को बादशाह अकबर के पास कैद करा दिया। महमे ने बादशाह को खुश कर लिया और उससे सहायता लेकर उसने हसने पर आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में महमे की जीत हुई। इसी भाव का प्रकटावा श्री गुरु रामदास जी अपनी वार में करते हैं कि परमात्मा सबका बादशाह है और जो सत्य के मार्ग पर चलता है उसे झूठ के मार्ग पर चलने वाले हरा नहीं सकते।

श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित इस वार की ३६ पउड़ियों में ७४ श्लोक हैं। पउड़ियों में से ३५ श्री गुरु रामदास जी की तथा एक श्री गुरु अरजन देव जी की है। श्लोकों में से श्री गुरु नानक देव जी के ३३, श्री गुरु अंगद देव जी के ९, श्री गुरु अमरदास जी के २३, श्री गुरु रामदास जी के ६ तथा श्री गुरु अरजन देव जी के ३ श्लोक शामिल हैं। इस वार में गुरु जी नाम-सिमरन की महिमा का विस्तृत वर्णन करते हैं। जैसे धरती पर गिरा हुआ मनुष्य धरती पर बिना सहारे के खड़ा नहीं हो सकता, नदी में गिरा हुआ मनुष्य पानी के सहारे के बिना बाहर नहीं आ सकता उसी तरह परमात्मा के नाम-सिमरन से टूट कर दुखी हो रहा मनुष्य उसके नाम-सिमरन से ही दुखों से मुक्त हो सकता है। परमात्मा ने जीवों की रचना करके उनमें मोह-माया को पैदा किया है और जब तक मनुष्य इससे मुक्त नहीं होता, दुखी रहता है। गुरु वो पारस है जो लोहे को सोना बना देता है। सतसंगत में गुरु की शिक्षा हासिल करने से अज्ञानता का अंधेरा दूर होता है और मन प्रभु-नाम के साथ जुड़ता है:

सतसंगति नामु निधानु है जिथहु हरि पाइआ ॥

(शेष पृष्ठ १०५ पर)

लावां : दैवी मिलाप की यात्रा

*-बीबी मनजीत कौर**

श्री गुरु रामदास जी द्वारा सूही राग के भीतर के दूसरे छंत को 'लावां' के नाम से जाना जाता है। यह पावन बाणी (छंत) "श्री गुरु ग्रंथ साहिब" के पावन पन्नों ७७३-७७४ पर शोभायमान है। इस छंत को चाहे कोई उप-शीर्षक नहीं दिया हुआ। 'लावां' शब्द बार-बार प्रयोग करने के कारण ही इसका नाम 'लावां' प्रचलित हो गया। 'छंत' पंजाब के लोक-गीतों का वह रूप है, जो विवाह के समय गायन किया या सुनाया जाता है। छंतों का विषय विवाह की सफलता तथा खुशी है। सूही राग श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ऐसा राग है, जिसका संबंध विशेषत: गृहस्थी जीवन की खुशी और विवाह की रीति के साथ है, जैसे :

हम घरि साजन आए ॥
साचै मेलि मिलाए ॥ *(पन्ना ७६४)*

सूहा रंग पंजाबी जन-जीवन में विवाह के साथ विशेष रूप से संबंधित है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सूही राग में अंकित बाणी में उपयोग किये अलंकारों, चिन्हों-प्रतीकों एवं शब्दावली से स्वत: प्रकट होता है। सिक्ख धर्म में गृहस्थ-मार्ग को विशेष महत्व दिया गया है। गृहस्थ-जीवन में प्रवेश करने के लिए सिक्ख धर्म में एक अलग मर्यादा है, जिसको 'अनंद कारज' या 'अनंद संस्कार' कहा जाता है। 'अनंद संस्कार' की संपूर्णता 'लावां' बाणी के साथ होती है। श्री गुरु रामदास जी की इस बाणी को 'अनंद कारज' की रस्म के लिए पढ़ा और गाया जाता है। इन चार लावों में दंपत्ति को गृहस्थ की सही सूझ के उपदेश दिये हैं। गुरमति के अनुसार विवाह कोई दिखावा नहीं, बल्कि आध्यात्मिक पक्ष से परमात्मा के साथ संयोग का सत्य मार्ग है। उचित अर्थों में चार लावें वे चार सीढ़ियां हैं जो विवाह रूपी आंगन में से चढ़ कर परमात्मा की मंजिल तक पहुंचती हैं। लावें गृहस्थ और परमात्मा की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं।

साधारणत: गहरे अध्ययन के अभाव में इस पावन बाणी को रस्मी समझ लिया जाता है जो कि सही दृष्टि का परिचायक नहीं माना जा सकता। हम इस पावन बाणी में विद्यमान अर्थों, गहन रहस्यों, भावों की तरफ दृष्टिपात नहीं कर पाते। 'लावां' वास्तविक रूप में परमात्मा के साथ, वियोग से संयोग की अवस्था है। ये प्रभु-प्राप्ति का मार्ग हैं। 'लावां' का शाब्दिक अर्थ 'लगाना' है। यहां इसका आंतरिक भाव अपने मन को दुनियावी रसों-कसों से हटाकर प्रभु-पति के साथ लगाना है। गुरु साहिबान का जीवन-उद्देश्य यही रहा है कि मनुष्य-मात्र अपनी सुरति को हर हाल में प्रभु के साथ लगाये।

'लाव' शब्द के अर्थ डॉ. भाई वीर सिंघ ने 'काटना', 'तोड़ना' किये हैं। 'लाव' का बहुवचन 'लावां' है जिसके अर्थ हैं लगाव, मिलाप, संयोग। (गुरु ग्रंथ कोश, पृष्ठ ८२८)

भाई कान्ह सिंघ नाभा ने 'लावां' के अर्थ

**प्रवक्ता, शहीद सिक्ख मिशनरी कॉलेज, रणजीतपुरा, डाक: खालसा कालेज, श्री अमृतसर। मो: ९४६४९-८६४४७*

'तोड़ने की क्रिया', 'विवाह समय की परिक्रमा (फेरा)' किये हैं, जिसके द्वारा पिता के घर से संबंध तोड़कर पति के साथ जोड़ा जाता है। *(गुरशबद रतनाकर महान कोश, पृष्ठ १०६५)*

श्री गुरु रामदास जी ने जीव रूपी स्त्री का पति रूप प्रभु के साथ दैवी विवाह का संकल्प चित्रित किया है। यह एक रूपात्मक सृजन है। इसमें एक ओर स्त्री और पुरुष के व्यवहारिक जीवन का आदर्श दर्शाया गया है और दूसरी ओर आत्मा और परमात्मा के आध्यात्मिक संबंध पर दृष्टि डाली गई है। इस प्रकार दोनों पक्षों को स्पष्ट करके दंपत्ति जीवन को आध्यात्मिक प्रेम-संबंध के पैटर्न पर ढालने की प्रेरणा दी गई है।

गुरु नानक साहिब ने जपु जी साहिब की अंतिम पउड़ियों में आध्यात्मिक विकास के पड़ावों का जिक्र किया था। सिक्ख विद्वान इन पड़ावों का जिक्र पांच खंडों के रूप में करते आए हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जपु जी साहिब के पांच खंडों का वर्णन पांच पउड़ियों में नहीं बल्कि चार पउड़ियों में ही हुआ है। जपु जी साहिब के इन आध्यात्मिक पड़ावों का संबंध चार लावों के साथ जोड़ा जाता है। चार लावों की जपु जी साहिब की चार पउड़ियों (३४वीं, ३५वीं, ३६वीं, ३७वीं) के साथ गिनती के पक्ष से समानता है। 'करम खंड' और 'सच खंड' का ३७वीं पउड़ी में इकट्ठा ही विवरण दिया है। इसका भाव यह निकलता है कि 'सच खंड' पड़ाव नहीं है, बल्कि मंजिल है। जपु जी साहिब में वर्णित पहला खंड 'धरम खंड' है।

श्री गुरु रामदास जी ने पहली लाव में धर्म के महत्व को दृढ़ कराते हुए फरमान किया है:

बाणी ब्रहमा वेदु धरमु द्रिड़हु पाप तजाइआ बलि राम जीउ ॥
धरमु द्रिड़हु हरि नामु धिआवहु सिम्रिति नामु द्रिड़ाइआ ॥ *(पन्ना ७७३)*

जपु जी साहिब के पहले खंड में *'करमी करमी होइ वीचार'* को 'लावों' की पहली पउड़ी में 'परविरती करम' कह कर समझाया गया है कि कर्मशील रहना ही वस्तुतः धर्मी होने का लक्षण है। जपु जी साहिब के *'पंच परवाणु'* जो सच्चे दरबार में शोभा प्राप्त करते हैं 'लावां' में वही 'जन' *'सब किलविख पाप'* गंवाकर सच्चे गुरु की कृपा का सदका 'सहज अनंद' का रस लेते हैं। यहां अंतर यह है कि जपु जी साहिब की 'धरम खंड' वाली पउड़ी अनेकों जीवों का वर्णन करती है, जबकि 'लावां' में मनुष्य-मात्र को ही केंद्र बनाया गया है।

कुछ विचारकों ने सूफियों के चार पड़ावों (शरीयत, तरीकत, मारफ़त, हकीकत) की तुलना लावों के साथ की है। ऐसी तुलना करते हुए वे सूफी मत और गुरमति के भीतरी कुछ एक बुनियादी अंतरों को समझने से असक्षम दिखाई देते हैं! गुरमति और सूफी साधना के बीच सबसे बड़ा अंतर यह है कि सूफी साधना में सामाजिकता लगभग मनफी है। सूफी यह स्पष्ट व्यक्त करते हैं कि सूफी का आदर्श परमात्मा के साथ अभेदता है, जिसमें सूफी का अपना व्यक्तित्व फनां (पूर्ण रूप से समाप्त) हो जाता है, जबकि दूसरी ओर गुरमति साधना में व्यक्ति के व्यक्तिगत व्यक्तित्व में विकास होता है। इस प्रकार 'लावां' की तुलना सूफियों की चार अवस्थाओं के साथ करना तर्कसंगत नहीं प्रतीत होता, जबकि इन 'लावों' की तुलना जपु जी साहिब के खंडों के साथ करना अधिक लाभदायक और तर्कसंगत है।

'लावां' के वास्तविक अर्थों के आधार पर

समूची सृष्टि में विचरन करने वाली जीव-आत्माएं स्त्री-रूप हैं। गुरु साहिबान की बहुत-सी बाणी ऐसी मिलती है जिसमें उन्होंने अपने आप को पत्नी रूप में मानकर पति रूप परमात्मा को मिलने के लिए विनतियां की हैं। पति (अकाल पुरख) के विछोड़े में विरह की चोटों को महसूस किया है और इस पीड़ा को अकथनीय बताया है।

अपने आप को उस प्रभु-पति की सोहागिन बनने में गर्व महसूस किया है :

भनति नानकु सभना का पिरु एको सोइ ॥
जिस नो नदरि करे सा सोहागणि होइ ॥

(पन्ना ३५१)

वस्तुत: दुनियावी तौर पर विवाहित हो जाने पर भी हम कुंवारे होते हैं, चूंकि जब तक हम चारों लावों के अर्थों के अनुरूप अपने आप को ढाल नहीं लेते, तब तक हम पूर्णत: भाव कि आत्मिक दृष्टि से विवाहित नहीं हुए होते, चूंकि जीवात्मा ने जब परम-आत्मा के साथ मिलकर *'एक जोति दुइ मूरती'* हो जाना है, वही वास्तविक संयोग होता है। 'चार लावां' जीवन-मंजिल को प्राप्त करने के चार पड़ाव हैं, जीव-आत्मा को परम-आत्मा के साथ जोड़ने और अभेद कराने के लिए मजबूत कड़ी हैं। इस कड़ी का एक सिरा गृहस्थ के साथ जुड़ा है और दूसरा उस मंजिल के साथ, जिस पर पहुंचने की इच्छा होती है। यह विरह से वसल की यात्रा है। जिन जीव-आत्माओं का प्रभु-प्रियतम के साथ मिलाप हो जाता है, गुरु साहिब ने उनको 'सुहागिन' कहा है। ऐसी सुहागिनें अपने सुहाग (अकाल पुरख) की रजा में रहती हैं। ये आत्मिक ज्ञान की ज्ञाता होकर 'सोभावंती नार' कहलवाती हैं :

सोहागणी विचि रंगु रखिओनु सचै अलखि अपारि ॥
सतिगुरु सेवनि आपणा सचै भाइ पिआरि ॥

(पन्ना ४२६)

यही 'सुहागिनें' धर्म कमाने के द्वारा प्रभु-प्राप्ति के सुख को प्राप्त करके उसके महल में प्रवेश करती है अथवा 'आत्मिक सहज' तक पहुंचती हैं।

पहली लाव वह आध्यात्मिक पड़ाव है जो विवाहित जीवन के साथ उपजने वाला गृहस्थ धर्म है। इसी पड़ाव में मनुष्य जिज्ञासु के रूप में बाणी का अभ्यास करता है, नाम वाला बनता है, धर्म के सही अर्थों को समझता है। परविरती कर्मों में विचरण करते हुए अथवा दुनियावी रहु-रीतियों को जारी रखते हुए परविरत मार्ग में दृढ़ रहते हुए, निरविरत अवस्था में पहुंचना है। गुरमुख के पास परविरती में निरविरती को पहचानने वाली आंखें होनी चाहिए। गुरु साहिब का फरमान है :

गुरमुखि परविरति नरविरति पछाणै ॥

(पन्ना ९४१)

निरविरत को पहचानने की सोझी होगी, यदि गुरबाणी का अभ्यास किया जाएगा। गुरबाणी का अभ्यास करने से 'धरम' की प्राप्ति होती है। नाम दृढ़ाने वाला जीवन धर्म द्वारा ब्रह्म के स्वरूप को पहचानता है। इसी पड़ाव में 'पूरे सतिगुरू' को आराधने का उपदेश किया है :

सतिगुरु गुरु पूरा आराधहु सभि किलविख पाप गवाइआ ॥ *(पन्ना ७७३)*

सतिगुरु की आराधना सब पापों का विनाश कर देती है और मन स्वयं में प्रभु के नाम की मिठास को बसाकर आनंदित हो जाता है।

दूसरे पड़ाव में मन के भीतर से 'डर' और 'हउमै' की समाप्ति हो जाती है। *'हउमै मैलु गवाइआ'* इसी तथ्य को स्पष्ट करता है। वस्तुत:

यह 'हउमै' वह वृत्ति है जो जीव को ब्रह्मांड के साथ अनुराग में होने से रोकती है। इस कारण मानव का मन अन-अनुमानित संघर्ष का शिकार होकर कई चिंताओं और फिक्रों में घिर जाता है, परंतु जैसे ही इसको ब्रह्मंडी चेतना की अनुभूति होती है तो फिर सभी ओर अकाल पुरख का पासार ही दिखाई देता है, इसके अतिरिक्त अन्य कुछ दिखाई नहीं देता :

हरि आतम रामु पसारिआ सुआमी सरब रहिआ भरपूरे ॥ (पन्ना ७७४)

'निरमल भउ' की प्राप्ति के साथ मन की एकाग्रता बंधती है, जिसका सदका जीवात्मा कुदरत के साथ एकरूप होकर 'अनहद सबद' और 'मंगलमयी गीत' सुनकर सुख का आनंद लेती है।

श्री गुरु रामदास जी आध्यात्मिक विकास की तीसरी अवस्था में ब्यान करते हैं कि दूसरी अवस्था में प्राप्त 'निरमल भउ' के साथ मनुष्य का संत-जनों सतिगुरु के साथ मिलाप होता है। वह संतों के साथ मिल कर अकथ हरि की कथा को बयान करता हुआ 'वैराग्यमयी' अवस्था में पहुंचता है। वैराग्य से अर्थ है 'उपरामता'।

प्रथम दो लावों के भीतर की अवस्था के अधीन नाम की दृढ़ता को परिपक्व करने के साथ-साथ जीव 'अनहद सबद' सुनने वाली अवस्था तक पहुंचता है। फिर तीसरी लांव में प्रवेश करने से उसके मन में प्रभु को पाने की तड़प जागृत हो जाती है। यही तड़प उसको वैरागी बना देती है। वह आनंद-मंडल में से गुजरता है। वह प्रभु के नाम में रत हुआ, वैरागी हुआ, दुनिया से बेखबर हो जाता है :

नाम रते केवल बैरागी सोग बिजोग बिसरजित रोग ॥ (पन्ना ५०४)

'चाउ' से भरा मन वैरागी होकर प्रभु को दिन-रात चितवता है। उसको हृदय में से हरि-नाम की तानें ही सुनाई देती हैं। अकाल पुरख ने बख्शिश करके बड़े भाग्यशाली होने का सम्मान बख्शा है।

चौथा पड़ाव 'सहज' की अवस्था है। सहज वह अवस्था है जिसमें प्रभु-प्राप्ति का सुख मिल जाता है और जीव आत्मिक सहज में खेलता है, परमेश्वर के साथ एकरूप हो जाता है। जीव को उस फल की प्राप्ति हो जाती है जो उसने *'मन चिंदिआ'* था। इस अवस्था में सब इच्छाओं की पूर्ति हो जाती है। जीव रूपी स्त्री यूं महसूस करती है:

हरि प्रभि ठाकुरि काजु रचाइआ धन हिरदै नामि विगासी ॥ (पन्ना ७७४)

भाव कि इस अवस्था में पहुंची जीवात्मा का वाहिगुरु के साथ रूहानी विवाह हो जाता है। *'मै छोडिअड़ा मेरा तेरा'* की अवस्था में पहुंच कर *'एक जोति'* हो निपटते हैं।

सही शब्दों में ये 'चार लावां' ही वस्तुत: वे चार अवस्थाए हैं, जिन पर अमल-व्यवहार का सदका, उस 'परम-आत्मा' के साथ अभेद हुआ जा सकता है। इन अवस्थाओं को पार करने वाले विरले (विलक्षण) ही जीव होते हैं। चार लावों के साथ विवाह रचाना तो आवश्यक है ही इसके साथ-साथ अनिवार्य यह भी है कि हम इनमें छुपे आध्यात्मिक भावों को समझें, इसके भीतर की रूहानीयत को समझें और इस निर्मल उपदेश पर अमल-ओ-व्यवहार करें।

सारंग की वार महला ४

*-ज्ञानी मोहन सिंघ**

'सारंग की वार' चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी की बाणी है। यह वार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पन्ना १२३७ से १२५१ तक दर्ज है। इस वार की छत्तीस पउड़ियां हैं जिनमें से पैंतीसवीं पउड़ी (पउड़ी म: ५) श्री गुरु अरजन देव जी की उच्चारण की हुई है। हरेक पउड़ी की पांच-पांच पंक्तियां हैं। सभी पउड़ियों की काव्य-गति तथा तोल/वजन एक जैसा है। इन छत्तीस पउड़ियों के साथ ७४ सलोक हैं। महले पहले के ३३, दूजे के ९, तीजे के २३, चौथे के ६ और पांचवें के ३ हैं। पउड़ियों के प्रारंभिक सलोक 'महले पहिले' से 'पंजवें' तक इस प्रकार हैं:

पउड़ी नं: ४ से ५ तक के साथ महले दूसरे के दो-दो सलोक,
पउड़ी नं: ६ से १५ तक के साथ महले पहले के दो-दो सलोक,
पउड़ी नं: १६ के साथ महले दूसरे और पहले का एक-एक सलोक,
पउड़ी नं: १७ के साथ महले पहले के दो सलोक,
पउड़ी नं: १८ के साथ महले चौथे के दो सलोक,
पउड़ी नं: १९ के साथ महले पहले के दो सलोक,
पउड़ी नं: २० के साथ महले पहले और दूसरे का एक-एक सलोक,
पउड़ी नं: २१ के साथ महले पहले और तीसरे का एक-एक सलोक,
पउड़ी नं: २२ के साथ महले दूसरे का एक-एक सलोक,
पउड़ी नं: २३ महले चौथे का एक-एक सलोक,
पउड़ी नं: २४ और २५ के साथ महले तीसरे के दो-दो सलोक,
पउड़ी नं: २६ के साथ महले तीसरे के दो-दो सलोक,
पउड़ी नं: २७ से ३३ के साथ महले तीसरे के दो-दो सलोक,
पउड़ी नं: ३४ के साथ महले तीसरे का एक और महले चौथे के दो सलोक,
पउड़ी नं: ३५ के साथ महले तीसरे के दो सलोक,
पउड़ी नं: ३६ के साथ महले पांचवें के दो सलोक।

इस वार के प्रारंभ में *"सारंग की वार महला ४ राइ महमे हसने की धुनि"* शीर्षक अंकित है। महिमा तथा हसना दूर-समीप के भट्‌टी जाति के बंधु थे। महिमा कांगड़े का और हसना धौले का राजपूत राजा था। महिमा बहुत बहादुर तथा धर्मात्मा था परंतु हसना चालाक होने के कारण दिल का पापी था। अकबर बादशाह का राज्य-काल होने के कारण ये दोनों उसके पास टके (लगान) भरते थे। जब हसना लगान भरने जाता तो महिमा उस पर विश्वास करके अपना लगान भी उसके पास भेज देता। हसना कपटी होने के कारण अपना लगान भर कर, अपनी हाजरी लगवाकर महिमे को गैर-हाजिर लिखवा आया करता था। कुछ समय बीत जाने पर बादशाह को महिमे की गैर-हाजरी के बारे में मालूम हुआ तो उसने

**ऐल-६/९०५, गली नं: ३/४, न्यू शहीद ऊधम सिंघ नगर, श्री अमृतसर। मो: ९७७९६-०८०५०*

महिमे को बंदी बना लिया। अपनी बहादुरी के जौहर दिखाकर महिमे ने बादशाह अकबर को खुश कर लिया तथा अपनी सारी व्यथा सुनाई, जिस पर बादशाह ने अपनी सेना देकर महिमे को हसने पर चढ़ाई करने के लिए भेज दिया। काफी लंबा समय युद्ध चला। अंत में विजय महिमे की हुई और उसने हसने को छोड़ दिया और उसका राज-पाट भी वापिस कर दिया। उनकी वार को ढाढियों ने गाया, जिस पर सतिगुरु जी ने 'सारंग की वार' को 'महिमे हसने की वार की धुनि' पर गायन करने का आदेश देते हुए शीर्षक 'महमे हसने की धुनी' लिखा जिसकी बानगी इस प्रकार है:

महमा हसना राजपूत राइ भारे भट्टी।
हसने बेईमानगी नाल महमे खट्टी।
भेड़ दुहां दा मच्चिआ सर वगे सफट्टी।
महमे पाई फते रण गल हसने घट्टी।
बन्ह हसने नूं छड्डिआ जस्स महमे खट्टी।

इस वार में पउड़ी अनुसार विचार इस प्रकार है:

पहली पउड़ी में साहिब श्री गुरु रामदास जी फरमान करते हैं कि वह परमेश्वर सबका मूल है। उसने समस्त संसार को स्वयं ही पैदा किया है। उसने स्वयं ही जगत-तमाशा रचा है। परमात्मा माया के तीन रूपों द्वारा भ्रमाने वाला भी स्वयं ही है और वह स्वयं ही भाणे (हुक्म) में लगाकर संवारने वाला भी है। वह प्रभु हरेक जगह विद्यमान है तथा समस्त संसार उसके हुक्म के साथ टिका हुआ है:

आपे आपि निरंजना जिनि आपु उपाइआ ॥
आपे खेलु रचाइओनु सभु जगतु सबाइआ ॥

दूसरी पउड़ी का भाव है कि समस्त खेल उस करतार ने स्वयं ही रचा है जिसने मनुष्य-मात्र को गुरु के दामन के साथ लगाकर उसको गुरमुख बना दिया है और फिर वह जीव गुरु की बाणी की बरकत से मन में हरि का सिमरन बसाकर माया के मोह से बच जाता है तथा भ्रम में ठोकरें नहीं खाता फिरता, परंतु सारा खेल पूर्व कर्मों का है। जिनके भाग्यों में पहले की हुई अच्छी कमाई है उनको ही हरि स्वयं गुरु के साथ मिलाता है और इस प्रकार वे आत्मिक अडोलता में टिक कर प्रभु के साथ जुड़े रहते हैं :

जिन कै पोतै पुंनु है गुरु पुरखु मिलाइआ ॥
नानक सहजे मिलि रहे हरि नामि समाइआ ॥

तीसरी पउड़ी में गुरु साहिब फरमान करते हैं कि हे भाई! मनमुख के अंदर परमात्मा को छोड़कर माया का मोह है और वे द्वितीय-भाव में लुभायमान रहते हैं। वे कपट की कमाई करते हैं तथा झूठ ही बोलते हैं। वे पुत्र तथा स्त्री के मोह में फंस कर सभी दुखों को अपने ऊपर ले लेते हैं। वे भ्रमों में पड़े ठोकरें खाते हैं। इसी कारण वे यमों द्वारा बंधे पिटाई सहते हैं। मन के मुरीद जीव जीवन व्यर्थ गंवा लेते हैं, लेकिन यह भी प्रभु का हुक्म ही है:

जम दरि बधे मारीअहि भरमहि भरमाइआ ॥
मनमुखि जनमु गवाइआ नानक हरि भाइआ ॥

चौथी पउड़ी में हजूर अपने आप को संबोधन करके जीव को समझाते हैं कि नाम ही सभी सुखों का खजाना है। तीव्र इच्छा से हरि का सिमरन किया जाए तो उस सच्चे घर में सम्मान सहित जाया जा सकता है। जो गुरमुख बाणी को अपने हृदय में बसा लेते हैं उनकी पक्षी जैसी उड़ने वाली मति वश में आ जाती है तथा नाम की दात तभी मिलती है जब प्रभु दयालु हो :

नानक आपि दइआलु होइ नामे लिव लाई ॥

पांचवीं पउड़ी में फरमान है कि प्रभु का

नाम माया के प्रभाव से रहित है। जो इसको सुन-सुन कर मन में बसा लेते हैं उनको सुखों की प्राप्ति होती है। इस बात को कोई विरला (कोई चुनिंदा मनुष्य) समझ सकता है। हरि के भक्तों को सच्चा व स्थिर रहने वाला प्रभु कभी नहीं भूलता, चूंकि सच्चा नाम ही उनके जीवन का सहारा बन जाता है। नाम में जुड़ने से ही उनको सच्चा सुख प्रतीत होता है। गुरु साहिब फरमान करते हैं कि हे भाई! वह हरि-प्रभु प्रत्येक के शरीर और मन में व्याप्त हो रहा है, परंतु निश्चय गुरु द्वारा ही बंधता है :

भगता कउ नाम अधारु है नामे सुखु होई ॥
नानक मनि तनि रवि रहिआ गुरमुखि हरि सोई ॥

छेवीं पउड़ी में साहिब ने 'नाम' सुनने के महत्व को दर्शाया है। यदि 'नाम' में सुरति जुड़े तो सही अर्थों में वही 'नाम' को सुनता है। इसके साथ मनुष्य के अंदर विगास तथा शांति उत्पन्न होती है, मन तृप्त हो जाता है तथा दुखों का नाश होता है। नाम-सिमरन का सदीवी चाव जीव के मन के अंदर बन जाता है तथा हृदय में से 'नाम' ही 'नाम' के झरने फूटते हैं:

नाइ सुणिऐ मनु रहसीऐ नामे सांति आई ॥
नाइ सुणिऐ मनु त्रिपतीऐ सभ दुख गवाई ॥

सातवीं पउड़ी में 'नाम' की महिमा का वर्णन है। 'नाम' में सुरति जोड़ने से गुरमुख के अंदर ऐसी अगंमी शक्तियां आ जाती हैं जिनसे अन्य करामाती शक्तियों की इच्छा समाप्त हो जाती है। उसको धन-पदार्थों की इच्छा रहने की तो बात ही क्या माया तक उसकी दासी बन जाती है। 'नाम' सुनने से संतोष एवं अडोलता की अवस्था प्राप्त हो जाती है जो शांति की प्रतीक है:

नाइ सुणिऐ संतोखु होइ कवला चरन धिआवै ॥
नाइ सुणिऐ सहजु ऊपजै सहजे सुखु पावै ॥

आठवीं पउड़ी में फरमान है कि 'नाम' के साथ सुरति जोड़ने से पवित्रता प्राप्त होती है। मृत्यु का भय नजदीक नहीं आ पाता। परमात्मा की ज्योति का प्रकाश हो जाता है। अपने मूल को समझ कर 'नाम' का लाभ कमा लिया जाता है। पापों का भय नहीं रहता, परंतु यह 'नाम' की दात उसी जीव को प्राप्त होती है जो गुरु के बताये मार्ग पर चलकर सफर तय करता है:

नाइ सुणिऐ सुचि संजमो जमु नेड़ि न आवै ॥
नाइ सुणिऐ घटि चानणा आन्हेरु गवावै ॥

नौवीं पउड़ी में साहिब फरमान करते हैं कि यदि 'नाम' में मन लग जाए तो जीवन का सही मार्ग साफ दृश्टव्य हो जाता है। 'नाम' में मन पतीजने (संतुष्ट होने) से कोई रुकावट नहीं पड़ती। सुखों की प्राप्ति होती है। नाम के सिमरन की बरकत से परमेश्वर के द्वार पर सम्मान मिलता है, संसार-समुद्र से पार गुजरा जा सकता है। यदि जीवन के अंदर यह विश्वास बन जाए कि परमात्मा का नाम स्मरण करते रहना सही रास्ता है तो फिर मनुष्य ठोकरें नहीं खाता तथा सही जगह पहुंच जाता है:

नाइ मंनिऐ सुखु ऊपजै नामे गति होई ॥
नाइ मंनिऐ पति पाईऐ हिरदै हरि सोई ॥

दसवीं पउड़ी में फरमान है कि 'नाम' के मानने से कुल और कुटंब सब पार उतर जाते हैं, यहां तक कि 'नाम' के मानने वाले संगी-साथी भी पार उतर जाते हैं। जिन्होंने 'नाम' के साथ मन जोड़ लिया है उनकी दुख तथा माया वाली भूख मिट जाती है, परंतु 'नाम' मानने की दात गुरु की बख्शिश द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है :

नाइ मंनिऐ कुलु उधरै सभु कुटंबु सबाइआ ॥
नाइ मंनिऐ संगति उधरै जिन्ह रिदै वसाइआ ॥

ग्यारहवीं पउड़ी में हजूर फरमान करते हैं

कि 'नाम' के मानने से हउमै (अहं) दूर होकर मति उज्जवल हो जाती है। सभी दुखों का नाश हो जाता है। 'नाम' को मन में बसाने से मन में शांति आ बसती है। नाम-सिमरन के चाव से सहज अवस्था वाले सुखों की प्राप्ति हो जाती है। गुरु के सम्मुख रहने वाले गुरमुख हरि के 'नाम' को स्मरण करते हुए यह समझ लेते हैं कि प्रभु-नाम ही मूल्यवान मोती है :

नाइ मंनिऐ सांति ऊपजै हरि मंनि वसाइआ ॥
नानक नामु रतंनु है गुरमुखि हरि धिआइआ ॥

बारहवीं पउड़ी के अनुसार यदि सिमरन में मन विलीन हो जाए तो 'नाम' में लिव लगती है। फिर प्रभु की सिफत-सलाह वाली आदत बन जाती है, भ्रम दूर हो जाते हैं, विकारों से रुचि हट जाती है। पूरे गुरु की कृपा का सदका ही 'नाम' को माना जा सकता है :

नाइ मंनिऐ सालाहीऐ पापां मति धोई ॥
नानक पूरे गुर ते नाउ मंनीऐ जिन देवै सोई ॥

तेरहवीं पउड़ी में साहिब फरमान करते हैं कि परमात्मा का नाम माया से रहित है। उसका कोई चिंन्ह नहीं। फिर उसको कैसे अनुभव किया जाए? वह प्रभु हर जगह बस रहा है, परंतु गुरु ही इसका दीदार हृदय में करा सकता है। हे भाई! जब उस परमेश्वर की दृष्टि कृपालु हो तभी गुरु का मिलाप होता है :

गुर पूरे ते पाईऐ हिरदै देइ दिखाई ॥
नानक नदरी करमु होइ गुर मिलीऐ भाई ॥

चौदहवीं पउड़ी में गुरु साहिब मनुष्य-मात्र को पाखंडी साधुओं के बारे में सुचेत करते हैं कि हे भाई! शरीर पर राख़ मल कर, खफणी और झोली आदि रखकर साधुओं वाला वेश किया हो, परंतु हृदय के अंदर अज्ञानता का अंधकार हो, खोटी मति के कारण स्वभाव अहंकार वाला बना हो और जो प्रभु का नाम नहीं स्मरण करता वह मूर्ख भ्रम में भटकता रहता है तथा अंत में 'नाम' विहीन् होकर व्यर्थ भटक-भटक कर जीवन-बाजी हार जाता है :

अंतरि लालचु भरमु है भरमै गावारी ॥
नानक नामु न चेतई जूऐ बाजी हारी ॥

पंद्रहवीं पउड़ी में गुरु साहिब फरमान करते हैं कि जिनके हृदय में विकारों की मैल एवं छल-कपट है वे चाहे तीर्थों पर स्नान करते रहें उनके पाप नहीं छुप सकते बल्कि बाहर निकल आते हैं। कूड़ के लालच के कारण वे फिर-फिर योनियों में जा पड़ते हैं। गुरु साहिब फरमान करते हैं कि हरेक मनुष्य को अपने किये का फल भुगतना पड़ता है। यह रज़ा कर्ता ने जीव के माथे पर लिख भेजी है:

कूड़ै लालचि लगिआ फिरि जूनी पाइआ ॥
नानक जो बीजै सो खावणा करतै लिखि पाइआ ॥

सोलहवीं पउड़ी में साहिब फरमान करते हैं कि जिस प्रकार बाहर से अमृत सींचने से नीम के भीतर का कड़वापन नहीं जाता, सांप को दूध पिलाने से उसका डंक मारने का स्वभाव नहीं बदलता, बाहर से धोने से पत्थर के भीतर का कोरापन नहीं जाता, इसी प्रकार विष को अमृत के साथ सींचने पर विष का ही फल प्राप्त किया जाता है। यही हाल मनमुख का है। जीव को साधसंगत के द्वारा हरि का हुक्मी बंदा तथा कृपा का पात्र बनने की आवश्यकता है। यदि प्रभु गुरमुखों की संगत मिला दे तभी मन में से माया के मोह का समस्त विष उतर सकता है:

बिखु महि अंम्रितु सिंचीऐ बिखु का फलु पाइआ ॥
नानक संगति मेलि हरि सभ बिखु लहि जाइआ ॥

सत्रहवीं पउड़ी के अनुसार मनमर्जी करने वाला मनुष्य 'नाम' को छोड़कर निंदा, चोरी आदि अवगुणों को ग्रहण करके लोगों की बदनामी

ही अर्जित करता है। ऐसे मनुष्य करूप तथा भ्रष्ट मुंह वाले लगते हैं और सदैव दुखी रहते हैं। उनके सभी श्रेष्ठ गुण नष्ट हो जाते हैं। वे निर्लज्जता का जीवन बिताते हैं। अंत में सतिगुरु जी विनती करते हैं कि हे प्रभु! ऐसे जीवों की संगत से बचा लो। ऐसी कृपा कीजिए जिसके फलस्वरूप सही प्रकार का जीवन-निर्माण हो :

जिन अंदरि निंदा दुसटु है नक वढे नक वढाइआ ॥
महा करूप दुखीए सदा काले मुह माइआ ॥

अठारहवीं पउड़ी में गुरु साहिब फरमान करते हैं कि गुरु के सम्मुख होकर जिनके अंदर नाम-सिमरन का चाव पैदा हो जाता है उनके हृदय शांत हो जाते हैं। उनको जप-तप तथा तीर्थों पर स्नान करने की आवश्यकता नहीं रहती। हरि-सिमरन से उनका हृदय शुद्ध हो जाता है। वे हरि के गुण गाकर शोभा प्राप्त करते हैं और प्रभु के चरणों में जुड़े हुए सुंदर लगते हैं:

मेरे हरि जीउ एवै भावदा गुरमुखि तराइआ ॥
नानक गुरमुखि मेलिअनु हरि दरि सोहाइआ ॥

उन्नीसवीं पउड़ी के द्वारा साहिब फरमान करते हैं कि परमेश्वर का मिलाप सतिसंगत में हरि का नाम जपने से होता है। हृदय में प्रकाश होकर अंधकार दूर हो जाता है। ठीक उसी प्रकार जिस तरह पारस के साथ लगने से लोहा सोना बन जाता है। 'नाम' की दात पिछली की गई कमाई से ही मिलती है :

सतसंगति नामु निधानु है जिथहु हरि पाइआ ॥
गुर परसादी घटि चानणा आन्हेरु गवाइआ ॥

बीसवीं पउड़ी में फरमान है कि सतिगुरु मानो अमृत-वृक्ष है जो अमृत-रस रूप फलों से भरा हुआ है। यह अमृत-फल गुरु के शबद द्वारा प्राप्त होता है। जो जीव गुरु के बताये मार्ग पर चलता है वह परमेश्वर के साथ एकरूप हो जाता है। उसके अंदर प्रभु-ज्योति का प्रकाश हो जाता है। मृत्यु का भय उसको तनिक भी स्पर्श नहीं कर सकता। जिस पर वह प्रभु कृपा कर दे, जिसको वह प्रभु अपने साथ मिला ले उसको पुनः जन्म-मरण में नहीं जाना पड़ता है:

सतिगुरु अंम्रित बिरखु है अंम्रित रसि फलिआ ॥
जिसु परापति सो लहै गुर सबदी मिलिआ ॥

इक्कीसवीं पउड़ी में फरमान है कि धनवान और निर्धन सब माया में फंसे हुए हैं। वे माया को जोड़-जोड़कर इसके साथ प्यार बढ़ाते हुए दूसरे की माया चुराने तक से संकोच नहीं करते, यहां तक कि धन के संबंध में अपनी स्त्री और पुत्र पर भी विश्वास नहीं करते, परंतु अंत-काल यह माया जीवों को मोह में फंसाकर चली जाती है। माया के साथ प्रेम करने वाले बहुत पश्चाताप करते हैं, यमों के दर पर बंधे हुए पिटाई सहन करते हैं क्योंकि हरि को माया के मोह में फंसे लोगों का यही अंत मंजूर है :

वेखदिआ ही माइआ धुहि गई पछुतहि पछुताइआ ॥
जम दरि बधे मारीअहि नानक हरि भाइआ ॥

बाईसवीं पउड़ी के आधार पर गुरु के अनुसारी चलने वालों की धन-संपदा भी सब पवित्र है क्योंकि वे उसको रब के लेखे व्यय करते हैं तथा सुख प्राप्त करते हैं। जो हरि का नाम स्मरण करते हैं उनको किसी कमी का सामना नहीं होता। गुरु के सम्मुख रहने वालों को यह साफ दृश्टव्य होता है। इसी लिए वे माया को अपने हाथों से देते रहते हैं। परमेश्वर की भक्ति करने वाले भक्तों को अन्य कोई (माया का पदार्थ) याद नहीं आता। उनका मन हरि-सिमरन में विलीन रहता है:

गुरमुखि सभ पवितु है धन संपै माइआ ॥
हरि अरथि जो खरचदे देंदे सुखु पाइआ ॥

तेईसवीं पउड़ी के अनुसार जो अपने आप को 'सरदार' और 'मालिक' कहलवाते हैं उनमें से भी कोई यहां सदैव नहीं रह सकता। चूना पुते किलों तथा मकानों में से कुछ भी साथ नहीं जाना। सोने की दुमचियों के साथ हवा की भांति तेज रफ्तार घोड़े तथा अन्य चालाकियां दर्शाना धिक्कार योग्य है। छत्तीस प्रकार के स्वादिष्ट खाने भी खाते हैं तो भी वे विष्टा ही बढ़ाते हैं। जो सब कुछ देनहार परमेश्वर को भुलाकर मन के पीछे लगने वाले मनमुख हैं वे दुख ही प्राप्त करते हैं:

छतीह अंम्रित परकार करहि बहु मैलु वधाई ॥
नानक जो देवै तिसहि न जाणन्ही मनमुखि दुखु पाई ॥

चौबीसवीं पउड़ी में गुरु साहिब फरमान करते हैं कि शरीर के श्रृंगार के लिए मायाधारी मनुष्य कई प्रकार के रंग-बिरंगे रेशमी वस्त्र पहनते हैं, लाल-सफेद गलीचों पर बैठकर मजलिसें लगाते हैं। ऐसे जीवों का खाना तथा भोगना दुख रूप है। वे अकड़पन में रहते हैं। उन्होंने दुखों से बचाने वाला प्रभु का नाम नहीं स्मरण किया:

गढ़ि काइआ सिंगार बहु भांति बणाई ॥
रंग परंग कतीफिआ पहिरहि धर माई ॥

पच्चीसवीं पउड़ी के अनुसार जो जीव नाम स्मरण करते हैं वे जगत में अटल आत्मिक जीवन वाले बन जाते हैं। जो जीव श्वास-श्वास परमेश्वर का सिमरन करता है, हरि के बिना अन्य किसी को स्मरण नहीं करता उसका जन्म पापों की मैल दूर करके पवित्र हो गया। ऐसे जीवों ने सदैव स्थिर रहने वाले सर्वव्यापक परमात्मा को जपा है अत: उनको अमर पदवी प्राप्त हो गई है :

नामु सलाहनि नामु मंनि असथिरु जगि सोई ॥
हिरदै हरि हरि चितवै दूजा नही कोई ॥

छब्बीसवीं पउड़ी में श्री गुरु रामदास जी फरमान करते हैं कि नाम-सिमरन वाले जीवों की अपने घर अर्थात् हरि की हज़ूरी में वृद्धि होती है। वे पुन:-पुन: योनियों में नहीं पड़ते तथा न मरते हैं। वे श्वास-श्वास परमेश्वर को स्मरण रखते हैं, परमेश्वर का दिया हुआ खाते हैं तथा उसको याद रखते हैं। उनके अंदर हरि-नाम का प्रकाश हो जाता है तथा नाम का रंग कभी नहीं उतरता। जिन पर हरि-प्रभु ने स्वयं कृपा की है उसने उनको अपने साथ मिला लिया है तथा वे सदैव उसके समीप रहते हैं :

हरि का रंगु कदे न उतरै गुरमुखि परगासा ॥
ओइ किरपा करि कै मेलिअनु नानक हरि पासा ॥

सत्ताइसवीं पउड़ी में गुरु जी का कथन है कि मन का मुरीद मनुष्य अहंकार में रहता है। वह नाम नहीं स्मरण करता जिस कारण वह आत्मिक मृत्यु अपने पर बनाये रखता है। उसने गले-सड़े लोहे की भांति स्वयं पर पापों तथा विकारों का बड़ा बोझ उठाया हुआ है। जीवन का रास्ता बहुत कठिन तथा डरावना है, इसको कैसे पार करेगा? हे भाई! जिन पर वह प्रभु कृपा करे वही बचे रहते हैं। हरि के नाम ने उनको पार उतार दिया है :

मारगु बिखमु डरावणा किउ तरीऐ तारी ॥
नानक गुरि राखे से उबरे हरि नामि उधारी ॥

अठाइसवीं पउड़ी में फरमान है कि हरि-नाम का लेखा पढ़ने से कोई लेखा शेष नहीं रह जाता। उसको अन्य कोई लेखा नहीं पूछ सकता। उसको हरि के दर पर सदैव सहारा मिलता है। उसका तो यमराज भी सत्कार करता है। उसके अंदर सदैव विगास बना रहता है तथा उसके अंदर शबद के बाजे बजने लग जाते हैं :

लेखा पड़ीऐ हरि नामु फेरि लेखु न होई ॥
पुछि न सकै कोइ हरि दरि सद ढोई ॥

उनतीसवीं पउड़ी के अनुसार जिन जीवों को प्रभु अपने नाम की लगन लगाता है फिर वे सदैव परमेश्वर के दीदार की दात ही मांगते हैं। गुरु साहिब फरमान करते हैं कि हे भाई! मैं हरि-दर्शन के बिना मरता हूं, एक पल, एक घड़ी जी नहीं सकता। प्रभु सदैव मेरे साथ है। वह प्रभु जिसको अपने नाम की लगन लगाता है उसको स्वयं ही सोये हुए को जगा देता है :

मंगत जनु जाचै दानु हरि देहु सुभाइ ॥
हरि दरसन की पिआस है दरसनि त्रिपताइ ॥

तीसवीं पउड़ी के अनुसार लंबी आयु जान दुनियादार मनुष्य आशाएं बांधता है, महल-मीनार बनाने में मस्त रहता है। यदि वश चले तो दूसरों का माल ठग लाता है। मूर्ख यह नहीं जानता कि यमराज उसके श्वासों की गणना कर रहा है जो कि कम हो रहे हैं। आशाओं के इस व्यापक जाल में से बचाव केवल गुरु की शरण में पड़ने से ही है :

आस करे सभु लोकु बहु जीवणु जाणिआ ॥
नित जीवणु कउ चितु गढ़ मंडप सवारिआ ॥

इकत्तीसवीं पउड़ी में फरमान है कि आशाओं/इच्छाओं के चक्र में पड़े मनुष्य दुखी रहते हैं लेकिन गुरु के रास्ते पर चलने वाले इच्छाओं से निराश अर्थात् ऊपर उठकर रहते हैं। निराशा तथा दुख उनको दुखी नहीं करते। वे सुखी रहते हैं। वे गृहस्थ में रहते हुए प्रभु के साथ सुरति जोड़े/लगाये रखते हैं तथा सदैव अलग रहते हैं। गुरु साहिब फरमान करते हैं कि जो हरि के साथ मिले रहते हैं उनको धुर से ही परमेश्वर ने अपने साथ लगाया हुआ है:

आसा विचि अति दुखु घणा मनमुखि चितु लाइआ ॥
गुरमुखि भए निरास परम सुखु पाइआ ॥

बत्तसवीं पउड़ी में गुरु जी कहते हैं कि स्त्री और पति में बहुत प्रेम बना है तथा मिलकर बहुत मोह बढ़ाया है। माया के मोह में फंसा जीव पुत्र और स्त्री को देखकर खुश होता है तथा देश-परदेस से ठगी मार कर धन लाता है एवं उनके मुंह में डालता है और जब धन से वैर उपजता है तो फिर कोई नहीं छुड़ा सकता। धन की खातिर किये पापों की फटकार पड़ती है तथा 'नाम' के बिना मनुष्य दुख प्राप्त करता है:

इसतरी पुरखै बहु प्रीति मिलि मोहु वधाइआ ॥
पुत्रु कलत्रु नित वेखै विगसै मोहि माइआ ॥

तेंतीसवीं पउड़ी के अनुसार जिस जीव को परमात्मा की कृपा का सदका यह समझ आ जाती है कि स्त्री, पुत्र, धन सब नाशवंत हैं, वे जगत में सदैव टिके रहने का उपाय ढूंढ कर पूरे गुरु की शरण में पड़ता है तथा नाम-सिमरन में विलीन हो जाता है। जिसको वह प्रभु बख्शकर अपने साथ मिला लेता है वही उस प्रभु के नाम में समा गया है :

इसत्री पुरखै अति नेहु बहि मंदु पकाइआ ॥
दिसदा सभु किछु चलसी मेरे प्रभ भाइआ ॥

चौंतीसवीं पउड़ी में गुरु साहिब फरमान करते हैं कि पूरे गुरु की दी दात अर्थात् हरि का सिमरन प्राप्त होता दिन-ब-दिन बढ़ता है। जिस पर दयालु होकर प्रभु यह दात बख्श दे वह छुपाने से भी नहीं छुपती। जिसको नाम प्राप्त हो जाता है उसका हृदय सदैव बिगसा रहता है। यदि कोई उसकी नकल करे तो उसके सिर में राख़ ही पड़ती है। गुरु साहिब फरमान करते हैं कि पूरे गुरु के बढ़प्पन की कोई नकल नहीं कर सकता :

गुर पूरे की दाति नित देवै चड़ै सवाईआ ॥
तुसि देवै आपि दइआलु न छपै छपाईआ ॥

जैसे कि आरंभ में भी बताया गया है कि पैंतीसवीं पउड़ी पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन

देव जी द्वारा उच्चारण की हुई है। इस पउड़ी में गुरु जी फरमान करते हैं कि पूर्व सतिगुरु ने जिस मनुष्य को मालिक परमात्मा के साथ मिला दिया है उस मनुष्य का खाना, पहनना आदि सच्चा नाम के आधार वाला बन जाता है। वह संसार के कार्य-व्यवहार करता हुआ और शरीर की आवश्यक जरूरतें पूरी करता हुआ भी मालिक के दर पर स्वीकार हो जाता है। उनकी खुराक और पहरावा भी निर्मल प्रभु-नाम हो जाता है। जिन्होंने उस माया से ऊंचे मालिक जो स्मरण किया है उनका भाग्य पूरा है। अच्छी संगत के साथ ही संसार से प्रभु की स्तुति करते हुए पार उतरा जा सकता है :

पउड़ी मः ५ ॥

सचु खाणा सचु पैनणा सचु नामु अधारु ॥
गुरि पूरै मेलाइआ प्रभु देवणहारु ॥
भागु पूरा तिन्ह जाणिआ जपिआ निरंकारु ॥
साधू संगति लगिआ तरिआ संसारु ॥
नानक सिफति सलाह करि प्रभ का जैकारु ॥

छत्तीसवीं तथा अंतिम पउड़ी में गुरु साहिब उपदेश देते हैं कि पूरे गुरु के शबद के द्वारा परमात्मा का बढ़प्पन देखने वाले मनुष्य का हृदय खिल जाता है और उसके भीतर शांति आ बसती है। परमेश्वर हर जगह व्याप्त उसको दृश्टव्य होता है। सारी सृष्टि को उसने अपने साथ टांका हुआ है क्योंकि वह सृष्टि का मालिक है तथा सब पर हुक्म चला रहा है। गुरु साहिब फरमान करते हैं कि जो उस परमेश्वर को अच्छा लगता है वह वही करता है तथा सब कुछ उसके हुक्म में चल रहा है :

आपि नाथु सभ नथीअनु सभ हुकमि चलाई ॥
नानक हरि भावै सो करे सभ चलै रजाई ॥

श्री गुरु रामदास जी की प्रमुख बाणियों का संक्षिप्त अवलोकन (पृष्ठ ९३ का शेष)

गुर परसादी घटि चानणा आन्हेरु गवाइआ ॥
लोहा पारसि भेटीऐ कंचनु होइ आइआ ॥
नानक सतिगुरि मिलिऐ नाउ पाईऐ मिलि नामु धिआइआ ॥
जिन्ह कै पोतै पुंनु है तिन्ही दरसनु पाइआ ॥
(पन्ना १२४४)

कानड़े की वार : श्री गुरु रामदास जी ने इस वार को "मूसे की वार की धुनी" पर गाने का आदेश किया है। मूसा एक साहसी तथा सदाचारी व्यक्ति हुआ है जिसकी मंगेतर एक राजा के साथ ब्याही गई थी। इसने राजा के साथ युद्ध करके उसे हरा दिया और उसे उसकी पत्नी सहित कैद कर लिया। मूसा ने कैद की हुई स्त्री से मन की इच्छा का पता किया कि वो किसके साथ रहना चाहती है तो स्त्री ने राजा के साथ ब्याही होने के कारण उसके साथ ही रहने की इच्छा जाहिर की। मूसा ने दोनों को छोड़ दिया। ढाढी-जन मूसा के साहस तथा सदाचार भरपूर वार का गायन करते थे। उसी वार की धुनी पर इस वार को गाने का आदेश किया गया है।

श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित १५ पउड़ियों और ३० श्लोकों वाली इस वार में गुरु जी परमात्मा को *"जलि थलि महीअलि पूरनो अपरंपरु सोई"* मानते हुए कहते हैं कि वही सब जीवों की पालना करता है, उसके बिना दुनिया पर सच्चा कोई गृहस्थी नहीं, उसके नाम-सिमरन से जन्म-जन्म की कालिमा उतर जाती है और मन-इच्छित फल की प्राप्ति होती है। सतिगुरु के माध्यम से ऐसे प्रभु का गुणगान करने से आवागमन मिट जाता है तथा सब संगी-साथी व गृहस्थी संसार-सागर से पार हो जाते हैं।

"गउड़ी की वार" का विषय-वस्तु

*-बीबी रजवंत कौर**

सतिगुरु पुरखु दइआलु है जिस नो समतु सभु कोइ ॥
एक द्रिसटि करि देखदा मन भावनी ते सिधि होइ ॥ *(पन्ना ३००)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु रामदास जी की उच्चारण की बहुत सारी बाणी मिलती है। ३० रागों में करीब ६७९ शबद प्राप्त होते हैं। जिस विषय पर हमने आज चर्चा करनी है वह है 'गउड़ी की वार' जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पन्ना ३०० से लेकर ३१८ तक अंकित है। इस वार में श्री गुरु रामदास जी के श्लोक और पउड़ियां प्राप्त होती हैं। अंत में कुछ श्लोक हमें महला तीसरा और महला पांचवां के भी प्राप्त होते हैं। पूरे श्री गुरु ग्रंथ साहिब में हमें श्री गुरु रामदास जी की ८ वारें प्राप्त होती हैं जो सिरीरागु, गउड़ी, बिहागड़ा, वडहंस, सोरठ, बिलावल, सारंग और कानड़ा राग में दर्ज हैं।

'गउड़ी की वार' में जितने भी श्लोक हैं उन सबका आंतरिक भाव साथ ही दी गई पउड़ियों में दिया गया है। अगर हम पउड़ी को पढ़ते हैं तो हमें सही अर्थों में श्लोकों का रस मानने को मिलता है। पूरी की पूरी वार में श्री गुरु रामदास जी ने स्वप्रकाशित, सर्वशक्तिमान प्रभु की लीला का उल्लेख किया है। मनुष्य-मात्र को प्रभु के मिलाप का रास्ता बताया है। गुरु साहिब बार-बार उसे सत्य-स्वरूप वर्णन करते हैं। आप बताते हैं कि प्रभु का स्वरूप सच्चा है। गुरमति में सच्चा से भाव है सदीवी विद्यमान रहने वाला। मनुष्य-जन्म का उद्देश्य उस सच्चे के साथ एकरूप होना है। यह उद्देश्य सच्चे मन से उसकी आराधना करने से पूरा होता है। जो इस मानव-जीवन में सच्चे मन से उसकी आराधना करते हैं, उसकी स्तुति करते हैं, उनका यह जीवन-उद्देश्य पूरा होता है। उस बड़े का बढ़प्पन भी बड़ा है। यह भाव सतिगुरु जी प्रथम पउड़ी में उस प्रभु को संबोधित होते हुए व्यक्त करते हैं :

तू सचा साहिबु सचु है सचु सचा गोसाई ॥
तुधुनो सभ धिआइदी सभ लगै तेरी पाई ॥
तेरी सिफति सुआलिउ सरूप है जिनि कीती तिसु पारि लघाई ॥ . . .
वडे मेरे साहिबा वडी तेरी वडिआई ॥ (पन्ना ३०१)

गुरु जी परमात्मा को ऐसा राजा वर्णन करते हैं तो स्मरण करने वाले जीव का समस्त दुख गंवा देता है, परंतु शर्त यह है कि प्राणी एकमन या एकाग्र होकर स्मरण करे। प्रभु जैसा प्रभु खुद ही है, कोई उसकी बराबरी नहीं कर सकता। इस धरती अथवा सृष्टि पर उस जैसा वही है। वही दाता है। गुरु जी पुनः उस मालिक को संबोधित करते हैं :

तू आपे आपि निरंकारु है निरंजन हरि राइआ ॥
जिनी तू इक मनि सचु धिआइआ तिन का सभु दुखु गवाइआ ॥
तेरा सरीकु को नाही जिस नो लवै लाइ सुणाइआ ॥
तुधु जेवडु दाता तूहै निरंजना तूहै सचु मेरै मनि

**C/o स. बावा सिंघ, ढांगू रोड, पठानकोट, जिला गुरदासपुर। मो. : ९४६३०-०५९१२*

भाइआ ॥
सचे मेरे साहिबा सचे सचु नाइआ ॥ (पन्ना ३०१)

मनुष्य-मात्र भूलें करता है परंतु मालिक अभुल्य है। सब कुछ करने वाला वही मालिक है न कि कोई और। उसकी दया और रहमत के बिना किसी को कुछ प्राप्त नहीं होता। उसकी बख्शिश के पात्र वही बनते हैं जो उसकी रजा में रहते हैं। वह उनको दुखों से छुटकारा दिला देता है, जैसे चौथी पउड़ी में फरमान है:

तू करता आपि अभुलु है भुलण विचि नाही ॥ . . .
तू करण कारण समरथु है दूजा को नाही ॥
तू साहिबु अगमु दइआलु है सभि तुधु धिआही ॥
सभि जीअ तेरे तू सभस दा तू सभ छडाही ॥
(पन्ना ३०१-०२)

संसार में बढ़प्पन के अपने पैमाने हैं जो अध्यात्म में नहीं काम करते। गुरु साहिब के अनुसार बड़ा वही है जिसको मालिक बड़ा करता है। कोई सांसारिक बढ़प्पन वाला उसकी बराबरी नहीं कर सकता। मालिक की दृष्टि में अच्छा लगना ही अनिवार्य है न कि संसार की दृष्टि में। सतिगुरु ही उसके साथ मिलाने वाला है। पांचवी पउड़ी में गुरु जी के निर्मल वचन हैं :

जिस नो साहिबु वडा करे सोई वड जाणी ॥
जिसु साहिब भावै तिसु बखसि लए सो साहिब मनि भाणी ॥ . . .
जिस नो सतिगुरु मेले सु गुण रवै गुण आखि वखाणी ॥
नानक सचा सचु है बुझि सचि समाणी ॥
(पन्ना ३०२)

जो सच्चाई का आंचल पकड़कर चलते हैं वे हमेशा उसकी कृपा की पात्रता हासिल करते हैं। उसकी दरगाह में उनको सम्मान की प्राप्ति होती है। उसकी आराधना करने वाले धन्य कहलाते हैं :

जो तुधु सचु सलाहदे तिन जम कंकरु नेड़ि न आवै ॥
तिन के मुख दरि उजले जिन हरि हिरदै सचा भावै ॥ (पन्ना ३०२)

अपने प्रीतम प्रभु को पाने के लिए सच्चे मन से की गई सेवा व सिमरन सहाई होता है। शबद की अराधना से हम अपने मन का अहंकार दूर कर सकते हैं। उसके बढ़प्पन के गुण गायन कर सकते हैं। गउड़ी की वार में एक और प्रमाण हमारे सामने आता है कि अकाल पुरख की प्राप्ति के लिए बाणी को ही असली साधन माना गया है। जो व्यक्ति कच्ची बाणी के पीछे घूमते हैं वे हमेशा भ्रमों में रहते हैं और कूड़ियारों की जिंदगी व्यतीत करते हैं। उनके मुख में कुछ होता है और दिलों में कुछ और। ऐसे जीव माया रूपी जाल में फंसे होते हैं और मुक्ति की युक्ति नहीं पा पाते :

कूड़िआर पिछाहा सटीअनि कूड़ु हिरदै कपटु महा दुखु पावै ॥
मुह काले कूड़िआरीआ कूड़िआर कूड़ो होइ जावै ॥ (पन्ना ३०२)

प्रभु की सच्ची स्तुति में श्री गुरु रामदास जी ने उसके एक और गुण की महिमा गायन की है वह है प्रभु का दयालु स्वभाव होना। पातशाह फरमान करते हैं कि केवल प्रभु का नाम ही सच्चा है बाकी सब रिश्ते कूड़ की बुनियाद पर खड़े हैं। पारिवारिक रिश्ते तो मोह-माया का जाल हैं जो कि वक्त आने पर साथ छोड़ देते हैं। हे प्रभु! तुझे छोड़कर अन्य सहारा ढूंढने वाला सदैव कूड़ में गलतान होकर नाश हो जाता है:

जि बिनु सतिगुर सेवे आपु गणाइदे तिन अंदरि कूड़ु फिटु फिटु मुह फिके ॥ (पन्ना ३०४)

जिस हृदय में हरि का प्यार लीन होकर घर कर लेता है वह हृदय सभी रसों से भर जाता है। जो तुझे छोड़ दूसरी वस्तुओं के साथ प्यार डालते हैं वे अपने गिर्द कूड़ की चादर लिपटाए रखते हैं। कूड़ में गलतान होकर प्राणी का नाश हो जाता है :

मोहु कुटंबु दिसि आवदा सभु चलणहारा आवण जाणा ॥ (पन्ना ३०५)

बहुत ही कम लोग हैं जो सच्चे मन से उसकी आराधना करते हैं। उनकी सेवा-भक्ति के कारण ही कई जीव धरती पर खा रहे हैं और जो सेवा-भक्ति से इंकारी होते हैं वे मानो कुष्ठी का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनके बोल सुनने को तो मिठास से भरपूर लगते हैं पर उनका हृदय जहर से घुला पड़ा होता है:

जो तुधु सचु धिआइदे से विरले थोड़े ॥
जो मनि चिति इकु अराधदे तिन की बरकति खाहि असंख करोड़े ॥
तुधुनो सभ धिआइदी से थाइ पए जो साहिब लोड़े ॥
जो बिनु सतिगुर सेवे खादे पैनदे से मुए मरि जंमे कोढ़े ॥
ओइ हाजरु मिठा बोलदे बाहरि विसु कढहि मुखि घोले ॥
मनि खोटे दयि विछोड़े ॥ (पन्ना ३०६)

संतो-भक्तों के कथन सच हो जाते हैं जो भक्त-जनों के साथ विचार करते समय आलोचना वाला व्यवहार करते हैं। वे कभी भी सुख की प्राप्ति नहीं कर पाते, अहंकार उनको जला कर भस्म कर देता है। पातशाह कहते हैं कि यह सब हमारे कर्मों का ताना-बाना होता है कि हम मनमती बन जाते हैं। संत-जनों की निंदा करने वाला ठीक वैसे ही मर-खप जाता है जैसे बिना जड़ों के वृक्ष सूख जाते हैं भाव मूल से टूटकर उनका कोई ठीया-ठिकाना नहीं रह जाता:

भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे ॥
प्रगट पहारा जापदा सभि लोक सुणंदे ॥
सुखु न पाइनि मुगध नर संत नालि खहंदे ॥
ओइ लोचनि ओना गुणै नो ओइ अहंकारि सड़ंदे ॥ . . .
वैरु करहि निरवैर नालि धरम निआइ पचंदे ॥
जो जो संति सरापिआ से फिरहि भवंदे ॥
पेडु मुंढाहूं कटिआ तिसु डाल सुकंदे ॥
(पन्ना ३०६)

'गउड़ी की वार' में कई जगह गुरु साहिब ने अकाल पुरख को 'सच्चा साह' संबोधित करते हुए कहा है कि हम तो तेरे प्रेमी बनजारे हैं। हमारे ऊपर भी अपनी नदरि कर दे कि हम सच्चाई के बनज (व्यापार) से तुम्हारी आराधना कर सकें और जो ऐसा करते हैं उनकी मेहनत व्यर्थ नहीं जाती। जो जिज्ञासु सेवा-भावना से नाम रूपी शबद की अराधना करते हैं उनको ही प्रभु की पातरता हासिल होती है :

तू सचा साहिबु आपि है सचु साह हमारे ॥
सचु पूजी नामु द्रिड़ाइ प्रभ वणजारे थारे ॥
सचु सेवहि सचु वणंजि लैहि गुण कथह निरारे ॥
सेवक भाइ से जन मिले गुर सबदि सवारे ॥
तू सचा साहिबु अलखु है गुर सबदि लखारे ॥
(पन्ना ३०८)

पंचम गुरु जी माझ राग में उच्चारण की बाणी में खुद को एक बच्चे की भांति बताते कहते हैं कि नाम-रूपी वस्तु हमारे शरीर के अंदर है जिसे हम जंगल-बेलों में ढूढते रहते हैं। हम बाल-हठ की तरह उसे कभी कहीं पाना चाहते, जबकि वो तो हमारे हृदय में ही है :

सब किछु घर महि बाहरि नाही ॥
बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही ॥ (पन्ना १०२)

वार के श्लोकों और पउड़ियों से हमें पता चलता है कि गुरु जी मानवी शरीर को एक धर्मशाला बताते हैं। आपका कहना है कि हरि के नाम का स्थान व्यक्ति के मन के अंदर है। कम ही प्राणी होते हैं जो उसकी दया सदका अपने मन-मंदिर से उस हरि की प्राप्ति कर पाते हैं। आप कहते हैं कि जो हृदय हरि का निवास बन जाता है वह सभी रसों से भरपूर हो जाता है। आपने हरि के सच्चे स्वरूप को उजागर किया है। नाम-अभ्यास की महिमा का गायन करते हुए आप कहते हैं कि उसकी स्तुति बयान में नहीं आ सकती। यहां आपने गूंगे का मिठाई खाने का दृष्टांत भी दिया है। अठारहवीं पउड़ी में निर्मल वचन हैं :

हउ आखि सलाही सिफति सचु सचु सचे की वडिआई ॥
सालाही सचु सालाह सचु सचु कीमति किनै न पाई ॥
सचु सचा रसु जिनी चखिआ से त्रिपति रहे आघाई ॥
इहु हरि रसु सेई जाणदे जिउ गूंगै मिठिआई खाई ॥ *(पन्ना ३१०)*

वार में विभिन्न जगह आप ने गुरमुख और मनमुख की परिभाषा दी है। व्यक्ति का बात करने का लहजा भी गुरु साहिब ने ऐसा बताया है जैसे कि कोई मदिरा-पान करके बतिया रहा हो:

गुरमुखि गुण वेहाझीअहि मलु हउमै कढै धोइ ॥
सचु वणंजहि रंग सिउ सचु सउदा होइ ॥ *(पन्ना ३१०)*
सचु सचा जिनी न सेविआ से मनमुख मूड़ बेताले ॥
ओह आलु पतालु मुहहु बोलदे जिउ पीतै मदि मतवाले ॥ *(पन्ना ३१०)*

आप कहते हैं कि बहुत कम प्राणी नाम के अभ्यासी होते हैं, परंतु वे होते धनता के योग्य हैं। ऐसे भक्तों से हरि भी बलिहार जाता है जो निरोल सच का आंचल पकड़ कर चलते हैं। इसी प्रकार हम देखते हैं कि पूरी वार में गुरु साहिब ने कई जगह भक्तों की महिमा का गुण गायन किया है। आप कहते हैं कि जो भक्त खुद प्रभु की रजा में और दूसरों को प्रभु की रजा में रहने की ताड़ना करते हैं उनके मुख पर हमेशा नाम की लाली चढ़ी रहती है। इसके उल्ट कठोर चित्त वाले प्राणी नाम-बाणी से जुड़ नहीं पाते :

जिन अंदरि प्रीति पिरंम की जिउ बोलनि तिवै सोहंनि ॥ *(पन्ना ३०१)*
जिन गुरमुखि हरि आराधिआ तिन संत जना जैकारु ॥ *(पन्ना ३०२)*
गुरमुखि बखसि जमाईअनु मनमुखी मूलु गवाइआ ॥ *(पन्ना ३०४)*
जनु नानकु गुण बोलै करते के भगता नो सदा रखदा आइआ ॥ *(पन्ना ३०५)*
अध विचि फिरै मनमुखु वेचारा गली किउ सुखु पावै ॥
जिसु अंदरि प्रीति नही सतिगुर की सु कूड़ी आवै कूड़ी जावै ॥ *(वही)*
पासि न देई कोई बहणि जगत महि गूह पड़ि सगवी मलु लाइ मनमुखु आइआ ॥ *(पन्ना ३०६)*
गुरसिखा के मुह उजले करे हरि पिआरा गुर का जैकारु संसारि सभतु कराए ॥ *(पन्ना ३०८)*
हरि भगतां नो नित नावै दी वडिआई बखसीअनु नित चड़ै सवाई ॥
हरि भगतां नो थिरु घरी बहालिअनु अपणी पैज रखाई ॥ *(पन्ना ३१६)*

हर व्यक्ति को अपने जैसों का साथ ही अच्छा लगता है, जैसे गुरमुख को गुरमुख का

साथ भाता है और मनमुख को मनमुख की संगत ही भाती है। इस दृष्टि को दृष्टमान करता भाई गुरदास जी का बहुत ही खूबसूरत काव्य प्रसंग हमें मिलता है :

अमली रचनि अमलीआ सोफी सोफी मेलु करंदे।
जूआरी जूआरीआ वेकरमी वेकरम रचंदे।
चोरा चोरा पिरहड़ी ठग ठग मिलि देस ठगंदे।
मसकरिआ मिलि मसकरे चुगला चुगल उमाहि मिलंदे। . . .
दुखिआरे दुखिआरिआं मिलि मिलि अपणे दुख रुवंदे।
साधसंगति गुरसिखु वसंदे ॥ (वार ५:४)

श्री गुरु रामदास जी ने कहीं-कहीं बुरे अमलों के धारणी लोगों और निंदकों की तस्वीर को रूपमान किया है, लेकिन साथ ही कहते हैं कि यह सब तेरी कृपा पर निर्भर करता है। जिस पर तेरी नदरि हो वही प्रभु-बंदगी में लीन हो पाता है। उसकी रजा के बिना कोई भी प्राणी कुछ भी करने से असक्षम होता है।

अंतिम पउड़ी में हम देखते हैं कि गुरु साहिब हरि के आगे अरदास विनती करते हैं कि सारी कायनात का बरतारा तेरी कृपा का सदका है। तेरी प्रीति वही पा सकता है जिस पर तेरी नदरि हो। जिस पर तेरी कृपा हो वही प्रभु-नाम में एकाग्रता से ध्यान लगा सकता है। भक्त-जनों का कहना तेरे सिर-माथे होता है। भक्त-जनों की निंदा करने वाले मुंह की खाते हैं। भगवान भी भक्तों की प्रीति के बंधे होते हैं:

तूं सचा साहिबु अति वडा तुहि जेवडु तूं वड वडे ॥
जिसु तूं मेलहि सो तुधु मिलै तूं आपे बखसि लैहि लेखा छडे ॥
जिस नो तूं आपि मिलाइदा से सतिगुरु सेवे मनु गड गडे ॥
तूं सचा साहिबु सचु तू सभु जीउ पिंडु चंमु तेरा हडे ॥ (पन्ना ३१७)

गुरबाणी की निम्नलिखत पंक्ति हमें भक्तों की विशेषता का प्रमाण देती है :

भगता का बोलिआ परवाणु है दरगह पवै थाइ ॥
पन्ना ५२१)

मूल रूप से हम देखते हैं कि गउड़ी की वार में श्री गुरु रामदास जी ने गुरमति के अनुसार हर उस विषय पर विस्तार से बात की है जो एक गुरमुख के चरित्र के पहलू हैं। ये सारे विचार उन्होंने प्रमाणों सहित दिये हैं। साथ ही उन्होंने मनमुख के अमलों का ब्यौरा देते हुए उसके फल की बात भी हमारे सामने दृष्टांत के साथ पेश की है।

अंत में कहा जा सकता है कि अगर हम गउड़ी की वार के श्लोकों और पउड़ियों को ध्यान से पढ़ कर इनमें विद्यमान शिक्षाओं को अपने जीवन का आधार बनाते हैं तो निश्चय ही हम अपना जीवन सार्थक कर सकते हैं।

सहायक पुस्तकें :

१. दर्शन निरणै सटीक, तुलनातमक अधिऐन (पंजाबी), टीकाकार ज्ञानी हरिबंस सिंघ।
२. स्री गुरू ग्रंथ साहिब दरपण, पोथी दूसरी (पंजाबी) कृत प्रो. साहिब सिंघ डी. लिट.।

श्री गुरु रामदास जी की विचारधारा

*-डॉ. देवेंद्रपाल कौर**

श्री गुरु रामदास जी संत होने के साथ-साथ दार्शनिक भी थे। उन्होंने परंपरागत भक्ति को मानसिक भावुकता प्रदान की, इतना ही नहीं उस भावुकता को काव्य के माध्यम से सरसता भी प्रदान की, जिससे भक्त ज्ञान के साथ-साथ हृदय से भी प्रभु-महिमा से जुड़ा रहता है। डॉ. हरमहेंदर सिंघ (बेदी) ने 'गुरबाणी प्रकाश' की भूमिका में लिखा है कि "श्री गुरु रामदास जी की बाणी का सांस्कृतिक पक्ष लोक-जीवन वाला है। साहित्यिक पक्ष 'आदि ग्रंथ' की विचारधारा से जुड़ा हुआ है। गुरु जी ने संस्कृति के माध्यम से साहित्यिक बाणी का सृजन किया और साहित्यिकता की दृष्टि से 'आदि ग्रंथ' को मूलाधार बनाया।"

गुरमति के अनुसार मनुष्य चेतना के दो रूप हैं--भौतिक चेतना एवं आध्यात्मिक चेतना। भौतिक चेतना में मानव सांसारिक पदार्थों की तरफ आकर्षित होकर उनकी प्राप्ति से सुख एवं भोग-विलास में ही लीन रहता है। गुरबाणी में इस भौतिक चेतना का मूल आधार अहंकार माना गया है। गुरु जी कहते हैं कि माया में आसक्त जीव हरि के रस (आनंद) को नहीं जानते, क्योंकि उनके भीतर अहंकार एवं अहं-भाव का कांटा है। सांसारिक जीव मोह और माया के पंजे में जकड़े हुए है। उन्हें यह कांटा (अहंकार) निरंतर चुभता रहता है और वे इसी कांटे के कारण दुख पाते हैं। अंत समय में अहंकारी एवं मोह-माया में लीन लोगों को यमराज के डंडों को सिर पर सहन करना पड़ता है, जैसे:

साकत हरि रस सादु न जाणिआ तिन अंतरि हउमै कंडा हे ॥
जिउ जिउ चलहि चुभै दुखु पावहि जमकालु सहहि सिरि डंडा हे ॥ (पन्ना १३)

आध्यात्मिक चेतना को शुद्ध, विकार रहित एवं यथार्थ चेतना माना गया है, जिसका लक्ष्य परम चेतना 'परमात्मा' का गुणगान करके उसमें मिल जाना है। गुरबाणी में उत्तम मत, बुद्धि प्रगास, विवेक बुद्धि 'मत प्रगास' और सुमति आदि विशेषण का प्रयोग किया गया है, जैसे:

मति प्रगास भई हरि धिआइआ गिआनि तति लिव लाइ ॥
अंतरि जोति प्रगटी मनु मानिआ हरि सहजि समाधि लगाइ ॥ (पन्ना ११९९)

गुरु जी कहते हैं कि गुरबाणी ही गुरु है और गुरु ही गुरबाणी है, जिसमें अमृत-रस भरा हुआ है। यदि गुरु की कही बाणी को प्रत्यक्ष में जीव स्वीकार कर ले तो परोक्ष में अनेक गुरबाणी की अराधना करने वालों की पूजा के कारण जीवों का कलियुग में उद्धार होता है, जैसे:

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥
गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे ॥ (पन्ना ९८२)

उस परमात्मा के प्रति श्रद्धा, आत्मसमर्पण, पूर्ण आस्था और दृढ़ विश्वास ही आध्यात्मिक शक्ति मूलक भक्ति का मूल आधार है। यदि गहनता से देखा जाए तो श्रद्धा और समर्पण के

**१०५-सी, प्रोफेसर कालोनी, सामने पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो : ९४६३६-१८९११*

बिना भक्ति अधूरी है तथा आस्था और विश्वास के बिना यह शक्तिहीन भी है। सच्ची शक्ति मानव को विकारों से दूर करके निरंकार से जोड़ती है, यथा :

जिन सरधा राम नामि लगी तिन्ह दूजै चितु न लाइआ राम ॥
जे धरती सभ कंचनु करि दीजै बिनु नावै अवरु न भाइआ राम ॥ (पन्ना ४४४)

मानव की भौतिक चेतना अहं-मूलक है, जबकि आध्यात्मिक चेतना को निरंकार-मूलक कहा जा सकता है अर्थात् भक्ति से प्राप्त की गई आध्यात्मिक शक्ति ही सच्चे अर्थों में लोक-कल्याणकारी होती है। गुरमति में भौतिक चेतना को अंधी सुरति और दूसरी को शोभा सुरति कहा गया है।

श्री गुरु रामदास जी कहते हैं कि मनुष्य शरीर वो खूबसूरत शहर है जिसमें बैठकर हरि-रस या सच्चे अमृत का व्यापार किया जा सकता है :

काइआ नगरु नगरु है नीको विचि सउदा हरि रसु कीजै ॥ (पन्ना १३२३)

जब शरीर के नौ द्वार बंद करके दसवें द्वार में दाखिल हो जाते हैं तो इंद्रियों के भोग फीके लगने लगते हैं और अंदर ऐसे आनंददायक अमृत की प्राप्ति हो जाती है जिसको पाकर मन और आत्मा सदा के लिये शांत हो जाते हैं :

नउ दरवाज नवे दर फीके रसु अंम्रितु दसवे चुईजै ॥ (पन्ना १३२३)

गुरु जी की बाणी के अनुसार भौतिकवादी व्यक्ति के दुख का कारण अहंकार है, परंतु जब उस परमात्मा का सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है तब इस दुख से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। इस अवस्था को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कई स्थानों पर 'घर मंदिर', 'तिल घर' या केवल 'घर' कह कर भी इसका वर्णन किया गया है :

मनु खिनु खिनु भरमि भरमि बहु धावै तिलु घरि नही वासा पाईऐ ॥
गुरि अंकसु सबदु दारू सिरि धारिओ घरि मंदरि आणि वसाईऐ ॥ (पन्ना ११७९)

प्रभु-भक्ति की जो रीति श्री गुरु नानक देव जी ने प्रचलित की थी श्री गुरु रामदास जी ने अपनी बाणी के माध्यम से उसे मानसिक भावुकता प्रदान की है। वे कहते हैं कि परमात्मा घट-घट का निवासी है। उसे अपने ही मन में अनुभव किया जा सकता है। सतसंगति से मन की कुबुद्धि रूपी मैल समाप्त होती है। सतिगुरु के दर्शन से पल भर में ही जन्म-जन्म के पाप कट जाते हैं। गुरु जी की बाणी में उदारता के भाव दिखलाई देते हैं। उनकी बाणी ज्ञानी एवं महान विचारक की बाणी है। आपने बाणी के माध्यम से दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विचारों तथा भावों को सफलतापूर्वक व्यक्त किया है।

कविता

सुहानी भोर की आशा

हम आदमी हैं कंकाल सदृश
आम आदमी हम
हमारी भावनाएं, हमारी चेतना,
हमारा मन सरापा
कैद है किसी घुप अंधेरी रात के
भयावह काले सन्नाटे में
हम, केवल हम ही तोड़ सकते हैं
इस घटाटोप की दुर्भेद्य दीवारों को
हां, हमें ही तोड़नी होगी यह खामोशी
तभी सिर्फ, तभी उदित होगा
एक सुहानी भोर का सुखमय अहसास
विकरित करता हुआ कोई दैदीप्यमान सूरज।

-श्री हेमंत गुप्ता 'पंकज', KRW-२३, जलदाय विभाग कॉलोनी, प्रताप नगर, दादबाड़ी, कोटा (राजस्थान)-३२४००९

श्री गुरु रामदास जी से संबंधित ऐतिहासिक स्थान

-बीबा मनमोहन कौर*

श्री अमृतसर साहिब

गुरुद्वारा साहिब दुख भंजनी बेरी : गुरुद्वारा साहिब दुख भंजनी बेरी श्री हरिमंदर साहिब की पूर्व दिशा में पवित्र सरोवर के किनारे सुशोभित है। ऐतिहासिक स्रोत के अनुसार इस बेरी से पट्टी के शाहूकार दुनी चंद की सबसे छोटी लड़की रजनी की साखी जुड़ी हुई है जिसका विवाह उसके पिता ने कोहड़ी पति से कर दिया था। बीबी रजनी के गुरु-घर पर अटूट विश्वास के कारण उसका पति श्री हरिमंदर साहिब के सरोवर में स्नान करने के पश्चात् आरोग्य हो गया। यह बेरी प्राचीन समय से ही यहां स्थित है। कहा जाता है कि जब श्री गुरु रामदास जी को इस घटना का पता चला तो उन्होंने इसी स्थान पर पक्का स्नान-घर बना कर इस बेरी का नाम दुख भंजनी बेरी रख दिया। आज भी लोगों में यह विश्वास है कि इस सरोवर में स्नान करने से सभी शारीरिक रोग दूर होते हैं। श्री गुरु रामदास जी ने १५७७ ई में इस सरोवर की खुदाई आरंभ करवाई थी। इस बेरी के नजदीक ही गुरुद्वारा साहिब दुख भंजनी बेरी सुशोभित है। यहां लगातार बाणी का प्रवाह चलता है। दुख भंजनी बेरी वाली चौखट के ऊपर भाई जस्सा सिंघ ग्रंथी और भाई भाग सिंघ ने एक बुंगे का निर्माण करवाया था, जिस पर बाद में महाराजा रणजीत सिंघ ने भी सेवा करवाई थी। अब यह बुंगा अपने स्वरूप में नहीं है और बुंगे वाली जगह परिक्रमा में आ गई है। दुख भंजनी बेरी गुरुद्वारा साहिब के बिलकुल पास ही अठसठ तीर्थ स्थान भी सुशोभित है। स्रोत बताते हैं कि यहां बैठ कर श्री गुरु अरजन देव जी सरोवर को पक्के करने और श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण की सेवा की निगरानी किया करते थे।

गुरुद्वारा गुरु के महिल : गुरुद्वारा गुरु के महिल, श्री अमृतसर में उस स्थान पर सुशोभित है जहां श्री गुरु रामदास जी रहा करते थे। गुरुद्वारा गुरु का महिल चौक पासीयां में है जो श्री हरिमंदर साहिब से कुछ दूरी पर गुरु बाजार में स्थित है। वास्तव में यहां एक छोटी-सी बांस की छपरी श्री गुरु रामदास जी ने १५७३ ई में बनाई थी जिसको बाद में श्री गुरु अरजन देव जी और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने विशाल और खूबसूरत इमारत में तबदील कर दिया। इसी इमारत वाली जगह पर अब गुरुद्वारा गुरु के महिल सुशोभित है। इसके एक बड़े हाल में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश किया जाता है। इसी स्थान पर श्री गुरु तेग बहादर साहिब का जन्म हुआ था, इसलिए उनका प्रकाश दिवस इस स्थान पर विशेष तौर पर 'सालाना जोड़ मेले' के रूप में मनाया जाता है। इस गुरुद्वारा साहिब को आजकल श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी के जन्म-स्थान के नाम से ही जाना जाता है। इसी ऐतिहासिक स्थान पर ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का विवाह और उनके पांच सपुत्र तथा एक सपुत्री का जन्म हुआ था। आजकल कार सेवा वाले बाबा लाभ सिंघ ने इस स्थान पर आलीशान इमारत का

*८३६३, गली नं: २, गुरु रामदास नगर, सुलतानविंड रोड, श्री अमृतसर।

निर्माण करवा दिया है। गुरुद्वारा साहिब के गुंबद पर लगे सोने के कलश दूर से ही नज़र आ जाते हैं।

गुरुद्वारा रामसर साहिब : गुरुद्वारा रामसर साहिब श्री अमृतसर में स्थित चाटीविंड चौक के नजदीक गुरुद्वारा बाबा दीप सिंघ जी शहीद के निकट रामसर सरोवर के किनारे सुशोभित है। श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण के पश्चात् श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की संपादना का कार्य इसी स्थान पर किया था और इस स्थान की सुंदरता को बढ़ाने के लिए यहां १६०२ ई में एक सरोवर की खुदाई करवाई जिसका नाम श्री गुरु रामदास जी के नाम पर 'रामसर' रखा। सरोवर के किनारे बने गुरुद्वारा साहिब का नाम भी सरोवर के नाम पर 'गुरुद्वारा रामसर साहिब' रख दिया गया। पहले इस स्थान पर बेरी, बरगद, पीपल, शीशम और आम के पांच वृक्ष हुआ करते थे। यहीं बेरी के वृक्ष के नीचे बैठ कर ही श्री गुरु अरजन देव जी ने गुरुद्वारा मंजी साहिब वाले स्थान पर सुखमनी साहिब बाणी का उच्चारण किया था। कार सेवा वाले बाबा खड़क सिंघ ने इस स्थान पर छ:-मंजिला सुंदर इमारत का निर्माण करवा दिया जिसे आजकल 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब भवन' के नाम से भी जाना जाता है। इसकी बेसमैंट में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा चालित गोल्डन आफसेट प्रेस स्थित है।

गुरुद्वारा टाहली साहिब (संतोखसर) : गुरुद्वारा टाहली साहिब (संतोखसर) श्री हरिमंदर साहिब के नजदीक कोतवाली के सम्मुख सुशोभित है। इस स्थान पर श्री गुरु रामदास जी ने सरोवर की खुदाई आरंभ करवाई थी जिसको बाद में श्री गुरु अरजन देव जी ने सम्पूर्ण करवाया था। इस सरोवर की खुदाई श्री गुरु रामदास जी ने श्री हरिमंदर साहिब के सरोवर से पहले संवत् १५७० में करवाई थी। इस पवित्र स्थान पर एक प्राचीन टाहली (शीशम) का वृक्ष है, जिसकी छाया में बैठ कर श्री गुरु रामदास जी, श्री गुरु अरजन देव जी और बाबा बुड्ढा जी सरोवर की कार-सेवा की निगरानी किया करते थे। बाबा जीवन सिंघ, बाबा हरी सिंघ और बाबा जगतार सिंघ कार-सेवा वालों ने गुरुद्वारा साहिब की सुंदर इमारत का निर्माण करवा दिया है।

गोइंदवाल साहिब : गोइंदवाल नगर, श्री गुरु अमरदास जी ने गोइंदा नाम के सिक्ख की ज़मीन पर बसाया था। आजकल यह नगर जिला तरनतारन की तहसील खडूर साहिब में तरनतारन से ४० किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। गोइंदवाल साहिब में रेलवे स्टेशन भी है। इस नगर में श्री गुरु रामदास जी के अलावा श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु अरजन देव जी, श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी और श्री गुरु हरिराय साहिब जी ने भी अपने मुबारक चरण परसे हैं। यहां श्री गुरु रामदास जी से सम्बंधित निम्नलिखित गुरुद्वारा साहिबान सुशोभित हैं:

गुरगद्दी-स्थान श्री गुरु रामदास जी : गुरगद्दी-स्थान श्री गुरु रामदास जी उस स्थान पर सुशोभित है जहां श्री गुरु रामदास जी को श्री गुरु अमरदास जी ने गुरगद्दी की बख्शिश की थी। यहां सुसज्जित एक बहुत ही सुंदर प्राचीन तस्वीर में गुरगद्दी के समय की सुंदर झलक नजर पड़ती है, जिसमें भाई गुरदास जी, श्री गुरु रामदास जी, बाबा बुड्ढा जी के दर्शनों के अलावा बाबा मोहरी जी, बाबा मोहन जी और अन्य २२ मंजियों की बख्शिश प्राप्त करने वाले सभी सिक्ख नजर आते हैं।

ज्योति-जोत स्थान श्री गुरु रामदास जी : गोइंदवाल साहिब में श्री गुरु रामदास जी के गुरगद्दी पर विराजमान होने के स्थान के पास ही छोटा-सा संगमरमर का वो स्थान सुशोभित

है जहां श्री गुरु रामदास जी ज्योति-जोत समाए थे। श्री गुरु रामदास जी के ज्योति-जोत समाने से करीब सात साल पहले इसी स्थान पर ही तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी ज्योति-जोत समाए थे। इस स्थान को 'कोठड़ी साहिब' भी कहा जाता है।

कुआं श्री गुरु रामदास जी : गुरुद्वारा चुबारा साहिब के नजदीक श्री गुरु रामदास जी द्वारा खुदवाया गया कुआं आज भी मौजूद है। ऐतिहासिक स्रोत बताते हैं कि इसी स्थान पर भाई गुरदास जी भी ज्योति-जोत समाए थे और उनका ज्योति-जोत स्थान भी इसी कुएं के पास सुशोभित गुरुद्वारा साहिब के स्वरूप में विद्यमान है।

पाकिस्तान

पाकिस्तान १९४७ ई: से पहले भारत का ही एक अभिन्न हिस्सा था। पाकिस्तान के राज्य पश्चिम पंजाब की राजधानी लाहौर का सिक्ख इतिहास से गहरा संबंध है। लाहौर में श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी, श्री गुरु अरजन देव जी, श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी तथा अन्य अनेकों सिक्ख शहीदों के पवित्र स्थान मौजूद हैं। इनमें से श्री गुरु अमरदास जी से संबंधित स्थान इस प्रकार हैं:

गुरुद्वारा जन्म-स्थान गुरु रामदास जी, चूना मंडी, लाहौर: लाहौर के बाजार चूना मंडी में जहां श्री गुरु रामदास जी का जन्म हुआ था, उस स्थान पर गुरु जी की याद में गुरुद्वारा जन्म-स्थान सुशोभित है। श्री गुरु रामदास जी ने अपने बचपन के ७ साल यहीं गुजारे थे। पुरानी इमारत बहुत ही छोटी थी। जब महाराजा रणजीत सिंघ की महारानी नकीईन के घर खड़क सिंघ का जन्म हुआ तो उसने इस खुशी में वाहिगुरु का शुक्राना अदा करते हुए गुरुद्वारा साहिब की नई इमारत का निर्माण करवाया था। जनाब इकबाल केसर के अनुसार नई इमारत का नक्शा श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर से मिलता-जुलता है। इस गुरु-स्थान के नाम आठ दुकानें हैं। पहले इस स्थान का प्रबंध शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी करती थी अब इसका प्रबंध महिकमा औकाफ बोर्ड पाकिस्तान के पास है। इस स्थान की नवीन इमारत को कार सेवा के द्वारा सन् २००६ में बनाया गया।

कविता

आत्म-दर्शन

सतसंग सरोवर नहाया, न मन-कल्मष धुल पाया।
न मिल सतसंगत गुण गाया, न परमार्थ ध्यान लगाया।
स्वार्थ कीच-बीच फंसा ऐसा, न कभी पुष्प-पंकज बन पाया।
माया में रमा मन ऐसा, न कभी बांट कर खाया।
पाप-पंक-पयोनिधि में, अहं की नाव खेता आया।
भटका सदा कामना-कुंज में, न कभी किसी के काम आया।
काम कालिमा ने किया करूप, विष वमन ही करता आया।
माया-मोह के भ्रम-जाल से, न कभी विमुक्त हो पाया।
अपना नहीं सब कुछ उसका, न समझ मन चंचल पाया।
भूली आत्मा परमात्मा को, बिरथा मानव जीवन गंवाया।
हे करुणा निधान, सुजान, मद-मोह दोष-विकार हरो!
दे सुबुद्धि, शीश आशीष धर, करुणाकर प्रभु, कृतार्थ करो!

-श्री रामभवन सिंह ठाकुर, विद्यावाचस्पति, 'रामाश्रम', महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१

भाई गुरदास जी की दृष्टि में श्री गुरु अमरदास जी

*-प्रो बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा**

गुरबाणी तत्व-बोध के शिरोमणि व्याख्याकार भाई गुरदास जी ने अपनी वारों तथा कबित्त सवैयों के माध्यम से गुरमति सिद्धांतों, दर्शन, इतिहास एवं मर्यादा की व्याख्या की है। भाई गुरदास जी की वारों में सिक्ख गुरु साहिबान के व्यक्तित्व का चित्रण किया गया है। इस आलेख द्वारा सर्वप्रथम भाई गुरदास जी ने तीसरे सतिगुरु श्री गुरु अमरदास जी के सम्बंध में जो काव्यमुखी उल्लेख किया है उसके बारे में समझना है। जब भाई गुरदास जी द्वारा रचित ४० वारों का अध्ययन किया जाता है तो उनकी पहली वार की ४६वीं पउड़ी, तीसरी वार की १२वीं पउड़ी, १३वीं वार की २५वीं पउड़ी, २०वीं वार की पहली पउड़ी, १४वीं वार की ९वीं पउड़ी, १०वीं, ११वीं, १२वीं, १३वीं वारों की १०वीं पउड़ी और ३९वीं वार की दूसरी पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी के बारे में वर्णन हुआ है।

भाई गुरदास जी द्वारा श्री गुरु अमरदास जी के बारे में हुए समूचे वर्णन में जो पक्ष उभर कर सामने आते हैं उनका मुख्य विभाजन करते हुए निम्नखित विचार-विमर्श किया जा रहा है :

गुरु तथा सिक्ख (शिष्य) परंपरा : 'गुरु' ज्ञान का प्रकाश देकर अज्ञानता के अंधकार का नाश करता है। शबद के द्वारा ज्ञान का प्रकाश देने वाला सही अर्थों में धन्य कहलाने का पात्र होता है। दूसरी ओर गुरु-शबद को अंतर-आत्मा में प्राप्त करने वाले सिक्ख भी धन्य होते हैं। इसी लिए गुरु-शिष्य की परंपरा का महत्व माना जाता है। गुरु नानक साहिब जगत-गुरु हुए हैं, शेष सब उनके सिक्ख, शिष्य, अनुयाई कहलाते हैं। गुरु अंगद साहिब, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी और गुरु अरजन साहिब तथा अन्य सभी गुरु साहिबान गुरु नानक पातशाह के शिष्य भाव सिक्ख हुए हैं। भाई गुरदास जी के अनुसार यह गुरु नानक पातशाह की महानता है कि आपने संसार में पांव पड़ने अर्थात् गुरु-शिष्य का मार्ग चला दिया अर्थात् पहले गुरु अंगद साहिब भाई लहिणा जी के रूप में गुरु नानक पातशाह के चरणों से लगे, फिर गुरु नानक साहिब से गुरु अंगद साहिब और फिर श्री गुरु अमरदास जी के द्वारा सच्चा हुक्म बरताया गया :

गुर चेला चेला गुरू पुरखहु पुरख उपाइ समाइआ।
वरतमान वीहि विसवे होइ इकीह सहजि घरि आइआ।
सचा अमरु अमरि वरताइआ ॥ (वार २४:९)

भाई गुरदास जी के अनुसार गुरु तथा सिक्ख की अभेदता इस प्रकार होती है जैसे तने से पौधा, दूध, दही से माखन, ईख से शक्कर, चीनी, मिश्री आदि इकट्ठे एक जगह, एक रस समाये हुए होते हैं। २५वीं वार की १०वीं पउड़ी में इस अभेदता को इस प्रकार बयान किया गया है :

सबदु सुरति परचाइ कै चेले ते गुरु गुरु ते चेला।
वाणा ताणा आखीऐ सूतु इकु हुइ कपड़ु मेला।
दुधहु दही वखाणीऐ दहीअहु मखणु काजु सुहेला।
मिसरी खंडु वखाणीऐ जाणु कमादहु रेला पेला।
खीरि खंडु घिउ मेलि करि अति विसमादु साध

*उप सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर। मो : ९८१४८-९८२१२

रस केला।
पान सुपारी कथु मिलि चूने रंगु सुरंग सुहेला।
पोता परवाणीकु नवेला ॥ *(वार २४:१०)*

भाई गुरदास जी के अनुसार भी गुरिआई टिका, छत्र तथा सच्चे तख्त की अलाही दात है। यह बख्शिश गुरु नानक साहिब से गुरु अंगद साहिब तथा फिर गुरु अंगद साहिब से श्री अमरदास जी को प्राप्त हुई। श्री गुरु अमरदास जी ज्योति रूप होकर अमर स्वरूप गुरु बन गए:

लहणे पाई नानको देणी अमरदासि घरि आई।
गुरु बैठा अमरु सरूप होइ गुरमुखि पाई दादि इलाही। *(वार १:४६)*

गोइंदवाल बसाना : जैसे-जैसे सिक्ख धर्म का प्रचार तथा प्रसार हुआ वैसे-वैसे नये-नये केंद्र भी बने। गुरु नानक साहिब ने करतारपुर नगर बसाया। गुरु अंगद साहिब ने खडूर साहिब विकसित किया। तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी ने गोइंदवाल सिक्खी का नया केंद्र बनाया जिसको बाद में 'सिक्खी का धुरा' भी माना गया। भाई गुरदास जी ने गोइंदवाल बसाने का वर्णन किया है :

फेरि वसाइआ गोइंदवालु अचरजु खेलु न लखिआ जाई। *(वार १:४६)*

मर्यादा की स्थापना : सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरु नानक साहिब ने सिक्ख धर्म की स्थापना करते हुए इस धर्म की विचारधारा, इसके सिद्धांत और इसकी मर्यादा बनाई। सिक्ख रीति-रिवाजों की मर्यादा स्थापित करने के लिए गुरु साहिबान सदैव प्रयासरत रहे इसलिए कि एक विलक्षणता तथा निरालापन लाया जा सके। गुरु साहिब ने संसार में पांव पड़ने भाव गुरु-शिष्य की मर्यादा को बांधा। इससे आगे श्री गुरु अमरदास जी ने भी इस रीति को जारी रखा:

रहरासी रहरासि है पैरी पै जगु पैरी पाइआ। *(वार २४:९)*

नाम-दान तथा स्नान की मर्यादा को गुरु नानक साहिब ने स्थापित किया। श्री गुरु अमरदास जी ने इस मर्यादा को संसार के लोगों में दृढ़ कराया और संसार का कल्याण किया:

नामु दानु इसनानु दिड़ु गुरु सिख दे सैंसारु तराइआ। *(वार २४:१३)*

गुरु नानक साहिब के बाद संसार में प्रभु द्वारा प्रज्वलित 'नानक' की दैवी ज्योति की स्थाप्ति और उसका प्रकाश बहुत महत्वपूर्ण था। गुरु-परिवारों के प्रति विरोध करने वाले लोगों के लिए भी इसकी आवश्यकता थी इसलिए भाई गुरदास जी ने श्री गुरु अमरदास जी की 'नानक ज्योति' की अभेदता को अपनी वारों में वर्णन किया है। भाई गुरदास जी के अनुसार ज्योति की दात और इस दात की महानता का मालिक परमात्मा स्वयं ही है :

दाति जोति खसमै वडिआई ॥ *(वार १:४६)*

गुरु नानक साहिब प्रभु का रूप थे। यह पवित्र आकृति परमात्मा ने ही बनाई। सतिगुरु नानक पातशाह जी के अंग से गंगा-तरंग की भांति गुरु अंगद साहिब प्रकट हुए। गुरु अंगद पातशाह की ज्योति से श्री गुरु अमरदास जी की ज्योति प्रज्वलित हुई :

--निरंकारु नानक देउ निरंकारि आकार बणाइआ।
गुरु अंगदु गुरु अंग ते गंगहु जाणु तरंग उठाइआ।
अमरदासु गुरु अंगदहु जोति सरूप चलतु वरताइआ।
(वार २४:२५)

--सतिगुरु नानक देउ है परमेसरु सोई।
गुरु अंगदु गुरु अंग ते जोती जोति समोई।
अमरा पदु गुरु अंगदहुं हुइ जाणु जणोई।
(वार ३८:२०)

गुरसिक्ख स्वरूप : गुरबाणी में गुरमुख या गुरसिक्ख को उत्तम माना गया है। भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में गुरसिक्खों को सर्वश्रेष्ठ माना है। आप जी ने सिक्ख की महिमा का वर्णन अत्यधिक विस्तार के साथ किया है। अकाल पुरख का स्वरूप सतिगुरु होता

है। जो सिक्ख सतिगुरु के हुक्म में चलता है वह सिक्ख गुरु का रूप हो जाता है :

गुरु सिख सुणि गुरु सिख होइ मुरदा होइ मुरीद सु कोई। (वार ४०:१२)

(गुरु) अमरदास जी ऐसे गुरसिक्ख (श्रेष्ठ पुरुष) हुए हैं जिनकी सेवा श्री गुरु अंगद देव जी को स्वीकृत हुई :

गुरसिखु है गुर अमरु सतिगुर भाइआ। (वार २०:१)

गुरु-महिमा : भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में श्री गुरु अमरदास जी की महिमा का गुण-गायन किया है, सतिगरु के बढ़प्पन को उभारा है और उनके प्रताप की सराहना की है। पातशाह की महिमा का गुण-गायन करते हुए कहा गया है कि जैसे तिलों और फूलों का संयोजन करके अमूल्य सुगंधि वाली अतर-फलेल बन जाती है इसी प्रकार सिक्ख श्री गुरु अमरदास जी के साथ मिलकर सुगंधि वाले हो जाते हैं। गुरु के शबद को सुनना, पढ़ना या गायन करना ही गुरु के प्रत्यक्ष दर्शन हैं। इसलिए शबद (बाणी) का उच्चारण करने वाले श्री गुरु अमरदास जी की महानता है कि वे दुनिया की साहिबी को कूड़ समझते हैं तथा सत्य का गौरव हैं एवं सत्य की मस्ती में ही सदैव मस्त रहते हैं। श्री गुरु अमरदास जी की महिमा को सुनकर और देखकर देवी-देवता-जन ऐसे भाग पड़े जैसे शेर/बघेले की आवाज (गर्जना) सुनकर मृगों की टोलियां भाग उठती हैं और वे (सिक्ख) सतिगुरु के प्रेम की नकेल के पीछे-पीछे चले जाते हैं। ऐसे ही सुखों के स्वरूप श्री गुरु अमरदास जी हैं :

सतिगुर होआ सतिगुरहु अचरजु अमर अमरि वरताइआ।
सो टिका सो बैहणा सोई सचा हुकमु चलाइआ।
खोलि खजाना सबदु दा साधसंगति सचु मेलि मिलाइआ।
गुर चेला परवाणु करि चारि वरन लै पैरी पाइआ।
गुरमुखि इकु धिआईऐ दुरमति दूजा भाउ मिटाइआ।
कुला धरम गुरसिख सभ माइआ विचि उदासु रहाइआ।
पूरे पूरा थाटु बणाइआ ॥ (वार २४:१२)

श्री गुरु अमरदास जी की महानता का आगे और वर्णन करते हुए बयान किया गया है कि श्री गुरु अमरदास जी ने भलाई करके अच्छा काम किया है और पूर्बले मार्ग को आगे चलाया है। पातशाह जी ने अगम, अगोचर एवं अगाध गति वाले निरंकार के बारे में **'शबद'** में सुरति लगवा कर अपने सिक्खों को अनुभव करा दिया है। इस कारण सतिगुर अमरदास जी की महिमा परे से परे है, उसका पारावार नहीं। यह भी सतिगुरु जी का बढ़प्पन है कि उन्होंने सर्वसक्षम होते हुए भी अपना आपा (स्वयं) किसी को जनाया नहीं:

भला भला भलिआईअहु पिउ दादे का राहु चलाइआ।
अगम अगोचर गहण गति सबद सुरति लिव अलखु लखाइआ।
अपरंपर आगाधि बोधि परमिति पारावार न पाइआ।
आपे आपि न आपु जणाइआ ॥ (२४-१३)

उपर्युक्त विचार-चर्चा का तत्व-सार यह है कि भाई गुरदास जी ने श्री गुरु अमरदास जी की महिमा का गुण-गायन करते हुए उनको प्रभु में अभेद कहा है और 'नानक ज्योति' की एकरूपता को बयान किया है। सतिगुरु जी ने जहां गोइंदवाल नामक नये तीर्थ-स्थान को बनाया वहां संगत में मजहब, जाति आदि के भेदभाव मिटाकर उनको गुर-शबद के साथ जोड़ा और गुरसिक्खी मार्ग की सोझी बख्शिश की, अत: सतिगुरु की उपमा को बयान नहीं किया जा सकता।

अंतरि पिआस हरि नाम की . . .

-डॉ. मधु बाला*

सिक्ख धर्म के चौथे गुरु, पवित्र नगरी अमृतसर का निर्माण करने वाले, बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी, चरित्र-निर्माता, श्री गुरु रामदास जी का जन्म २४ सितंबर, सन् १५३४ को हुआ। आप जी के पिता का नाम बाबा हरीदास और माता का नाम दया कौर था। मात्र सात वर्ष की आयु में ही माता-पिता का साया सिर से उठ गया और तब आप अपनी नानी के पास बासरके आ गए। सन् १५५३ में आपकी सतोगुणी वृत्ति को देखकर श्री गुरु अमरदास जी ने अपनी छोटी सपुत्री बीबी भानी का विवाह आपके साथ कर दिया। आपके घर प्रिथीचंद, बाबा महादेव और (गुरु) अरजन देव जी ने जन्म लिया। सन् १५७४ में आप गुरगद्दी पर विराजमान हुए और १५८१ ई. में ज्योति-जोत समा गए।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जैजावंती राग को छोड़कर बाकी सभी तीस रागों में आपकी बाणी मिलती है। आपके द्वारा रचित श्लोकों की संख्या ६४० है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की २२ वारों में से आठ वारें श्री गुरु रामदास जी की हैं। इनकी बाणी की सबसे बड़ी विशेषता है 'वार' का संकल्प-परिवर्तन। इनकी वारों में वीर-रस की प्रधानता न होकर शांत-रस और भक्ति-रस की बहुलता है। इस विशेषता के कारण बाणी में गंभीरता और रहस्यमयता का संचार हुआ है। परमात्मा के प्रति प्रेम, उसके विरह में मन की व्याकुलता ने आत्मा-परामत्मा का शाश्वत सम्बंध स्थापित किया है।

सिरीरागु के आधार पर आपकी बाणी "सिरीरागु महला ४ घरु १" में व्याप्त विरह-भावना को प्रस्तुत करने का लघु प्रयास है:

मै मनि तनि बिरहु अति अगला किउ प्रीतमु मिलै घरि आइ ॥ *(पन्ना ४०)*

हे प्रियतम! मेरा मन-तन विरह के ताप से जल रहा है। हे प्रियतम! कब आकर मुझसे मिलेंगे? प्रभु के मिलने से ही मेरे मन का दुख मिटेगा।

जाइ पुछा तिन सजणा प्रभु कितु बिधि मिलै मिलाइ ॥
मेरे सतिगुरा मै तुझ बिनु अवरु न कोइ ॥ *(पन्ना ४०)*

मुझे उन साधु-जनों, सज्जनों, सतिगुरुओं से पूछना होगा कि परमात्मा को किस विधि से प्राप्त किया जा सकता है। हे मेरे सतिगुरु! तुम्हारे सिवाय मेरा और कोई नहीं है।

अंतरि पिआस हरि नाम की गुरु तुसि मिलावै सोइ ॥ *(पन्ना ४०)*

हे सतिगुरु! मेरा मन हरि-नाम का प्यासा है। यह एक ऐसी प्यास है जो अंतर में उठती है। हृदय की प्यास को जल से शांत नहीं किया जा सकता, उसके लिए गुरु की आवश्यकता होती है। गुरु ही वह मार्ग है जो परमात्मा तक पहुंच सकता है।

अंतरि अगिआन दुखु भरमु है विचि पड़दा दूरि पईआसि ॥ *(पन्ना ४०)*

सतिगुरु के अभाव में लाखों-करोड़ों प्रयास निष्फल हैं, परमात्मा की प्राप्ति असंभव है।

*आई-१०९, गली नं: ५, मजीठीआ इन्कलेव, पटियाला-१४७००५, फोन ०१७५-३२००९४६

अत्यंत समीपता होते हुए भी परमात्मा के दर्शन नहीं होते। इसका मुख्य कारण है जीव और आत्मा के मध्य स्थापित माया अथवा अज्ञान का आवरण। सभी जानते हैं कि संसार माया से विमोहित है, अज्ञान के अंधकार से ढका हुआ है। माया किसे कहते हैं? अज्ञान का कारण क्या है? इन्होंने मनुष्य और परमात्मा के बीच कौन-सा परदा बनाया हुआ है? यह सब कौन स्पष्ट करेगा? 'सतिगुरु'। माया है--संसार, संसार के विषय-विकार; सम्बंध, तेरा-मेरा, मोह, ऐश्वर्य आदि। अज्ञान है जीव और पारस में भेद समझना, परमात्मा और आत्मा को अलग-अलग मानना, परमात्मा की सत्ता पर संदेह करना। यही आवरण जीवात्मा को परमात्मा से दूर करता है। सतिगुरु की कृपा से जब यह भ्रम दूर हो जाता है तब साधक परमात्मा को जान लेता है।

हउ पंथु दसाई नित खड़ी कोई प्रभु दसे तिनि जाउ ॥
जिनी मेरा पिआरा राविआ तिन पीछै लागि फिराउ ॥ (पन्ना ४१)

आत्मा को पत्नी और प्रभु को स्वामी, पति मानते हुए कहते हैं कि मैं नित्य ही प्रार्थना करती हूं कि कोई मुझे प्रभु को पाने की राह बता दे ताकि मैं भी उनके समीप जा सकूं। जिन्होंने उस प्रभु को पा लिया है मैं उनके पीछे-पीछे घूमती हूं, उनका अनुकरण करती हूं, उनकी सेवा करती हूं तथा मिन्नत भी करती हूं, क्योंकि मुझे प्रियतम के दर्शन का चाव है तथा वही जीवात्माएं मुझे उनसे मिला सकती हैं जो मुक्त हैं।

बिनु भागा दरसनु ना थीऐ भागहीण बहि रोइ ॥ (पन्ना ४१)

परमात्मा के दर्शन के लिए लगन, विरह, तड़प, प्यास के अतिरिक्त एक और भी महत्वपूर्ण तथ्य है 'भाग्य'। यदि सब कुछ होने पर भी परमात्मा नहीं मिलता तो इसमें भाग्य का ही दोष हो सकता है। पूर्व जन्मों के भले-बुरे संस्कार भी मनुष्य के वर्तमान को प्रभावित करते हैं। भाग्यहीन व्यक्ति के पास रोने के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं है।

जाइ पुछहु सोहागणी तुसा किउ करि मिलिआ प्रभु आइ ॥ (पन्ना ४१)

जिसने अमृत रूपी रस का पान किया है वही जान सकता है कि उसका स्वाद कितना मधुर, श्रेष्ठ, अद्‌भुत और विस्मयकारी है। इस रस का पान करने के लिए उसी के पास जाना होगा जिनको इस रस की प्राप्ति का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अतः गुरु जी कहते हैं कि उन सुहागिनों से जाकर ही पूछूंगी कि उन्होंने प्रियतम रूपी परमात्मा को कैसे प्राप्त किया।

भाई रे मै मीतु सखा प्रभु सोइ ॥
पुतु कलतु मोहु बिखु है अंति बेली कोइ न होइ ॥ (पन्ना ४१)

हे भाइयो! मेरा मित्र, सखा सभी कुछ वह परमात्मा ही है। पुत्र, पत्नी का मोह विष के समान है, अंत में कोई भी साथ नहीं देता, इसलिए हमें सच्चे मित्र से ही संगत करनी चाहिए। सच्चा मित्र ही हमारा हर स्थिति में साथ देता है, मुसीबत के समय हमें अकेला नहीं छोड़ता। संसार की प्रत्येक वस्तु चलायमान है, नश्वर है, परिवर्तनशील है, परंतु एक परमात्मा है जो स्थिर है, शाश्वत है और तीनों कालों में जिसकी स्थिति समान रहती है। हमें उस परम पुरुष से दोस्ती करनी चाहिए।

तिन की संगति देहि प्रभ मै जाचिक की अरदासि ॥ (पन्ना ४२)

गुरु जी प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभु! जो जीव मुक्त हों, ज्ञानी हों, गुरमुख हों, हरि-नाम का गुणगान करने में सदैव तत्पर हों, मुझे

(शेष पृष्ठ १२९ पर)

विदिआ वीचारी तां परउपकारी

*-प्रवीण बाला**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना संख्या ३५६ पर "आसा महला १ चउपदे" के अंतर्गत यह पंक्ति *"विदिआ वीचारी तां परउपकारी"* एक संकेत कर रही है कि यदि विद्या का विचार किया जाए या मनन किया जाए तो यह परोपकार करने वाली साबित होती है। अक्सर स्कूलों, कालिजों तथा अन्य शैक्षणिक संस्थाओं के प्रांगण में इस पंक्ति को लिखा पाया जाता है, परतुं यह पंक्ति किस विद्या की बात कर रही है, उस पर गहराई से विचार करके जाना जा सकता है। किसी भी चीज के अर्थ को अगर खोलकर समझा जाए तो उसका अर्थ दिखाई देने वाले अर्थ से भिन्न ही निकलता है अर्थात् प्रत्येक वस्तु का पहला शाब्दिक अर्थ होता है, जिसे अभियार्थ कहते हैं और फिर उसका आंतरिक अर्थ, जिसे भावार्थ या व्यंग्यार्थ कहा जाता है। यही वह वास्तविक अर्थ है जिसकी गुरबाणी बात करती है। यह बात माननी होगी कि गुरु साहिबान की बाणी को समझना उतना आसान नहीं जितना समझा जाता है। कारण कि संतों की बाणी अलंकृत भाषा में होती है, जिसका शाब्दिक अर्थ कुछ व्यंग्यार्थ तथा कुछ और होता है। कई बार सर्वसाधारण उसे चाह कर भी नहीं समझ पाता। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी में अनेकों शब्द ऐसे हैं जो प्रतीक भाषा में हैं, जैसे: *"राति अनेरी सूझसि नाही लजु टूकसि मूसा भाई रे ॥"* या *"उलटी गंगा जमुन मिलावउ ॥ बिनु जल संगम मन महि न्हावउ ॥"* ऐसी बाणी का साधारण अर्थ कुछ और प्रतीत होता है, परंतु वीचार करने पर या गहराई से मनन करने पर उसका अर्थ कुछ और ही खुलता है। ऐसे शब्दों को समझने के लिए उस विद्या की आवश्यकता है जिसकी यहां बात की जा रही है। बिना उस विद्या को वीचारे बाणी के भावार्थ तक पहुंचना मुश्किल ही नहीं बल्कि असंभव है।

आज श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी के कई टीके हो चुके हैं, परंतु आश्चर्य है कि किसी टीकाकार की टीका आपस में नहीं मिलती। यह भी नहीं कहा जा सकता कि इनमें से कोई एक ठीक है और बाकी सब गलत। ज्ञानी संत सिंघ मसकीन का विचार है कि इन सभी टीकाकारों ने अपनी-अपनी पहुंची हुई समझ और मनन से बाणी का अर्थ किया है, इसलिए अपनी-अपनी जगह सभी ठीक हैं। इसी संदर्भ में मुझे एक शायर की पंक्तियां याद आ रही हैं जो इस बात को सिद्ध कर देती हैं कि अपनी-अपनी समझ के अनुसार कोई भी गलत नहीं कहा जा सकता :

जिंनी समझ, ओना चानण, बाकी सभ हनेरा।
एथे चढ़दा, एथे ई डुबदा, सूरज तेरा मेरा।

अस्तु! पूरे श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'विदिआ' (विद्या) से सम्बंधित यही एक शब्द है जो कि कुंजी रूप में है। जैसे गुरु साहिब भी यही समझाना चाहते हैं कि यह विद्या एक बार पा लेने पर इसकी कुंजी ही हाथ में आ सकती है और फिर सभी गहरे शब्दों का ताला खोलकर उसकी वास्तविकता से रूबरू हुआ जा सकता

**रीसर्च स्कालर, हिंदी विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो : ९४१७०-७८३३३*

है। प्रश्न उठता है कि यह विद्या है कौन-सी? साधारण या शाब्दिक अर्थ में तो यह वही विद्या प्रतीत होती है जो आजकल के स्कूलों-कालिजों में विद्यार्थियों को दी जा रही है, जिसे पा लेने पर व्यक्ति ऐसा सक्षम हो जाता है कि वह दूसरों की भलाई कर सकता है, दूसरों की मदद कर सकता है। यह विद्या वो साधारण किताबी विद्या नहीं हो सकती, क्योंकि इस संसारी विद्या को श्री गुरु नानक देव जी जैसे महापुरुषों ने न तो पांधे से स्वीकारा और न मौलवी से, बल्कि उन्हें ही ऐसी विद्या दी कि वे नत्मस्तक हो गए उनके चरणों में। जी हां! विवेचित शब्द में उसी विद्या की बात गुरु नानक साहिब करते हैं जिसको पाकर विद्यावान पांधा और मौलवी भी धन्य-धन्य हो गए तथा यह विद्या है 'ब्रह्म-विद्या' या प्रचलित शब्दों में 'ब्रह्म-ज्ञान'। बस, इतना ही समझने की देर है और मिल गई कुंजी।

गुरु नानक साहिब ने इस विद्या का एकबारगी ही संकेत किया है श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना ३५६ पर *"आसा महला १ चउपदे"* के अंतर्गत *"विदिआ वीचारी तां परउपकारी"* शबद में। इसको समझते ही यह बोध होता है कि यह 'विद्या' शब्द ब्रह्म-ज्ञान की ही बात कर रहा है और इसको प्राप्त करने वाला ब्रह्मज्ञानी फिर दूसरों पर परोपकार करने वाला बन जाता है। उसी ब्रह्म के गुण उसमें उतरते हैं और वो ब्रह्मज्ञानी फिर परोपकारी हो जाता है। ऐसे ब्रह्मज्ञानी के लक्षण क्या हैं, यह सब सुखमनी साहिब के अंतर्गत बताया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना २७२ से २७४ तक आठवें श्लोक की असटपदी में विस्तार से ब्रह्मज्ञानी के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है :

मनि साचा मुखि साचा सोइ ॥
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥
नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ ॥
(पन्ना २७२)

अर्थात् जिसके मन में सत्य परमात्मा, मुख में भी वही सत्य-स्वरूप ईश्वर है और उस एक परमात्मा के अतिरिक्त जो अन्य किसी को नहीं देखता, ऐसे लक्षणों वाला जीव ही परोपकार करने वाला हो सकता है। जिसने स्वयं यह विद्या पाई है, वही दूसरों को बता कर उन्हें संसार-सागर से बाहर निकाल ब्रह्म में लीन करने का उपकार कर सकता है। इसलिए कहा गया है: *"ब्रहम गिआनी ब्रहम का बेता ॥"* और वह स्वयं ब्रह्म का स्वरूप हो जाता है: *"नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर ॥"* ऐसा ब्रह्म ही मुक्ति की युक्ति बताने वाला उपकारी दाता है:
ब्रहम गिआनी मुकति जुगति जीअ का दाता ॥
(पन्ना २७३)

संक्षेप में कहें तो ब्रह्मज्ञानी के बारे में इन असटपदियों का सार यही है कि ब्रह्मज्ञानी सत्य-स्वरूप परमात्मा को तत्व रूप से जानकर उसे हृदय में बसाए हुए है, जो स्वयं को तुच्छ मानने वाला और सभी का भला चाहने वाला है। उसका भोजन ही ब्रह्मज्ञान है और वह माया में कमलवत् होकर रहता है। ब्रह्मज्ञानी और परमेश्वर में कोई अंतर नहीं, इसलिए वह मुक्ति का दाता भी है। ऐसे ब्रह्मज्ञानी को देवी-देवता भी तरसते हैं।

अत: ऐसा ब्रह्मज्ञानी (विद्या विचारने वाला) ब्रह्म-विद्या का वेत्ता ही किसी जीव के लिए उपकारी हो सकता है। स्वयं यह विद्या जानने वाला दूसरे जीवों के उद्धार का परोपकार भी कर सकता है। गुरु नानक साहिब उसी ब्रह्म-विद्या के वीचारने की बात करते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना ३५६ पर गुरु नानक साहिब की बाणी के 'आसा महला १ चउपदे' में रचित इस रहस्यमयी शबद को इसी दृष्टि से

विचारने से पहले पूरा शबद प्रस्तुत है :

आसा महला १ चउपदे ॥

विदिआ वीचारी तां परउपकारी ॥
जां पंच रासी तां तीरथ वासी ॥
घुंघरू वाजै जे मनु लागै ॥
तउ जमु कहा करे मो सिउ आगै ॥१॥रहाउ॥
आस निरासी तउ संनिआसी ॥
जां जतु जोगी तां काइआ भोगी ॥२॥
दइआ दिगंबरु देह बीचारी ॥
आपि मरै अवरा नह मारी ॥३॥
एकु तू होरि वेस बहुतेरे ॥
नानकु जाणै चोज न तेरे ॥४॥ पन्ना ३५६)

भावार्थ: गुरु नानक साहिब फरमान करते हैं कि विद्या (ब्रह्म-विद्या) विचारने पर यह दूसरे के लिए उपकारी सिद्ध होती है। इस ब्रह्म-विद्या को पाकर यदि पांच विकारों को मात दे दें तो वह जीव तीर्थ पर स्नान करने के समान हो जाता है। इस विद्या को पाकर यदि मन प्रभु में लग जाए तो घुंघरू बजने लगते हैं। यहां घुंघरू से अभिप्राय उस अनहद नाद से है जिसका जिक्र श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अनेकों स्थान पर हुआ है :

--तह सदा अनंद अनहत आखारे ॥
भगत वसहि कीरतन आधारे ॥ (पन्ना २३७)
--अनहद बाजे धुनि बजदे गुर सबदि सुणीजै ॥ (पन्ना ९५४)
--सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ (पन्ना २९३)

यह अनहद नाद इस शरीर रूपी घट में दिन-रात बिना रुके बज रहा है। ऐसी अवस्था में जब जीव ब्रह्म से जुड़ गया, उसका मन प्रभु में लग गया तो उसका यमराज भी क्या कर लेगा? अर्थात् अकाल से जुड़ जाने पर काल को भी मात दी जा सकती है। आगे गुरु जी फरमाते हैं कि आशाओं से निराश (उदासीन) रहने वाला ही कोई सन्यासी हो सकता है और जत (ब्रह्मचर्य) के द्वारा ईश्वर से योग स्थापित करने वाला ही इस काया का सही उपभोग कर सकता है अर्थात् यह शरीर जिस उद्देश्य (ब्रह्म-प्राप्ति) के लिए मिला है, उसे उसमें लगा देता है। दयावान और देह के सदुपयोग के बारे में विचार करने वाला ही दिगंबर साधु है जो स्वयं मर कर (हउमै को मार कर) दूसरों की भी हउमै (अहंकार) मार देता है। अंत में गुरु नानक साहिब कहते हैं कि हे प्रभु! तू एक है, परंतु तेरे अन्य अनेक वेष हैं भाव साधु, सन्यासी, योगी और ब्रह्मज्ञानी के रूप में तू दूसरों पर कैसे-कैसे उपकार करता रहता है! तेरे इन कौतुकों को नहीं जाना जा सकता।

सच में ऐसे रहस्य संजोए हुए गुरबाणी के इन शबदों और उनके कौतुकों को हम सर्वसाधारण भी नहीं समझ सकते। उनके ऐसे शबदों और बाणी को हार्दिक नमन और शत-शत प्रणाम!

आपका पत्र मिला

विशेषांकों का प्रकाशन वाकई सराहनीय है!

आप जी द्वारा सिक्ख गुरु साहिबान पर केंद्रित विशेषांकों का प्रकाशन वाकई सराहनीय है तथा ये सभी अंक भविष्य की दृष्टि से भी संग्रहणीय बनते जा रहे हैं। समस्त गुरु साहिबान का मुख्य जोर सदाचरण रूपी मानव धर्म पर रहा। आजकल इसी मानवता-नैतिकता को जगाने एवं प्रेरित करने की सर्वाधिक आवश्यकता महसूस होती है।

-श्री प्रशांत अग्रवाल, बरेली (उ. प्र.)

आतमु चीनै सु ततु बीचारे

*-डॉ. नरेश**

यह शरीर वास्तव में एक पिंजरा है, जिसमें आत्मा कैद पड़ी है। पिंजरे में पड़े पक्षी को इस बात से क्या फर्क पड़ता है कि पिंजरा लोहे का बना है या सोने-चांदी का। सोने के पिंजरे में कैद पक्षी के दुख का भाव इस बात से तो कम नहीं हो जाता कि वह सोने के पिंजरे में कैद है। सोने का पिंजरा भी उसकी उन्मुक्त वातावरण में स्वतंत्र विचरण की आकांक्षा पूर्ण नहीं कर सकता। कैसा ही सुंदर पिंजरा हो, पक्षी के लिए खुले आकाश का पर्याय तो नहीं है। पिंजरे के मालिक ने तो कभी पक्षी की पीड़ा का अनुमान ही नहीं किया है। यदि उसे तनिक-सा भी अहसास होता कि खुले आकाश में उन्मुक्त उड़ान भरने वाला पक्षी भीतर ही भीतर अपने भाग्य पर रो रहा है तो उसने पक्षी को पिंजरे में बंद ही न किया होता। वह तो पक्षी की पीड़ा से अपना मन बहला रहा है। पक्षी का फड़फड़ाना, पिंजरे की सलाखों से सिर टकराना उसका आमोद कर रहा है।

हमारे शरीर रूपी पिंजरे में बंद पड़ी हमारी आत्मा भी उसी पक्षी की तरह बिलबिला रही है लेकिन हम उसकी पीड़ा को अनुभव करने के स्थान पर पिंजरे को धोने-चमकाने में लगे हुए हैं। क्या हम समझते हैं कि हमारे शरीर पर सजे बहुमूल्य वस्त्र, शरीर को महकाते हुए इत्र-फुलेल आत्मा की उन्मुक्त उड़ान की इच्छा को भुलावा दे सकेंगे कभी?

इस शरीर के लिए हम योजनाएं बनाते हैं सालों-साल बाद आने वाले दिनों के हिसाब-किताब से। मकान बनवाते हैं कि रिटायर होकर उसमें रहेंगे, विकास-पत्रों में धन लगाते हैं कि इतने वर्षों के बाद उसका दुगना प्राप्त करेंगे। क्या हमें विश्वास है कि हम उस समय जीवित भी होंगे जिस समय हमारा मकान बनकर तैयार हो जाएगा? तब की छोड़िए, क्या हमें विश्वास है कि हम अगले पल में जीवित होंगे? सामान सौ बरस का, पल की खबर नहीं है।

और कुछ नहीं कर रहे हैं हम उस आत्मा के लिए, जिसके निकलते ही हमारे लिए घर-सम्पत्ति का, धन-दौलत का, सगे-सम्बंधियों का, सुख-सुविधा का महत्व समाप्त हो जाना है। उसके लिए कुछ करना तो दूर, हमने कभी यह जानने का प्रयत्न भी नहीं किया कि शरीर के भीतर वह तत्व, जिसे आत्मा कहते हैं, कैसा है, कहां रहता है। अनेक बार सुन चुके हैं हम कि मानव शरीर में जो आत्मा नामक तत्व रहता है, वह परम तत्व परमात्मा का दिव्य अंश है। यह जान लेने पर भी कि हमारे भीतर कहीं ब्रह्मत्व मौजूद है, हमने कभी अपने ही दिव्य अंश को खोजने की इच्छा नहीं की है। यह विडंबना नहीं तो और क्या है? जरा सोचिए, इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी कि हम अवश्यंभावी नश्वर शरीर के लिए तो चौबीस के चौबीस घंटे दे रहे हैं और उस अनश्वर के लिए, जिसके रहने से ही यह शरीर शरीर है अन्यथा शव है, एक क्षण भी नहीं देते हैं हम।

जब इस शरीर का भरोसा ही नहीं है कि कब समाप्त हो जाए तो बुद्धिमता किसमें है, इसके लिए सुख-सुविधा जुटाने में या अनश्वर आत्मा को जन्म-मरण के बंधन से मुक्ति दिलाने में, इसका निर्णय स्वयं हमें करना है तथा गुरबाणी आशयानुसार अवलोकन करना है : *"आतमु चीनै सु ततु बीचारे ॥"*

**१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९*

गुरबाणी चिंतनधारा : ५०

अनंदु साहिब

*-डॉ मनजीत कौर**

हरि रासि मेरी मनु वणजारा ॥
हरि रासि मेरी मनु वणजारा सतिगुर ते रासि जाणी ॥
हरि हरि नित जपिहु जीअहु लाहा खटिहु दिहाड़ी ॥
एहु धनु तिना मिलिआ जिन हरि आपे भाणा ॥
कहै नानकु हरि रासि मेरी मनु होआ वणजारा ॥३१॥

प्रस्तुत पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी ने मन को व्यापारी तथा परमेश्वर के नाम को व्यापार करने वाली वास्तविक पूंजी बताया है और साथ ही स्पष्ट किया है कि यह मन हरि-नाम का व्यापारी गुरु की रहमत से ही बनता है अन्यथा सारा जीवन झूठे पदार्थों के वणज में ही लगा रहता है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि हरि का नाम मेरी (दरगाह तक साथ निभाने वाली) पूंजी है। मेरा मन इस पूंजी का व्यापारी बन गया है। गुरु से यह समझ पाकर कि आत्मिक आनंद की कमाई हेतु परमेश्वर का नाम ही मेरी असली पूंजी है, मेरा मन इस नाम रूपी व्यापार का व्यापारी (सौदागर) बन गया है।

गुरु जी मनुष्य-मात्र को संबोधन करते हुए कथन करते हैं कि हे भाई! सतिगुरु के आदेशानुसार तुम भी सदैव प्रेम सहित हरि-नाम की आराधना करो अर्थात् प्रभु का सिमरन करते रहो और इस तरह आत्मिक आनंद का हर रोज लाभ कमाओ अर्थात् फायदेमंद सौदा करो। हरि-नाम-सिमरन का यह आनंद देने वाला धन उन्हें ही प्राप्त हुआ है जिन्हें देना प्रभु को स्वयं ही अच्छा लगा है अर्थात् जिसको मालिक खुद चाहता है उसे ही अपने नाम-सिमरन की सदा आनंद देने वाली पूंजी बख्शता है।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि ईश्वर का नाम मेरे जीवन की पूंजी है और गुरु की रहमत से मेरा मन प्रभु-नाम का सौदागर अथवा व्यापारी बन गया है।

इस पउड़ी में गुरदेव कलयुगी जीवों को हरि-नाम-सिमरन की सच्ची कमाई करने की प्रेरणा देते हैं क्योंकि दुनियावी पदार्थों का व्यापार वास्तविक व्यापार नहीं है। ईश्वर द्वारा प्राप्त बेशकीमती श्वास रूपी पूंजी से हरि-नाम का व्यापार करना चाहिए क्योंकि केवल यही पूंजी जीव के साथ जाती है बाकी मायक पदार्थों से कमाई माया में से जीव एक कौडी अथवा पैसा भी साथ नहीं ले जा सकता।

व्यापार किसका करना है और कैसे करना है, दोनों ही प्रश्नों का जवाब सहजता से इस पउड़ी में गुरु साहिब ने समझाया है। व्यापार करना है--हरि-नाम का तथा कैसे करना है--सहजता, श्रद्धा एवं हृदय से एकाग्रता के साथ। हम सब व्यापारी हैं और इस जगत में परमेश्वर द्वारा बख्शी श्वासों की पूंजी से किस तरह का व्यापार करना है इस मन्तव्य को गुरु नानक पातशाह ने भी बहुत सुंदर अंदाज से समझाया है, यथा :

वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु समालि ॥
तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि ॥

२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३

अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि ॥१॥
भाई रे रामु कहहु चितु लाइ ॥
हरि जसु वखरु लै चलहु सहु वेखै पतीआइ ॥ . . .
नानक मनु समझाईऐ गुर कै सबदि सालाह ॥
राम नाम रंगि रतिआ भारु न भरमु तिनाह ॥
हरि जपि लाहा अगला निरभउ हरि मन माह ॥
(पन्ना २२)

वही सौदा खरीदना चाहिए जो मालिक की दरगाह में काम आए क्योंकि उस पिता ने अर्थात् प्रभु ने हमारे श्वासों की पूंजी का हिसाब मांगना है। पावन बाणी के अनुसार गुरु-शबद द्वारा मन को समझा कर, परमेश्वर का नाम जप कर आत्मिक लाभ का सौदा करके जाने वाले सौदागरों को उसकी दरगाह में बड़ा यश मिलता है। आत्मिक आनंद की प्राप्ति तभी मुमकिन है जब गुरु-कृपा से हरि-नाम का व्यापार हो और वह भी पूर्ण एकाग्रता एवं श्रद्धा-भावना से।

ए रसना तू अन रसि राचि रही तेरी पिआस न जाइ ॥
पिआस न जाइ होरतु कितै जिचरु हरि रसु पलै न पाइ ॥
हरि रसु पाइ पलै पीऐ हरि रसु बहुड़ि न त्रिसना लागै आइ ॥
एहु हरि रसु करमी पाईऐ सतिगुरु मिलै जिसु आइ ॥
कहै नानकु होरि अन रस सभि वीसरे जा हरि वसै मनि आइ ॥३२॥

उपरोक्त पउड़ी में गुरु पातशाह रसना (जीभ) को सम्बोधित करते हुए पावन फरमान करते हैं कि हे मेरी जिह्वा (जीभ)! तू क्यों अन्य रसों में मस्त हो रही है? इस तरह तेरा स्वादों का चस्का समाप्त नहीं हो सकता अर्थात् प्रभु-नाम के बिना अन्य विषय-भोग के स्वादों में लिप्त हुई जीभ की तृष्णा कभी दूर नहीं हो सकती। जब तक अन्य किसी भी साधन अथवा स्थान से यह तुच्छ किस्म का स्वाद दूर नहीं हो सकता अर्थात् मायिक पदार्थों के रस भोगने से प्यास नहीं मिट सकती।

जिस किसी मनुष्य को प्रभु-कृपा से हरि-नाम-रस प्राप्त हो जाए तथा वो निरंतर उस रस को पीता रहे, उसका सेवन करता रहे, उसे पुन: अन्य पदार्थों के भोगने की इच्छा नहीं रह जाती।

हरि-नाम-सिमरन का यह पावन रस मेहरबान प्रभु की रहमत से उसे प्राप्त होता है जिसे पूर्ण गुरु स्वयं आकर मिलता है। श्री गुरु अमरदास जी विनती करते हैं कि जब हरि-सिमरन का स्वाद अथवा रस मन में बस जाए तब उसे अन्य समस्त दुनियावी रस (चस्के) भूल जाते हैं।

उपरोक्त पउड़ी में गुरु पातशाह नाम-रस की श्रेष्ठता को स्पष्ट करते हुए अन्य विषय-रसों को त्यागने को प्रेरित करते हैं। जीभ को सम्बोधित करते हुए गुरु जी जीव को समझाते हैं कि माया के पदार्थों के भोग से मन की प्यास नहीं बुझ सकती अपितु और बढ़ती जाती है। अत: समस्त तृष्णाओं को मिटाने का एक मात्र साधन है प्रभु-सिमरन, यथा गुरबाणी-प्रमाण है:

त्रिसना बुझै हरि कै नामि ॥
महा संतोखु होवै गुर बचनी प्रभ सिउ लागै पूरन धिआनु ॥ (पन्ना ६८२-८३)

ए सरीरा मेरिआ हरि तुम महि जोति रखी ता तू जग महि आइआ ॥
हरि जोति रखी तुधु विचि ता तू जग महि आइआ ॥
हरि आपे माता आपे पिता जिनि जीउ उपाइ जगतु दिखाइआ ॥
गुर परसादी बुझिआ ता चलतु होआ चलतु नदरी आइआ ॥
कहै नानकु स्रिसटि का मूलु रचिआ जोति राखी ता तू जग महि आइआ ॥३३॥

इस पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी शरीर

को सम्बोधित करते हुए पावन कथन करते हैं कि हे पांच तत्वों से निर्मित मेरे शरीर! इस असलियत को समझ कि अकाल पुरख ने तेरे अंदर जीव-आत्मा अथवा चेतन-सत्ता को टिकाया है अर्थात् रखा है तभी तू इस जगत में आया है अर्थात् तेरा जन्म इस दुनिया में हुआ है। हे जीव! यह निश्चय कर ले कि प्रभु-परमेश्वर ने तेरे अंदर ज्योति अर्थात् जीवन-सत्ता रखी तभी तू जगत में आया है।

श्री गुरु अमरदास जी फरमान करते हैं कि हे मेरे शरीर! अकाल पुरख ही इस जगत-रचना का मूल स्रोत है। उसी ने ही जीव-आत्मा को शरीर में स्थापित किया तभी जीव का संसार में जन्म हुआ।

वस्तुत: उस सर्व-समर्थ प्रभु ने पांच तत्वों का पुतला बनाया, उसमें स्वयं प्रभु ने जीवात्मा को टिकाया और फिर जीव को इस जगत में जन्म दिया, माता-पिता की तरह उसका पालन-पोषण किया। गुरु-कृपा से जब यह वास्तविकता समझ में आई तो सर्वत्र में वह परमेश्वर दृष्टिगत होने लगा, यथा:

वाहु वाहु का बडा तमासा ॥
आपे हसै आपि ही चितवै आपे चंदु सूरु परगासा ॥
आपे जलु आपे थलु थम्हनु आपे कीआ घटि घटि बासा ॥ *(पन्ना १४०३)*

बाजीगर भिन्न-भिन्न स्वांग धारण करता है। वह विभिन्न रूपों में अपनी विविध गतिविधियों द्वारा विविध रूप धारण करके जगत को तमाशा दिखा कर मंत्र-मुग्ध कर लेता है, लेकिन जब वह अपने खेल को समेटता है तो सब कुछ खत्म हो जाता है। केवल एक कर्त्ता पुरख सदैव कायम रहने वाला है, शेष सब कुछ नश्वर है, यथा बाणी आशयानुसार :

बाजीगरि जैसे बाजी पाई ॥
नाना रूप भेख दिखलाई ॥
सांग उतारि थंम्हिओ पासारा ॥
तब एको एकंकारा ॥ *(पन्ना ७३६)*

गुरबाणी हमारा मार्गदर्शन करती है कि हमें उस सर्व-समर्थ सृजनहार प्रभु-परमेश्वर के चरणों से प्रीति जोड़नी है न कि नश्वर पदार्थों से। गुरु पातशाह ३३वीं पउड़ी में कलयुगी जीवों को निर्देशित करते हुए पावन फरमान करते हैं कि हे जीव! तुझ में प्रभु ने अपनी ज्योति रखी तब तू जगत में आया है। उस प्रभु से सच्चा प्यार ही तुझे आत्मिक आनंद प्राप्त करेगा।

मनि चाउ भइआ प्रभ आगमु सुणिआ ॥
हरि मंगलु गाउ सखी ग्रिहु मंदरु बणिआ ॥
हरि गाउ मंगलु नित सखीए सोगु दूखु न विआपए ॥
गुर चरन लागे दिन सभागे आपणा पिरु जापए ॥
अनहत बाणी गुर सबदि जाणी हरि नामु हरि रसु भोगो ॥
कहै नानकु प्रभु आपि मिलिआ करण कारण जोगो ॥३४॥

प्रस्तुत पउड़ी में गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि किसी विशेष मेहमान के आने पर उसके लिए जो विशेष तैयारियां की जाती हैं, उसके आदर-सत्कार में सब पलके बिछाए बैठे होते हैं तथा घर में एक उत्सव-सा माहौल होता है। इसी तथ्य के अनुसार उस पारब्रह्म परमेश्वर के हृदय-घर में प्रवेश करने पर खुशी के नगाड़े बजते हैं, प्रभु प्रियतम के प्रकट होने की सूचना मिलती है।

गुरु पातशाह का पावन फरमान है कि हे भाई! मैंने प्रभु के हृदय-घर में आगमन की गुरु से खबर सुनी है और मेरा मन खुशी से भर गया है अर्थात् अपनी हृदय रूपी सेज पर प्रभु-पति के आने की आहट मैंने सुन ली है, अत: मेरे मन में आनंद के बाजे बज उठे हैं। हे मेरी जीवात्मा! मेरा यह हृदय-घर प्रियतम प्यारे प्रभु-परमेश्वर का निवास-स्थल बन गया है। अब तू

प्रभु-परमेश्वर की सिफत-सलाह के गीत गा अर्थात् आठ पहर उसी का गुणगान कर।

हे मेरी जीवात्मा रूपी सहेली! तू सदैव प्रभु की उपमा के गीत गा, हर पल उस परमेश्वर का गुणगान कर। ऐसा करते हुए कोई चिंता, कोई दुख-तकलीफ अथवा वियोग की पीड़ा तुझे तकलीफ नहीं पहुंचा सकेगी अर्थात् तुम पर हावी नहीं हो सकेगी।

वे दिन भाग्यशाली होते हैं जब मनुष्य का मस्तक गुरु-चरणों पर समर्पित हो जिसके फलस्वरूप प्रियतम प्रभु गुरु-कृपा से हृदय घर में बसता दिखाई देने लगे। गुरु-शबद की बरकतों से निरंतर बज रही प्रभु-सिमरन की धुन अथवा अनहद बाजे सुनाई देने लगते हैं अर्थात् अंदर बज रही अनहद धुनी से पहचान हो जाती है तथा हरि-नाम रूपी हरि-रस जीव हेतु आत्मिक भोजन बन जाता है।

श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं कि हे मेरी जीवात्मा! गुरु की रहमत से सर्वशक्तिवान सर्व-समर्थ प्रभु मुझे स्वयं आकर मिला है अर्थात् मेरे हृदय में बस गया है, अत: तू खुशी (मंगल) के गीत गायन कर।

उपरोक्त पउड़ी में गुरु साहिब कलयुगी जीव की मनोस्थिति का वर्णन करते हैं कि जीव हेतु वे पल भाग्यशाली होते हैं जिनमें वह गुरु-चरणों में अपनी बुद्धि को समर्पित कर देता है अर्थात् पूर्णतया गुरु-दर्शाए मार्ग पर चल कर अंत:करण में बसते प्रभु को पहचान लेता है, तब उसका हृदय ही हरि-मंदिर प्रतीत होता है। गुरु-ज्ञान से हृदय में ही ज्ञान रूप अमूल्य वस्तु प्रकट हो जाती है, यथा गुरबाणी प्रमाण है :

हरि मंदरु एहु सरीरु है गिआनि रतनि परगटु होइ ॥ *(पन्ना १३४६)*

ऐसी अवस्था में जीव चिंता, भय से रहित हो जाता है और केवल उस अकाल पुरख को ही हृदय-घर में अनुभव करता हुआ हर समय आनंद के गीत गाता है। अत: प्रभु-सिमरन में ही सदीवी खुशियां और आनंद की अनुभूति मुमकिन है।

ए सरीरा मेरिआ इसु जग महि आइ कै किआ तुधु करम कमाइआ ॥
कि करम कमाइआ तुधु सरीरा जा तू जग महि आइआ ॥
जिनि हरि तेरा रचनु रचिआ सो हरि मनि न वसाइआ ॥
गुर परसादी हरि मंनि वसिआ पूरबि लिखिआ पाइआ ॥
कहै नानकु एहु सरीरु परवाणु होआ जिनि सतिगुर सिउ चितु लाइआ ॥३५॥

इस पउड़ी में गुरु साहिब जीव के शरीर को सम्बोधित करते हुए प्रश्नात्मक शैली में फरमान करते हैं कि हे मेरे शरीर! इस संसार में आकर तूने कौन-सा कर्म कमाया है? अर्थात् जीवन-मनोरथ को सार्थक करने वाला कौन-सा कार्य किया है? हे जीव! जब से तू इस जगत में आया है तूने कौन-सा श्रेष्ठ कर्म किया है?

हे मेरे शरीर! जिस प्रभु ने तेरी सृजना की अर्थात् जिस ईश्वर ने तेरी रचना की उसे तूने अभी तक हृदय-घर में बसाया ही नहीं अर्थात् ऐसे प्रभु का तूने सिमरन ही नहीं किया।

गुरु साहिब कथन करते हैं कि इस असहाय जीव के वश में कुछ भी तो नहीं है। जिस जीव के पूर्व के किए नेक कर्मों के संस्कार प्रकट होते हैं, गुरु-कृपा से उसके हृदय में परमेश्वर आ बसता है अर्थात् वही श्वास-ग्रास उस प्रभु का सिमरन करते हैं।

श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं कि यह शरीर (मानव शरीर) उसी का प्रवान हुआ समझो जिसने गुरु-उपदेश में अपने चित्त को जोड़ा है अर्थात् जिसने गुरु-वचनों की

कमाई कर प्रभु-सिमरन किया है, उसी का जीवन कामयाब है, सफल है।

इस पउड़ी में गुरु पातशाह कहते हैं कि पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण अच्छे या बुरे कर्मों में जीव की प्रवृत्ति है और जीव के कुछ भी वश में नहीं है। साथ ही गुरु साहिब ने यह भी स्पष्ट किया है कि अगर जीव गुरु-चरणों में अपनी बुद्धि को समर्पित करके गुरु-उपदेश की कमाई करे तो उसे जीवन-मनोरथ की समझ आ जाती है, नहीं तो उसका अमूल्य जीवन व्यर्थ चला जाता है, जैसा कि गुरु नानक पातशाह की बाणी में पावन फरमान है :

रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ ॥
हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ ॥
(पन्ना १५६)

जीव इस कर्मभूमि पर मुनाफे (लाभ) का सौदा करने आया है। व्यर्थ के कार्यों में अमूल्य श्वासों की पूंजी बर्बाद करके पश्चाताप ही इसके पास शेष रह जाता है, यथा गुरबाणी प्रमाण है:

प्राणी तूं आइआ लाहा लैणि ॥
लगा कितु कुफकड़े सभ मुकदी चली रैणि ॥
(पन्ना ४३)

यही ८४ लाख योनियों में सर्वश्रेष्ठ योनि है जिसमें गुरु-कृपा से प्रभु-सिमरन में चित्त जोड़कर सदीवी आनंद की प्राप्ति मुमकिन है।

अंतरि पिआस हरि नाम की . . .

(पृष्ठ १२० का शेष)

उनकी संगति प्रदान करो। मैं याचक हूं, आपके पास अरदास लेकर आई हूं। आप सबकी मनोकामनाओं को पूरा करते हैं, अत: मैं उनका संग पाना चाहती हूं जिनको आपके दर्शन हो चुके हैं, जो आपके पास पहुंचने में मेरी सहायता कर सकते हैं।

मै हरि बिनु अवरु न कोइ ॥ (पन्ना ८१)

परमात्मा उन जीवों का ही अंत में सहायी बनता है जिन्होंने नाम-रूपी धन का संचय किया है। हरि के बिना कोई अन्य है ही नहीं जो जीव का कल्याण कर सके।

मनि हरि हरि जपनु करे ॥
हरि गुर सरणाई भजि पउ जिंदू सभ किलविख दुख परहरे ॥ (पन्ना ८२)

जिह्वा से नाम-सिमरन करने में तथा अंतर्मन से नाम-स्मरण करने में बहुत अंतर है। माया उस दीपक के समान है जिस पर पतंगा रूपी मनुष्य भ्रमित होता रहता है, चक्कर काटता रहता है तथा अंत में अपना जीवन समाप्त कर लेता है। कोई विरला ही मनुष्य होता है जो प्रभु को प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है। अत: जिह्वा या रसना का उल्लेख न करके 'मन' का स्मरण किया है। जिन गुरमुखों का हृदय-रूपी कमल गुरु के पवित्र जल रूपी ज्ञान से विकसित हो जाता है उनके हृदय में स्वत: ही परमात्मा का निवास हो जाता है। हे मन! तुम शीघ्र ही गुरु और परमात्मा की शरण ग्रहण करो क्योंकि वे ही तुम्हारे दुखों और पापों को दूर करने में समर्थ हो सकते हैं।

हरि धिआवहु सासि गिरासि ॥ (पन्ना ८२)

अत: यदि उस परमात्मा को प्राप्त करने की अभिलाषा हो तो श्वास-श्वास उसका जप करना चाहिए। उसके मिलन की उत्कंठा, मिलन की प्यास जब तक तीव्र नहीं होगी तब तक उसकी प्राप्ति असंभव है। विरह को शांत करने का उपाय एक ही है जिसे शुभ कर्मों द्वारा, भाग्य द्वारा, सतिगुरु की शरण में रहकर ही प्राप्त किया जा सकता है। यही श्रेष्ठ मंत्र है--"हरि का श्वास-श्वास में ध्यान।"

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-३८

विद्वान एवं कवि भाई रावल

*-डा. राजेंद्र सिंघ**

दशमेश पिता के बावन दरबारी कवियों में एक नाम कवि भाई रावल का भी है। अनंदपुर साहिब छोड़कर जाते समय जब सिरसा नदी पर गुरु साहिब की मुगल लश्कर से झड़प हुई तब बहुत सारा साहित्य सरसा नदी में बह गया। पीछे अनंदपुर साहिब में भी बहुत सारा साहित्य छूट गया था। युद्ध के बाद जब पहाड़ी राजाओं ने अनंदपुर साहिब को नष्ट किया तब बाकी का साहित्य भी नष्ट हो गया। संभवत: बहुत सारे दरबारी कवियों का काव्य इसी तरह बर्बाद हो गया। कवि रावल के विषय में भी यही लगता है।

कवि भाई रावल और उनके काव्य के विषय में कोई जानकारी नहीं मिलती, सिर्फ एक प्रसंग उपलब्ध है जो "प्राचीन सौ साखी" में आया है।

दशमेश पिता के दरबार में अक्सर विभिन्न आध्यात्मिक एवं लौकिक विषयों पर चर्चा होती रहती थी। इस प्रकार की चर्चाओं में सभी दरबारी, विद्वान और कवि उत्साहपूर्वक भाग लेते थे। एक बार गुरु जी के दरबार में मृत्यु पर चर्चा आरंभ हुई, जैसे कि :

एक बेर सतिगुरू जी बैठे अपने भाए।
कथा भई तहिं पांडवन पंडित भारत आए।

'महाभारत' कथा की चर्चा के बाद 'मृत्यु' पर विमर्श शुरू हुआ :

ता पीछै चरचा भई, मरा ना आवै कोए।
किआ जाने किआ होए तहां है वा नाही होए।

कवि भाई नंद लाल जी, कवि भाई सेनापति, कवि भाई धिआन सिंघ, कवि भाई माला सिंघ आदि ने अपने-अपने ढंग से मृत्यु संबंधी अपने विचार प्रकट किये। जब कवि भाई रावल की बारी आई तो वे बोले :

रावल बोलै जीव को, ईशर अंश निहार।
नहीं दंड अपनी सुरति, बिचरै लोभ पसारु।

कवि भाई रावल ने अपने दोहे के माध्यम से स्पष्ट किया कि जीव ईश्वर का अंश होता है, परंतु दुनिया में आकर जीव अपनी पवित्रता को भूल जाता है। उसे सुरति नहीं रहती और वह लोभ के वशीभूत होकर उसके प्रसार में इधर-उधर भटकता रहता है।

कवि भाई रावल की इस सारगर्भित उक्ति की विद्या-दरबार में सभी विद्वानों एवं कवियों ने सराहना की। कवि का एक मात्र उपलब्ध दोहा उनके चिंतनशील प्राणी होने का प्रमाण है।

इस एक प्रसंग से कवि भाई रावल की विद्वता, कवित्व एवं व्यक्तित्व की अच्छी झलक मिल जाती है।

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१। मो: ०९४१७२-७६२७१*

ख़बरनामा

दसतार व कृपाण उतरवाने के विरोध में जत्थेदार अवतार सिंघ ने प्रधानमंत्री को लिखा पत्र

श्री अमृतसर। इटली के अलग-अलग हवाई अड्डों पर सिक्खों को दसतार उतारने के लिए मजबूर करने, कनाडा के क्यूबक राज्य की विधान सभा में कृपाण ले जाने पर पाबंदी लगाने तथा फ्रांस में सिक्ख महिलाओं को दसतार सजाने पर रोक लगाने के कारण सिक्ख भाईचारे को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पेश आ रही मुश्किलों के समाधान सम्बंधी बातचीत करने के लिए जत्थेदार अवतार सिंघ ने भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंघ को एक पत्र लिखकर मुलाकात के लिए समय मांगा है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने पत्र में लिखा है कि सिक्ख भाईचारे को उपरोक्त मुश्किलें विदेशी सरकारों व उनके प्रशासनिक अधिकारियों की सिक्खों की सामाजिक तथा धार्मिक पहचान के प्रति अज्ञानता के कारण आ रही है। उन्होंने कहा कि सिक्खों की पहचान को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दिलाने के लिए भारत सरकार असफल रही है। उन्होंने बताया कि दसतार व कृपाण सिक्खों के धार्मिक व सामाजिक पहचान के चिंन्ह हैं। उन्हें शरीर से कभी अलग नहीं किया जा सकता। आए दिन घटित हो रही ऐसी घटनाओं के कारण सिक्ख पंथ में भारी आक्रोश पाया जा रहा है।

हिंदी में गुरमति साहित्य समय की आवश्यकता -ज्ञानी जसविंदर सिंघ

लखनऊ। सतसंग भवन, लखनऊ द्वारा २६ जनवरी, २०११ को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्रकाशोत्सव पर एक सर्वधर्म सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें भारी तादाद में सिक्ख संगत ने भाग लिया। सम्मेलन के मुख्य अतिथि श्री हरिमंदर साहिब के मुख्य ग्रंथी ज्ञानी जसविंदर सिंघ थे, जिन्होंने सिक्ख धर्म की सर्वकल्याण की भावना पर विस्तार से प्रकाश डाला, जिसे उपस्थित संगत ने पूर्ण मनोयोग से सुना। इस अवसर पर सिक्ख लेखक एवं विचारक डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ को विशेष रूप से सम्मानित किया गया। ज्ञानी जसविंदर सिंघ ने डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ को "सिक्ख धर्म-दर्शन के मूल तत्व" नामक उनकी पुस्तक के लिये सिरोपा देकर सम्मानित किया। डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ 'गुरमति ज्ञान' के परिचित लेखक हैं और निरंतर विभिन्न विषयों पर उनके लेख प्रकाशित हो रहे हैं। इस अवसर पर ज्ञानी जसविंदर सिंघ ने कहा कि सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार के लिये हिंदी भाषा में पुस्तकों की आवश्यकता समय की मांग है।

नानकशाही कैलंडर संवत् ५४३ जारी

श्री अमृतसर। नानकशाही कैलंडर संवत् ५४३ (वर्ष २०११-१२) श्री अकाल तख्त साहिब के सचिवालय से श्री अकाल तख्त साहिब के जत्थेदार ज्ञानी गुरबचन सिंघ तथा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा जारी किया गया। नानकशाही

कैलंडर जारी करते समय ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने समूह सिक्ख पंथ को अपने दिन, त्यौहार तथा गुरुपर्व नानकशाही कैलंडर के अनुसार मनाने का आदेश दिया है।

"बाबा बंदा सिंघ बहादर" तथा "ढाढी सोहन सिंघ सीतल" पुस्तकें रिलीज

श्री अमृतसर। 'गुरमति प्रकाश' तथा 'गुरमति ज्ञान' के संपादक स. सिमरजीत सिंघ द्वारा संपादित तथा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा प्रकाशित दो पुस्तकें- "बाबा बंदा सिंघ बहादर" तथा "ढाढी सोहन सिंघ सीतल" शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा रिलीज की गईं। इन पुस्तकों में विश्व विख्यात लेखकों के आलेख प्रकाशित किए गए हैं तथा उन्हें स. सिमरजीत सिंघ ने बड़े सुंदर ढंग से संपादित कर उनका पुस्तक रूप में संकलन किया है।

सिक्ख धर्म अध्ययन पत्राचार कोर्स वर्ष २०१०, भाग दूसरा का परिणाम घोषित

श्री अमृतसर। शिरोमणि गु: प्र: कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा सिक्ख धर्म की प्रारंभिक जानकारी घर-घर पहुंचाने सम्बंधी चलाए जा रहे द्वि-वर्षीय सिक्ख धर्म अध्ययन पत्राचार कोर्स के जिन विद्यार्थियों ने दूसरे वर्ष के लिए दिसंबर २०१० में परीक्षा दी थी, उसका परिणाम पत्राचार कोर्स कार्यालय में धर्म प्रचार कमेटी के अपर सचिव स. हरजीत सिंघ, शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष के पी. ए. स. मनजीत सिंघ तथा पत्राचार कोर्स के निदेशक डॉ. जसबीर सिंघ साबर द्वारा घोषित किया गया। घोषित परिणाम के आधार पर करमजीत सिंघ, गंगानगर, रोल नंबर ११०५६ ने ४०० में से ३४३ अंक प्राप्त कर प्रथम स्थान प्राप्त किया है। सज्जन सिंघ, राजपुरा (पटियाला), रोल नंबर ७२१६ ने ३४१ अंक लेकर दूसरा स्थान प्राप्त किया और रामप्रीत सिंघ, पटियाला, रोल नंबर ७२१४ ने ३३९ अंक लेकर तृतीय स्थान प्राप्त किया।

स. हरजीत सिंघ ने बताया कि सभी विद्यार्थी अपना परिणाम शिरोमणि कमेटी की वेबसाईट www.sgpc.net पर देख सकते हैं। डॉ. साबर ने बताया कि शिरोमणि गु: प्र: कमेटी द्वारा कोर्स में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को गत वर्ष की भांति क्रमश: ७१००, ५१००, ३१०० रुपए इनाम दिया जाएगा। इसके अलावा ८० प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त कर मैरिट में आने वाले ५१ विद्यार्थियों को ११००-११०० रुपए विशेष सम्मान देकर सम्मानित किया जाएगा। उन्होंने बताया कि यह सम्मान एक विशेष कार्यक्रम के रूप में आयोजित किया जाएगा। डॉ. साबर ने बताया कि वर्ष २०११ के लिए दाखिला प्रक्रिया चल रही है। इच्छित उम्मीदवार १०० रुपए दाखिला फीस व प्रार्थना-पत्र 'निदेशालय, पत्राचार कोर्स, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर' के पते पर भेजकर प्रासपेक्टस मंगवाएं। सभी छात्रों/छात्राओं को पाठ्य सामग्री नि:शुल्क डाक द्वारा घर भेजी जाएगी।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०३-२०११